शुभ लाभ

व्यापार

उसकी कठिनाइयाँ और उपाय
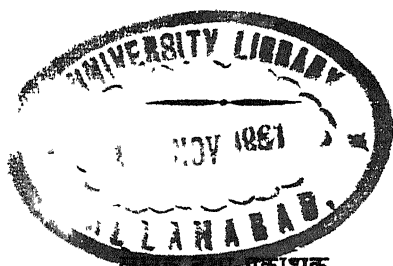
लेखक तथा प्रकाशक

राम प्रसाद टण्डन

रिटायर्ड एकाउन्टस आफ़िसर, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण] १९५५ ई० [मूल्य ३)

पुस्तक मिलने का पता—

(१) श्री नारायण ट्रेडर्स,

पुस्तक बिक्रेता, १६ हेवेट रोड, इलाहाबाद ।

(२) श्री मदन स्टोर्स

४७ जानसनगंज, इलाहाबाद ।

मुद्रक—विश्वप्रकाश, कला प्रेस, प्रयाग ।

समर्पण

मैं यह पुस्तक अपने प्रिय पुत्रों तथा अन्य सम्बन्धियों
को, जो व्यापार में लगे हुये हैं, अपनी
हार्दिक शुभकामनाओं सहित
समर्पित करता हूँ।

राम प्रसाद टण्डन

भूमिका

यह कहना मिथ्या न होगा कि हमारे अधिकांश भाई जो व्यापार में लगे हुये हैं उन्हें व्यापार करना ही नहीं आता। वे किसी प्रकार माल बेचकर अधिक से अधिक मुनाफ़ा कमाने और इस प्रकार जल्दी से जल्दी धनी बनने की चेष्टा करने को ही व्यापार का मूल तत्व समझते हैं। वे यह नहीं सोचते कि इस प्रकार धन के लोभ में या किसी प्रकार अपने माल को बेच डालने की धुन में व्यापार-व्यवसाय को और उसके द्वारा देश की प्रतिष्ठा को वे हानि पहुँचा रहे हैं या लाभ। इस धुन में वे कभी कभी ऐसे कार्य भी कर डालते हैं जिनके द्वारा उन्हें बाद में बहुत कष्ट अथवा हानि उठानी पड़ती है। ऐसे व्यापारियों को व्यापारिक साख (goodwill) का मूल्य ही नहीं मालूम, और न वे इसकी कदर ही करते हैं। केवल धन कमाना ही उनका एक मात्र ध्येय होता है, यद्यपि व्यापारिक साख के आगे उनकी यह धारणा बिलकुल निर्मूल है। व्यापार में यदि साख नहीं तो कुछ नहीं। साख बनाना बड़े परिश्रम और कड़ाई के साथ व्यापारिक सिद्धान्तों के अनुसार चलने पर निर्भर है। इससे जो प्रसन्नता, और चिरकालीन उन्नति प्राप्त होती है उसका वर्णन करना कठिन है।

२—व्यापारिक क्षेत्र में जितनी कठिनाइयाँ तथा मिथ्या प्रलोभनों का सामना करना पड़ता है उतना शायद जीवन सम्बन्धी और कार्यों में नहीं करना पड़ता। इसमें मनुष्य को पग पग पर अपनी

सच्चाई, ईमानदारी, निष्कपटता (sincerity) युक्ति (tact) चरित्र (character), बुद्धिमानी, पुरुषार्थ, वायदे की पाबन्दी, सहिष्णुता (endurance), तत्परता, साहस, मान-मर्य्यादा का ध्यान, लगन, कार्य कुशलता (efficiency), तथा सहयोग का परिचय देना होता है। इसमें उसे सदा सचेत रहना होता है, क्योंकि किसी प्रकार की असावधानी होते ही उसे चट नुकसान हो जाते या उसकी साख में धब्बा लगने और इस प्रकार उसके व्यापार को ठेस लगने का भय रहता है। ऐसी दशा में व्यापार करना एक साधारण कार्य नहीं कहा जा सकता, परन्तु इसको सुचारु रूप से करते रहने से बहुत सी कठिनाइयाँ आप से आप दूर हो जाती हैं और व्यापारी को स्थायी सुख का अनुभव होने लगता है।

३—अधिकांश व्यापारी यह जानना चाहते हैं कि उनकी अनेक समस्याओं को निवारण करने का उचित उपाय क्या है, और वे किस प्रकार अपने व्यवसाय में सफल हो सकते हैं। इस विषय में वह किसी अन्य व्यवसायी से परामर्श करने में भी सकुचाते हैं। ऐसी दशा में उन्हें अपने ही अनुभव तथा ज्ञान का सहारा लेना पड़ता है, जो कि शुरू में बहुत कम होता है और प्रायः नुकसान दे देकर ही प्राप्त होता है। ऐसी दशा में एक नये और कम अनुभवी व्यापारी के लिये यह अनिवार्य है कि वह अच्छे तथा अनुभवी लेखकों की लिखी हुई व्यापार सम्बन्धी पुस्तकें पढ़े, और उनसे उचित ज्ञान प्राप्त करके अपनी समस्याओं का निवारण करे।

हिन्दी भाषा में ऐसी पुस्तकों का बहुत अभाव है। अन्य भाषाओं (अंग्रेजी आदि) में इस विषय की जो पुस्तकें मिलती हैं

यह प्राय: यहाँ के व्यापार क्षेत्र के दृष्टिकोण से नहीं लिखी होतीं, इस लिये अधिकांश दशाओं में वे कम लाभप्रद सिद्ध होती हैं। फिर भी अपने व्यापार के सम्बन्ध में बहुत से नये विचार उनसे मिलते हैं जिनसे कुछ न कुछ लाभ ही होता है।

४—इस देश की व्यापारिक उन्नति में मुख्य बाधा उसके निवासियों की निर्धनता हैं, साथ साथ व्यापार में लगे हुये कर्मचारियों में उत्साह व कर्तव्य-परायणता की कमी भी। यहाँ के अधिकांश कर्मचारी मालिक के भले में अपना भला नहीं समझते, और काम करने में कार्य-कुशलता (efficiency) का विचार नहीं रखते, जिसके कारण दूकान के मालिक को अपने ग्राहकों को सन्तुष्ट रखना बहुत कठिन हो जाता है। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि हम ऐसे उपाय काम में लावें जिनसे कि इस व्यवसाय के कर्मचारी अपना कर्तव्य भली भाँति करना सीखें, ताकि देश के व्यापार में यथोचित उन्नति हो सके।

५—इस पुस्तक में प्रचलित व्यापार सम्बन्धी कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुये नुकसान से बचने तथा व्यापार में उन्नति करने के अधिक से अधिक साधनों को, कहीं विस्तार-पूर्वक कहीं संक्षेप में, यथोचित रूप से वर्णन किया गया है। अवसरानुसार साधारण बातों का भी, जिनके कारण व्यापार में हानि या लाभ होते रहते हैं, वर्णन कर देना ही उचित समझा है। क्योंकि हानि व लाभ सम्बन्धी सभी बातों का जानना और उनको परिस्थिति अनुसार कार्य में लाना एक व्यापारी के लिये आवश्यक ही नहीं वरन् बिलकुल अनिवार्य है।

इस पुस्तक से लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि इसमें लिखी जो बातें अथवा सुझाव अपने को अनुकूल लगें, और उन्हें कार्य रूप में परिणित करना हो उनका एक नोट याददाश्त के रूप में लिखकर रखलें ताकि सुविधानुसार उनको कार्यान्वित किया जा सके। बिना ऐसा किये अच्छे अच्छे सुझाव याददाश्त की बहती धारा में बेकार बह कर लोप हो जावेंगे।

मुझे इस पुस्तक की भाषा शुद्ध करने में मेरे सुहृद श्री अमर नाथ मेहरोत्र से बड़ी सहायता मिली है। फिर भी संभव है कि कहीं कहीं कुछ त्रुटियाँ रह गई हों। अतः पाठकों से निवेदन है कि इस ओर ध्यान न देकर इसमें प्रकट विचारों से जितना लाभ उठाते बने उठावें, ताकि उनके व्यापार में खूब उन्नति हो कर उनका तथा देश का वास्तविक लाभ हो।

१३८ रसूलाबाद,
इलाहाबाद—ता० १०-११-५५

राम प्रसाद टण्डन

विषय-सूची

———

अध्याय १

नया व्यापार स्थापित करना

(१) शिक्षा और अनुभव की आवश्यकता—

सबसे बड़ी भूल जो अधिकांश लोग नया व्यापार अथवा कारखाना स्थापित करने में किया करते हैं वह उसके बारे में पूरी शिक्षा तथा जानकारी और अनुभव प्राप्त किये विना उसको प्रारंभ कर देने में करते हैं। इसका फल यह होता है कि आगे चलकर उनको तरह तरह की कठिनाइयाँ और घाटे सहकर तत्संबंधित शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है। यदि वे इस प्रकार से नुकसान सहते-सहते थक नहीं जाते तो किसी को जल्दी और किसी को देर में सफलता प्राप्त हो ही जाती है। लेकिन प्रायः देखने में आता है कि सिवाय ऐसी चीजों के व्यापारों के जिनकी साख और अच्छे होने की धाक पहले से जमी हो, जैसे किसी चलते हुए माल की एजेन्सी का काम, अन्य प्रकार के व्यापारों को स्थापित करना बड़ा कठिन हो जाता है। हर एक व्यापार के प्रारंभिक काल में पूंजी की भी विशेष अवश्यकता रहती है, लेकिन यदि उचित शिक्षा और अनुभव न हुआ तो इसकी सुविधा होते हुए भी नुकसान होता रहता है,

यह नुकसान प्रायः ऐसा माल भर लेने अथवा बना डालने से होता है जो जल्दी बिक न सके, क्योंकि वह रक्खे-रक्खे खराब होने लगता है जिसके कारण हानि तथा ह्रास दोनों होते हैं। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि जो भी व्यापार किया जाय उसके सम्बन्ध में पूरा-पूरा ज्ञान, शिक्षा तथा अनुभव पहले प्राप्त कर लेना चाहिये।

इस प्रकार के ज्ञान तथा शिक्षा प्राप्त करने का सबसे उत्तम उपाय यह है कि यदि उसके संबंध में कोई शिक्षणालय हो तो वहाँ जाकर जो व्यापार करना हो उसके बारे में पूरी योग्यता प्राप्त करे, या किताबों द्वारा उसका ज्ञान प्राप्त करे, और फिर उसी प्रकार की दूकान अथवा कारखाने में कुछ समय उसका अभ्यास करे और उचित अनुभव प्राप्त करे। जितने दिन इस प्रकार से अभ्यास तथा अनुभव हो जायगा उतना ही आगे चलकर सुविधा होगी और घाटे की संभावना कम हो कर सफलता का मार्ग सरल बनेगा।

(२) धन की आवश्यकता—

दूसरी मुख्य बात जो एक नया व्यापार स्थापित करने वाले को विचारनी होती है वह उसके लिये धन की समस्या है। इसका यह अर्थ नहीं है कि हरेक व्यवसाय में अधिक धन की आवश्यकता है। व्यापार पाँच रुपये से भी प्रारम्भ किया जा सकता है और इसके लिये लाखों भी कम पड़ सकते हैं। यह

प्रश्न केवल इस बात पर निर्भर है कि क्या व्यापार करना है और किस प्रकार से करना है। जैसी जिसकी रुचि, अनुभव और सामाजिक स्थिति हो उसी के अनुसार उसको धन की आवश्यकता होती है। लेकिन हर दशा में यह जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है कि जिस प्रकार का और जिस प्रकार से हम काम शुरू करना चाहते हैं उसके लिये कितने धन की आवश्यकता होगी, और उसका क्या प्रबन्ध है। जहाँ तक हो सके अपनी ही आर्थिक योग्यतानुसार काम करे। दूसरे का धन लेकर व्यापार में न लगावे क्योंकि ऐसे धन के ऊपर जो अधिक व्याज देना होता है वह कभी-कभी असह्य हो जाता है और इस प्रकार से लिया धन यदि किसी ऐसे माल में लग जाता है जो कि जल्दी बिक न सके तो बड़ी कठिन समस्या पैदा हो जाती है और व्यापार को उसके कारण गहरा धक्का पहुँचता है। इस लिये किसी भी रोजगार को शुरू करने के पहले उसके बारे में पूरा ज्ञान प्राप्त कर ले कि कितने धन में वह चलाया जा सकता है और उसके अनुसार अपनी आर्थिक शक्ति का अनुमान कर ले तब उसमें हाथ डाले। विशेष अनुभव हुए बिना यह भी जरूरी है कि काम थोड़ा-थोड़ा बढ़ाया जाय, क्योंकि एक बार काम शुरू कर फिर उससे हटना पुरुषार्थी लोगों का काम नहीं है। पुरुषार्थी और उद्यमी पुरुष जिस काम में हाथ डालते हैं उसे बिना सफल किये नहीं छोड़ते, चाहे उन्हें कितनी ही कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े या कैसा भी यत्न करना पड़े।

हो सकता है कि कभी उसको सफल बनाने के लिये समय अनुकूल न मिले, अथवा कोई ऐसा भयंकर परिवर्तन हो जाय जिसके कारण उसे विलक्षण परिस्थितियों का सामना करना पड़े जिनका कि उसे पहले कभी अनुमान भी न था। यह सब तो काम जब तक शुरू नहीं किया था तब तक की बातें हैं। जब काम शुरू कर दिया तो एक मात्र सफलता ही उसका ध्येय होना चाहिये। यदि दृढ़ता-पूर्वक परमात्मा का भरोसा कर अपने कार्य में लगा रहे तो ऐसा नहीं हो सकता कि सफलता न मिले, क्योंकि दृढ़ता पूर्वक लगे रहने पर ही सफलता निर्भर होती है। रोजगार चाहे जो किया जाय और चाहे जिस प्रकार किया जाय, उसके लिये यह आवश्यक है कि उसमें जितना धन लगना चाहिये वह उसमें अनुभव हुये बिना एक साथ ही न लगा दिया जाय। जैसे जैसे वह बढ़ता जाय और उसमें धन की आवश्यकता होती जाय उसी के अनुसार उसमें धन लगाना चाहिये। यदि कुछ दिन के लिये कोई विशेष काम करना हो, अथवा फसल का माल खरीदना हो तो यत्न यह होना चाहिये कि बैंक आदि से माल अथवा मशीनरी की आड़ पर उधार लेकर काम चलाना चाहिये। घर की पूंजी उसी समय लगानी चाहिये जब कि किसी वस्तु का व्यापार स्थायी रूप से बढ़ाना हो। हर हालत में यह जरूरी है कि अपनी धन-शक्ति के अंदर ही काम करे और कम से कम दो वर्ष तक नये काम को चलाने के लिये पूंजी का प्रबन्ध कर ले तब उसे शुरू करे। लेकिन यदि स्वयं इसका प्रबन्ध न हो सके

तो दूसरों के धन के भरोसे अपना धन भी लगाकर उसे नष्ट न करे।

(३) नये दूकानदार की आयु—

अन्य बातों के साथ-साथ नये दूकानदार की आयु भी एक ऐसा प्रश्न है जो कि उन्नति व अवनति का बहुत बड़ा कारण होता है। विशेषकर ऐसी दशा में जब कि कोई दूसरा उस का साथी उसके कार्य को पूरा करने के लिये उसके साथ न लगा हो। जैसे एक नवयुवक जो विषय वासनाओं में भी फंसा हुआ है वह किसी रोजगार को सफलतापूर्वक तभी कर सकता है जब कि या तो वह अपनी विषय वासनाओं के वश में न हो या उसका कोई साथी ऐसा हो जो कि उसको ठीक ठीक रास्ते पर चलने के लिये उसे विवश करता रहे। इसी प्रकार यदि एक वयोवृद्ध व्यक्ति केवल अपने अनुभव तथा धन के भरोसे कोई रोजगार करना चाहें तो वह बिना ऐसे सहयोगी के सफल नहीं हो सकता जो कि उस के न करने योग्य छोटे छोटे कार्यों में, जिन में शारीरिक पुरुषार्थ की जरूरत होती है, उसका हाथ बटा सके।

(४) स्थान—

चौथी आवश्यक बात जो नये रोजगार को शुरू करने में विचारणीय होती है वह उसके लिये स्थान का प्रश्न है। इस प्रश्न पर भी रोजगार की सफलता बहुत कुछ निर्भर रहती है।

यदि दूकान करना हो तो यह सोचना होता है कि जिस प्रकार का व्यापार करना है उसके अनुकूल ही स्थान पर वह खोली जाय। अनुकूल स्थान वहीं समझना चाहिए जहाँ कि एक प्रकार की वस्तु के कई दूकानदार हों, क्योंकि ग्राहक प्रायः वहीं पहुँचता है जहाँ कि एक प्रकार की बहुत सी दूकाने होती हैं। दूकान सड़क की उस पटरी पर होनी चाहिये जो कि अधिक चालू हो। यदि इस प्रकार की सुविधा न मिल सके तो यह विचारना चाहिये कि जिस बस्ती में दूकान खोलने का विचार हो उसके रहने वाले अपनी आवश्यकतायें कहाँ से पूरी किया करते हैं और उनकी कितनी संख्या है। यदि वहाँ दूकान की जाय तो उनको ग्राहक बनाने में क्या क्या प्रश्न पैदा होंगे, इत्यादि। यदि हो सके तो कोई उसी प्रकार की चालू दूकान जो बहुत दिन से बन्द हो अथवा कम चलती हो, उसको लेने का यत्न करना चाहिये, वर्शते कि वह अच्छे मौके पर हो, या किसी दूसरे दूकानदार से उसकी दूकान का कुछ हिस्सा किराये पर लेकर अपना काम स्थापित करना चाहिये। इस बात का भी ध्यान रखना जरूरी है कि यदि अपनी दूकान छोटी हो तो उसी प्रकार की दूसरी बड़ी दूकान पास में न हो, क्योंकि जिस प्रकार बड़े पेड़ के नीचे छोटे पेड़ नहीं बढ़ते इसी प्रकार छोटी दूकान बड़ी दूकान के पास होने से उन्नति नहीं करती। यदि लाचारी हो तो ऐसी दूकान पर केवल एक ही प्रकार का माल बेचा जाय ताकि उससे विशेषता पूर्वक ग्राहकों को आकर्षित करके संतुष्ट किया

जा सके। बेमेल होने के कारण अपने ढंग की अकेली दूकान चाहे वह बड़ी ही क्यों न हो चलना कठिन हो जाता है।

स्थान सम्बन्धी जो बातें दूकान स्थापित करने में विचारणीय होती हैं वह कारखाना स्थापित करने में लागू नहीं होतीं। कारखाना स्थापित करने में नीचे लिखी बातें विचारणीय हैं।

१—वह ऐसे स्थान पर होना चाहिये जहाँ कच्चा माल सुविधापूर्वक और सस्ता मिल सके।

२—जहाँ मजदूर सुविधापूर्वक मिल सकें।

३—जहाँ उसके बने माल की निकासी की सुविधा हो, खपत का बाजार तथा रेलवे स्टेशन भी समीप हों।

४—जहाँ बिजली मिल सकती हो और मशीन आदि बिगड़ने पर उसको मरम्मत कराने की सुविधा हो।

कारखाने के सम्बन्ध में यह बात भी जरूरी है कि यदि उसमें मशीनें आदि लगाना हो अथवा नई इमारत बनवानी पड़े, तो जहाँ तक हो सके उसे अपने ही स्थान में स्थापित किया जाय। किराये के स्थान अथवा घर में कारखाना न खोला जाय, क्योंकि ऐसा करने से दूसरे के स्थान अथवा घर में धन लग जाता है जो कि बाद में जब अपने स्थान से हटाया जाता है तो पहले लगाया हुआ बहुत सा धन नष्ट हो जाता है, और यदि स्थान परिवर्तन के लिये उचित स्थान नहीं मिला तो बहुत कष्ट होता है, और कारखाने की उन्नति में बाधा पड़ती है।

(५) चालू रोज़गार मोल लेना—

यदि कोई दूकान या अन्य प्रकार का स्थायी रोजगार चालू रूप में मोल मिल जाय, और उसको उसी प्रकार की अथवा मिलती जुलती वस्तुओं के व्यापार या कारखाने के रूप में चलाया जाय तो उपरोक्त बहुत सी बातों में सुविधा हो जाती है। ऐसा करने में भी सफलता इस बात पर बहुत कुछ निर्भर होती है कि उसके नये व्यवस्थापक अथवा मालिक अनुभवी और व्यापार ज्ञाता हैं या नहीं। ऐसा व्यापार हाथ में लेते समय नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना बहुत जरूरी है :—

१—दूकान में अधिकांश ऐसा माल तो नहीं है जो चालू न हो। यदि कारखाना है तो यह देखना होगा कि मशीनरी अथवा कच्चा माल ऐसा तो नहीं है जो बेकार व पुराने ढङ्ग का हो।

नोट—यदि कोई इस प्रकार से ली हुई दूकान या कारखाना बहुत उन्नति पर हो तो यह इस बात की दलील नहीं समझना चाहिये कि वह नये बन्दोबस्त में भी उतना ही चालू रहेगा। इस प्रकार का मोह बहुत कुछ धोखे मे डालने वाला होता है, क्योंकि उसकी उन्नति के कारण बहुधा उसके संचालक हुआ करते हैं जो कि नये बन्दोबस्त में बदल जाते हैं, और उसके भविष्य की उन्नति अथवा अवनति उनके उसमें होने या न होने पर निर्भर होती है।

२—वह ऐसे स्थान पर तो नहीं है जो कि बे-मौके कहा जाय।

३—यदि वह चल नहीं रहा है तो इसके ठीक-ठीक कारण क्या हैं? वे ऐसे तो नहीं हैं जो तुम्हारे ऊपर भी लागू होते हों।

४—उसकी साख कैसी है?

नोट—यदि वह अच्छी नहीं है तो उसका नाम बदल देना उचित होगा, और उसके जो कर्मचारी ठीक न हों उन्हें भी शनैः शनैः हटा देना होगा।

५—हर हालत में यह देखना भी बहुत जरूरी है कि जो दूकान आदि ली जाय उसमें उन्नति की गुञ्जायश है या नहीं। उसका माल कहाँ से आता है और ग्राहक-संख्या कितनी और किस प्रकार की है। दूकान की वार्षिक बिक्री कितनी है और वह अधिकांश किस माल की है और क्या-क्या माल उसमें बढ़ाने की गुञ्जायश है।

६—उसकी स्थिति का ब्यौरेवार नकशा, जिसमें हर प्रकार के स्टाक और लेने व देने वाली रकमों का पूरा विवरण हो, बनवाकर देखना चाहिये कि अधिकांश माल किस प्रकार का है और कैसी दशा मे है। उसका बाजार भाव क्या है और कितने में बिक सकता है। यदि वह फ़र्निचर आदि के किस्म का है तो उसकी दशा तथा दाम के हिसाब से वह कैसा है। जिनसे रुपया लेना है वह कैसे आसामी हैं और उनके पुर्जे आदि को वह अंगीकार करते हैं या नहीं। देने व लेने वाली रकमों की यदि जिम्मेदारी आ जाय तो उसकी उचित कानूनी कार्यवाई भी कर

लेनी चाहिये ताकि बाद मे उनकी बाबत किसी प्रकार का धोखा न हो।

७—जहाँ तक हो सके पुराने हिसाब रखने वाले या बेचने वाले तथा अन्य अनुभवी और परिचित कर्मचारियों को अधिक नहीं तो कुछ समय के लिये जरूर रोक लेने की व्यवस्था होनी चाहिये।

८—मशीनरी व फर्निचर आदि का दाम, उसकी वर्तमान दशा और वार्षिक छीजन घटा कर नियत करना चाहिये। बिक्री के माल में केवल चालू माल का ही दाम उनके असली तथा नये बाजार भाव के आधार पर लगाये जाने चाहिये। रुके हुये अथवा जीर्ण माल का दाम उसकी स्थिति के अनुसार लगाना चाहिये या उसे न लेना चाहिये।

९—यह भी देख लेना चाहिये कि कोई माल अथवा फर्निचर आदि किसी दूसरे का बिकने के लिये अथवा किराये पर तो आया हुआ नहीं है।

१०—जहाँ तक हो सके दूकान आदि जो चलती हुई ली जाय उसका काम रोक कर उसका सौदा या भुगतान न किया जाय। ऐसा करने से नये दूकानदार को उसकी चालू गति का ज्ञान अच्छी प्रकार से ठीक-ठीक हो सकेगा। साथ ही ग्राहकों आदि से या माल के आने व जाने के सम्बन्ध में पूर्ण जान-कारी भी प्राप्त हो सकेगी। यदि हो सके तो दूकानदार अथवा

व्यवस्थापक को भी कुछ दिन के लिये सौदा हो जाने के बाद रोककर उसकी सहायता उसके चलाने में लेना चाहिये।

११—जिस दूकानदार से दूकान आदि ली जाय उससे यह निश्चित कर लेना जरूरी होगा कि वह उसी शहर या बस्ती में जहाँ पर कि वह पहले अपना व्यापार करता था उसी प्रकार का व्यापार कम से कम पाँच वर्ष तक नहीं कर सकेगा।

१२—जितने दाम में चालू दूकान आदि ली जाय उसके अतिरिक्त कुछ पूँजी और भी उसको बाद में बढ़ाने के लिये जरूर प्रबन्ध कर लेना चाहिये।

(६) थोड़ी पूँजी में व्यापार करना—

नये रोजगारी को जहाँ तक हो कोई ऐसा काम सोचना चाहिये जिसमें शुरू में रुपये की लागत कम लगे और उसका लौट फेर जल्दी होता जाय। बंधे खर्च भी कम हों। इसके विपरीत यदि कोई दूकान करके बाजार में बैठ जाता है जिसकी प्रतियोगिता में अन्य बड़े दूकानदार हों, तो वह बड़ी गलती की बात है। ऐसी दूकाने वहीं चल सकती हैं जहाँ आबादी काफी हो अथवा बाहर (गाँव आदि) से लोग माल लेने के लिये अधिक आते हों, और बड़ी दूकाने अधिक न हों। बड़ी दूकानों के होते हुये छोटी दूकानों का चलना बहुत कठिन हो जाता है, सिवाय विशेष अवस्थाओं के, जैसा कि ऊपर कहा गया है या ऐसी दशा में जब कि पास में ही उसी प्रकार की अन्य दूकाने भी हों।

(७) सहयोगी की आवश्यकता—

अधिकांश हालतों में यह अनिवार्य होता है कि व्यापार करने में कम से कम एक विश्वासी साथी जरूर हो चाहे वह घर का अपना रिश्तेदार आदि हो, अथवा कर्मचारी के रूप में हो। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित हैं :—

१—अधिकांश हालतों में स्थायी रोजगार के कुछ बन्धे खर्चे जैसे किराया, व्याज, छीजन, नौकरों का वेतन आदि ऐसे लगे रहते हैं जिनका पूरा लाभ केवल एक आदमी के परिश्रम से नहीं मिल सकता।

२—व्यापार के सम्बन्ध में अकसर इधर-उधर या बाहर माल लेने या गृहस्थी के कार्यों से जाना जरूरी होता है। अथवा बीमारी आदि के कारण दूकान कुछ दिन के लिये बन्द करना पड़ता है, तो उससे व्यापार को बहुत धक्का पहुँचता है और बिक्री का सिलसिला टूट जाता है।

व्यापारिक सहयोगी साझीदार एक सच्चा और ईमानदार व्यक्ति होना चाहिये जो नफे को अपना नफ़ा और नुकसान को अपना नुकसान समझे। उससे जरा जरा से काम के लिये कहने की आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिये। उसे एक प्रकार से मालिक अथवा मुख्य व्यवस्थापक की हैसियत से काम करना चाहिये। मालिक को भी उस पर पूरा विश्वास रख कर काम लेना चाहिये, और उसको अपने से कम नहीं समझना चाहिये।

(८) कर्मचारी कैसे हों—

आवश्यकतानुसार अन्य कर्मचारी जो रखे जावें वे जहाँ तक हो सके ऐसे होने चाहिये जो कि न तो बिलकुल अनजान हों, न ऐसे हों कि जिन्हें यदि छुटाना हो तो अधिक संकोच करना पड़े। क्योंकि जितने भी कर्मचारी व्यवसाय सम्बन्धी होते हैं उनका रखना या छुटाना व्यवसाय की उन्नति या लाभ व हानि पर निर्भर है। हाँ यह बात जरूर विचारणीय होती है कि हरेक व्यक्ति में यदि कुछ दोष होते हैं तो साथ-साथ अच्छाइयाँ भी होती हैं। देखना यह चाहिये कि व्यापारिक दृष्टि से उसके रखने में हानि अधिक है या लाभ। हर दशा में उसका मृदुभाषी तथा चरित्रवान होना बहुत जरूरी है।

दूसरी बात जो नये कर्मचारी रखने में विचारणीय है वह उसका वेतन निश्चय करना है। वेतन नियत करना कई बातों पर निर्भर है जो कि नीचे लिखे अनुसार हैं :—

(१) आर्थिक सामर्थ्य—यदि व्यापार में इतनी गुञ्जाइश है कि उसके लिये हर एक विभाग के अलग-अलग कर्मचारी रखे जावें तो उनकी योग्यतानुसार उनको वेतन देना चाहिये। यदि नहीं दे सकते तो अच्छा होगा कि या तो आवश्यकतानुसार यथोचित समय (part time) के लिये विशेष कर्मचारी रखे जावें, अथवा एक ही कमचारी से कई प्रकार के काम लिये जावे।

२—बगैर कुछ दिन काम देखे और चाल-चलन तथा आदतों को जाने वेतन नियत करना ठीक नहीं होता। अवस्था और व्यवस्था अनुसार जिस जगह जैसे आदमी की जरूरत हो वहाँ वैसा पुरुष, स्त्री अथवा लड़का रखे। जहाँ केवल बैठे रहने का काम हो वहाँ के लिये वृद्ध आदमी और यदि चलने फिरने या मेहनत का अधिक काम हो तो युवावस्था वाला आदमी होना चाहिये।

जहाँ तक हो सके उसकी शिक्षा और पिछले अनुभव अथवा आदतों के अनुसार ही आदमी को जगह देना चाहिये। यदि बिलकुल अनभिज्ञ है तो उसे कुछ दिन दूसरे जानने वाले के साथ काम सीखने का अवसर देना चाहिये।

हर हालत में कर्मचारियों को हँसमुख और शिष्ट (Courteous) होना बहुत जरूरी है। विक्रेता के स्थान के लिये विशेष रूप से कर्मचारी को समझदार, फुर्तीला, अच्छे बदन और स्वभाव का और हँसमुख होना जरूरी है। स्त्रियों को रखने में विशेष सावधानी की जरूरत है। जहाँ तक हो सके स्त्रियों को पुरुषों के सम्पर्क मे नहीं रखना चाहिये वह अपने ही गोल में काम करती रहें ऐसी व्यवस्था होनी जरूरी है।

यदि किसी ऐसे स्थान के लिये कर्मचारी रखना हो जिसमें रुपया या माल लाने या ले जाने का काम सौंपना हो, तो उससे उचित जमानत जरूर ले लेनी चाहिये। यदि एक मुश्त वह उसे न दे सके तो जमानत का बाँड भरवाकर किस्त-बन्दी से अथवा

बीमा कम्पनी द्वारा उसकी जमानत करा लेना चाहिये। इस प्रकार के बाँड में ऐसी व्याख्या होना भी जरूरी है कि आवश्यकता पड़ने पर उसकी जमानत के रुपये से उचित रकम वसूल की जा सके।

नये नौकर को बिना उसका पूरा परिचय मालूम किये और किसी मातवर आदमी का जिम्मा लिये नौकर नहीं रखना चाहिये। यदि किसी प्रकार की शंका हो तो पुलिस द्वारा उसकी जाँच करा लेनी चाहिये।

(६) फर्निचर कैसा हो—

यह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर है कि रोजगार किस प्रकार का है और उसका स्थान कहाँ और किस प्रकार का है। यदि दूकान बड़ी है तो उसके लिये एक काउन्टर (माल दिखाने, तोलने, नापने आदि की मेजों का पड़ाव) का होना बहुत जरूरी है। इससे हर प्रकार की सुविधा के साथ-साथ माल की रक्षा भी होती है। नीचे लिखी बातों का ध्यान फर्निचर बनवाने अथवा खरीदने में होना जरूरी है :—

१—फर्निचर इस प्रकार का हो कि उसमें रखा माल अधिक से अधिक अंश में दिखाई दे।

२—उसमें माल रखने तथा निकालने में सुविधा हो।

३—उसमें रखने से माल बिगड़ने का अथवा चोरी हो जाने का डर न हो।

४—जो शो-केस आदि बाहर की ओर हो उसमें से माल खूब दर्शित किया जा सके, और उसमें कम से कम एक खाना ऐसा भी हो जिसमें कोई हरकत करती मूर्ति या तसबीर प्रदर्शित की जा सके।

५—माल को धूप, गर्द आदि से बचाने का प्रबन्ध हो।

६—यदि दूकान में झरोखे आदि हों तो उन्हें अच्छे प्रकार से सुरक्षित कर देना चाहिये, ताकि उनको तोड़कर कोई अन्दर न घुस सके।

७—तोलने या नापने आदि की वस्तुओं में कमी न हो और वह सदा स्वच्छ और चमकते रहें।

८—ऊपर से सामान रखने या उतारने की सुविधा होनी चाहिये।

९—ग्राहकों तथा कर्मचारियों के बैठने का उचित प्रबन्ध होना चाहिये।

१०—मालिक के बैठने का स्थान ऐसा होना चाहिये जो ग्राहकों तथा कर्मचारियों से दूर न हो। दूकान में घुसते ही बाईं ओर उसका होना प्रायः सुविधाजनक होता है।

११—नाम का साईनबोर्ड दूकान के अनुसार छोटा या बड़ा, पर कुछ न कुछ विशेषता लिये निराले ढंग का होना चाहिये। नाम के साईनबोर्ड के अतिरिक्त कुछ साईनबोर्ड ऐसे भी होने चाहियें जिन पर विकने वाली वस्तुओं का नाम आकर्षित रूप से लिखा हो जिससे कि चलता फिरता ग्राहक भी उसे पढ़ सके।

एक साईनबोर्ड बिना लिखा भी होना चाहिये जिसके द्वारा नई नई घोषणा माल आदि के सम्बन्ध में की जा सके।

१२—कुछ आकर्षक चित्र तथा एक दो मूर्नियाँ भी बाहर की ओर हों, जिनको प्रतिदिन साफ़ करते और सजाते रहना चाहिये। यह चित्र तथा मूर्तियाँ सार्वजनिक रुचि की होनी चाहिये। चलचित्र या मूर्तियों का प्रबन्ध करके उनके आस पास विशेष बिकने वाली चीजों की प्रदर्शनी करना बड़ा लाभदायक होता है।

१३—फ़र्निचर ऐसा होना चाहिये जो कि देखने में सुन्दर और मजबूत हो और उसको साफ करने में अधिक परिश्रम व खर्च न करना पड़े।

१४—प्रकाश तथा पंखों का प्रबन्ध उचित और आकर्षक रूप से होना चाहिये। कम से कम एक बत्ती बाहर की ओर अधिक प्रकाशवान होनी चाहिये।

१५—माल को धूप व बर्षा से बचाने के लिये परदों का प्रबन्ध होना चाहिये।

१६—तालों में क़िफायत नहीं करनी चाहिये।

१७—ग्राहकों की सायकिल रखने का उचित प्रबन्ध होना चाहिये।

१८—जो सामान रखने के बर्तन आदि हों वे इस प्रकार के हों कि यदि ग्राहक चाहे तो उसमें रक्खी चीज़ खुद भी उठा-

कर देख सके बशर्ते कि वह बहुमूल्य न हो, ताकि माल की सजावट व रक्षा के साथ-साथ वह उसके बिकने में रुकावट न डाले।

सजावट के साथ साथ माल को चोरों उठाईगीरों आदि से बचाने का पूरा प्रबन्ध होना चाहिये। यह भी देखना जरूरी है कि दूकान आदि में किसी तरफ़ से किसी प्रकार का लगाव तो नहीं है, जिससे चोरी का डर हो। रात में पहरेदार तथा बिजली आदि से आग लगने से बचाव का भी प्रवन्ध होना चाहिये।

ग्राहकों की साधारण खातिर के लिये कुछ ग्लास व तश्तरी आदि का भी प्रबन्ध होना चाहिये, ताकि आवश्यकतानुसार उनकी पान, इलायची आदि से खातिर की जा सके। पीने के पानी का प्रबन्ध स्वच्छतापूर्वक सदा ठीक रखना चाहिये।

(१०) मितव्ययता की आवश्यकता--

यह बहुत जरूरी है कि शुरू में हर प्रकार के बंधे अथवा चालू खर्चे कम रखे जावें क्योंकि ऐसी अवस्था में आमदनी कम होती है, और व्यापार की उन्नति सम्बन्धी खर्चे अधिक करने पड़ते हैं। जहाँ तक हो सके स्वयं ही अधिक से अधिक काम किया जाय। हिसाब किताब रखने में पूरी सावधानी बरती जाय ताकि किसी विभाग में व्यर्थ खर्च न होने पावे। कर्मचारियों की संख्या भी कम से कम रखी जावे और जब तक किसी कर्मचारी की बाबत पूरा ज्ञान न हो जाय उसे अधिक वेतन पर न रखा जावे और न उसका विशेष विश्वास ही किया जावे।

(११) विशेषता (speciality)—

वैसे तो हर समय एक व्यवसायी को अपने कारोबार में कुछ न कुछ विशेषता पैदा करते रहना चाहिये, लेकिन प्रारम्भकाल में दूसरे दूकानदारों से अच्छे रूप में भिन्न होना या नये ढंग की रचना, जो कि विशेष रूप से आकर्षित हो, कारोबार को जल्दी चमका देने में बहुत सहायक होती है। इस विशेषता में बहुत से ढंग सम्मिलित हैं, जैसे बच्चों की उपयोगी अथवा खेलने की वस्तुओं का एक विभाग अलग करके उन्हें कुछ रियायत से माल देना। ऐसे विभाग को 'बच्चों का बाजार' के नाम से विख्यात करे और उसकी उचित रूप से घोषणा करे। यह काम अधिकांश विज्ञापनार्थ ही समझकर किया जाय क्योंकि इससे जो ग्राहक व बच्चे आने लगेंगे वह दूकान में बिकने वाली अन्य वस्तुएँ भी लेंगे, जिससे दूकान का नाम फैलते देर न लगेगी। इसी प्रकार सर्विस में भी विशेषता की जा सकती है, जैसे विक्रेताओं की एक सी पोशाक हो। यदि उनका बर्ताव तथा बात-चीत का ढंग भी प्रशंसनीय होगा तो उससे वह और भी प्रभावित होकर जो वस्तु वह लेने आया है उसके अतिरिक्त और भी वस्तुएँ देखकर उनकी चाह करेगा और इस प्रकार दूकान की उस पर अच्छी छाप पड़ेगी।

(१२) उद्घाटन—

जहाँ तक हो सके नई दूकान का उद्घाटन खूब धूम धाम

से बाजे गाजे के साथ करना चाहिये, और इस कार्य को किसी विख्यात महापुरुष से कराना चाहिये। इस अवसर पर अपने सभी इष्ट मित्रों, शुभचिन्तकों तथा परिचित दूकानदारों को निमन्त्रित करना चाहिये और उनका यथोचित रूप से सम्मान करके उद्‌घाटन कर्ता द्वारा अपना तथा अपने व्यापार का पूरा परिचय कराना चाहिये। साथ साथ अपने यहाँ की विशेषता का वर्णन भी करा देना चाहिये और यदि वर्णन करने योग्य कोई स्थायी विशेषता न हो तो कुछ दिन के लिये कोई विशेष रियायत घोषित कर के विशेषता प्राप्त करना चाहिये। अपने माल का प्रदर्शन तथा परिचय इस अवसर पर अच्छी प्रकार से करना कराना चाहिये, और यदि आगन्तुक सज्जन उसमे से कुछ लेना चाहे तो उन्हे उस रोज विशेष रियायत के साथ माल देना चाहिये। यदि एक दिन सब परिचित इष्ट मित्रों आदि को बुलाने मे सुविधा न हो तो दो अलग अलग समय तथा दिनों मे उन्हें बुलाना चाहिये। इस अवसर पर सहयोगी दूकान-दार कुछ रुपया जमा के लिये भी भेजते हैं जिससे कि यह सूचित होता है कि उनसे लेन देन का व्यवहार जारी हो गया। ऐसे रुपये को अगले दिन या जल्दी ही लौटा देना चाहिये। उद्‌घाटन की सूचना स्थानीय समाचार पत्रों द्वारा जहाँ तक हो सके जरूर करनी चाहिये।

अध्याय २

सजावट और सफ़ाई

(१) आवश्यकता--

दूकान हो अथवा कारखाना दोनों ही अवस्थाओं में सजावट और सफ़ाई की ओर पूरा-पूरा ध्यान देना बहुत आवश्यक है। इसमें जरा भी असावधानी होने से माल का नुकसान तथा ग्राहकों की घृणा शुरू हो जाती है। अतः यह बहुत जरूरी है कि इन स्थानों को सदा स्वच्छ रखा जाय और जहाँ ग्राहक तथा मिलनेवाले लोग आते हों वे स्थान आकर्षक भी बनाये जावें। इससे अपना चित्त तो प्रसन्न रहता ही है आने वालो पर भी इसका प्रभाव अच्छा पड़ता है। साथ ही साथ कर्मचारियों में भी स्वच्छता की आदत पड़ती है जिससे माल के बिगड़ने की संभावना कम होती है, तथा कारखाने की दशा में उसका माल अच्छे प्रकार का बनता है।

सदा सफ़ाई के लिये यह जरूरी है कि इसके लिये एक आदमी अलग रखा जाय, या किसी मुख्य कार्यकर्त्ता के सुपुर्द यह काम किया जाय और हर एक कर्मचारी को भी कड़ी ताकीद रहे कि वह हर एक स्थान पर जो उसके जिम्मे किया गया

हो सफाई रखे। ऐसा करने से चीजें खराब होने से बचेंगी और नियत स्थान पर रहेंगी जिससे हर जगह स्वच्छता दिखाई देगी और आगन्तुक ग्राहकों आदि का मन प्रसन्न होगा। इस प्रकार वहाँ का वातावरण सदा अच्छा रह कर बिक्री पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। हर एक वस्तु उसके नियुक्त स्थान पर रखी होने से उसके खोने की संभावना भी कम होगी और उसको ढूंढने में व्यर्थ समय नष्ट नहीं करना पड़ेगा।

स्वच्छता के उपरोक्त नियम बहुत साधारण हैं पर उनकी अवहेलना करने से व्यवसायी को कितनी हानि उठानी पड़ती है इसका अनुमान लगाना कठिन है। यह एक आश्चर्य की बात है कि इस ओर असावधानी करने से मालिक के ही सामने नुकसान होता रहता है पर उसकी ओर वह उचित ध्यान नहीं देता। इसका कारण अधिकांश में उसकी निज की मनोवृत्ति ही है। परन्तु इसमें संदेह नहीं कि इस मामूली असावधानी के कारण उसे बहुत हानि उठानी पड़ती है, जो निरंतर थोड़ा ध्यान देने से बचाई जा सकती है।

कारोबार के स्थान की स्वच्छता के साथ साथ वहाँ के कार्य-कर्ताओं की शारीरिक स्वच्छता की ओर भी ध्यान देते रहना चाहिये। मालिक को चाहिये कि वह सदा स्वच्छ कपड़े पहने और अपने कर्मचारियों को भी ऐसा करने के लिए उत्साहित करता रहे। यदि बन पड़े तो इस कार्य के लिए उनकी कुछ सहायता भी किया करे, जैसे मौसम बदलने पर नये कपड़े देना

या बनवाना, साप्ताहिक अथवा मासिक धुलाई का प्रबन्ध करना आदि। बिना उनकी इस प्रकार की सहायता किये उनसे स्वच्छता की आशा करना अधिकांश में निष्फल होगा। पर ऐसा करने का परिणाम बहुत सुन्दर होता है, क्योंकि इस प्रकार से कर्मचारियों की सफ़ाई की आदत पड़ने के साथ साथ मालिक और उनमें आपस की सद्भावना उत्पन्न होकर वे अपने काम को अधिक रुचिपूर्वक करते हैं, जिससे दूकान के लाभ के साथ साथ उसकी कीर्ति भी बढ़ती है।

(२) सजावट और उसकी विधि—

यह कार्य बहुत कुछ इस बात पर निर्भर है कि व्यापार और उसका स्थान किस प्रकार का है। यदि वह होटल आदि खाने पीने का स्थान है तो उसमें विशेष सजावट की जरूरत है, जैसे बड़े शीशे, पर्दे, फूलदान, तसवीरें, बढ़िया किस्म के गमले आदि। वहाँ के कार्यकर्ता भी जो आगंतुक ग्राहकों का स्वागत करें अथवा खाना खिलावें उनकी ड्रेस भी ठीक तथा स्वच्छ होनी चाहिये।

इसी प्रकार यदि खाने को सामग्री बनाने के बड़े कारखाने हों जहाँ से बनकर व पैक होकर खाने का सामान बाहर जाया करता हो, उसके यहाँ के बनानेवाले कर्मचारियों की पोशाक एक निश्चित और भले प्रकार की होनी चाहिए। इसमें ऊपर पहनने के ऐपरन और सर पर बांधने की टोपी मुख्य हैं। ऐसे

कर्मचारियों की डाक्टरी परीक्षा भी कभी कभी होती रहनी चाहिये ताकि उनकी छूत वाली कोई बीमारी दूसरों को न होने पावे।

मुख्यतः दूकान आदि को माल से ही सजाना चाहिये, क्योंकि माल बिकने के लिए ही उसको अधिक से अधिक आकर्षक बनाना है। जिन आलमारियों या बर्तनों में माल रखा हो वह सदा स्वच्छ और चमकदार बने रहने चाहिये। तसवीरों आदि को रोज या कभी कभी जरूर झाड़ते पोंछते रहना चाहिये। अलमारियों, दरवाजों आदि के शीशों को रोज गीले व सूखे कपड़े से पोंछकर साफ़ करते रहना चाहिये। यदि उन पर मैल जम गई हो तो उन्हें स्प्रिट या सोडे से साफ करना चाहिए। यदि कहीं मक्खियाँ अधिक बैठती हों तो उस स्थान को फ़िनाइल मिले पानी में कपड़ा भिगोकर साफ कर देना आवश्यक होता है। जूते आदि जहाँ से आते जाते हों उस जगह पायदान रखवा देना चाहिए ताकि कोई व्यक्ति जो अन्दर आवे उस पर अपने पैरों को पोंछकर आवे। यदि दूकान में जलपान करना हो तो उसके लिए एक स्थान अलग नियत कर वहाँ पर ही जलपान करना चाहिए और उसे तुरन्त साफ़ करा देना चाहिए। कारोबार के स्थान पर बैठकर कभी कुछ नहीं खाना चाहिये इससे चूहे तथा मक्खियाँ बढ़कर नुकसान पहुँचाती हैं।

दूकान को सजाने के लिए शो-केस लगाना बहुत जरूरी है लेकिन इसमें रखी चीजें कभी कभी बदलती रहनी चाहियें

ताकि उनमें न्यूनता पैदा होती रहे। जो चीजें उसमें सजाने के निमित्त रखी जावें वे या तो एक ही प्रकार की हों अथवा इस प्रकार से सजाई जावें कि ग्राहक की निगाह उसमें रखी हुई हर एक चीज पर विशेष रूप से पड़े। हर एक चीज़ पर जो शो-केस में सजी हो उसके दाम का कार्ड भी हो। दूकान के अंदर शो-केस लगाने का मुख्य आशय यह भी होता है कि वहाँ आये हुए ग्राहकों को उन वस्तुओं के अतिरिक्त जो वह चाहता है वहाँ बिकनेवाली और भी आकर्षक या नई आई हुई चीजों का ज्ञान उनके दामों सहित हो जावे, ताकि वे अपनी पसन्द की वस्तुओं को उसी समय या फिर कभी खरीदने की बात सोच सकें। व्यवस्थापक को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि जो माल भी उसके यहाँ बिक्री का है वह मूल्य सहित ग्राहक की निगाह में किसी न किसी रूप से आता रहे। यदि हो सके तो उसका placard भी दरसाते रहना चाहिये। यदि कोई हरकत करती हुई मूर्ति या तसवीर हो तो उसके पास या काउन्टर पर विक्रेता के समीप अधिक बिक्री होने वाली या नई वस्तुयें प्रदर्शित करते रहना चाहिये ताकि वह ग्राहकों की निगाह में आती रहें और वह उनका भाव भी तत्काल मालूम करके उनका आर्डर दे सकें, या उनके सम्बन्ध में विक्रेता से बातचीत कर सकें।

शो-केस, डिस्प्ले कार्ड, तसवीरों या मूर्तियों के अतिरिक्त दूकान अथवा कारखाने में कार्य करने के स्थान पर अच्छे प्रकाश

की भी बहुत आवश्यकता है। रात्रि में प्रकाश इस प्रकार से होना चाहिये कि ग्राहक की आँखों के सामने न पड़कर ऊँचे की ओर हो और विशेषतः माल पर पड़े। इसके अतिरिक्त जिस स्थान या बर्तन आदि में रखकर ग्राहक को माल दिखाया जावे उसका रंग ऐसा न हो जो माल की हैसियत या रंग पर बुरा प्रभाव डाले। दूकान को आकर्षक बनाने के लिए यह भी जरूरी है कि उसके बाहर की रोशनी विशेष प्रकाशवाली हो। कुछ लोग रेडियो या लाउड-स्पीकर लगा कर अपनी दूकान को आकर्षक बनाते हैं। इसका बिक्री पर कोई अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि इसका बुरा प्रभाव यह होता है कि बेकार की भीड़ दूकान के सामने जमा हो जाती है जिसको दूकान के अन्दर आने वाले ग्राहक पसन्द नहीं करते। हाँ, यदि ऐसा किसी खास पर्व या त्यौहार के अवसर पर किया जाय, जबकि दूकान को केवल आकर्षक ही बनाना है और जनता का मनोरंजन भी करना हो तो दूसरी बात है। ऐसे अवसर पर तो दूकान का बाहरी भाग भी विशेष रूप से सजाया जाना जरूरी है और आनेवालों का विशेष रूप से स्वागत तथा सत्कार भी करना चाहिये।

(३) व्यापार स्थान के बाहरी भाग को सजाना—

व्यापार स्थान जो कि किराये आदि की दृष्टि से एक बहुमूल्य स्थान होता है और जिस पर कि व्यापारी की उन्नति

तथा जीविका निर्भर रहती है उसमें सबसे अधिक जरूरी और मूल्यवान भाग उसका सामने वाला भाग होता है। इसलिये इसकी सफ़ाई व सजावट का विशेष ध्यान रखना एक चतुर व्यवसायी के लिये नितांत आवश्यक है। इसको सदा साफ़ और भड़कीला बनाये रखना बहुत जरूरी है। यदि हो सके तो इसकी देख-रेख व सजावट का चार्ज एक समझदार कर्मचारी के सुपुर्द करना चाहिये। वह दूकान बन्द करने के पहले अथवा दिन में किसी निश्चित समय पर शो-केस आदि में रखी चीजों को उचित रूप से रोज सजाये और साफ़ किया करे। बाहर से शो-केस को कुछ सुन्दर साईनबोर्डों से भी सुशोभित करना चाहिये क्योंकि यहाँ पर ही चलते फिरते ग्राहकों की निगाह अधिकांश रूप से पड़ती है और इसी के द्वारा वे विशेषकर आकर्षित भी होते हैं। यह व्यापारी का सब से बड़ा जीता जागता विज्ञापन का साधन भी है। इसकी ओर से कभी लापरवाही या असावधानी करना अपने बहुमूल्य स्थान का निरादर करना है। इसमें रखी चीजों के जो शो-कार्ड लगाये जावें वे न तो इतने बड़े हों जो उसमें रखी चीजों का अधिकांश भाग ढक लें, न इतने छोटे हों जो दूर से पढ़े भी न जा सकें। जिस चीज का विज्ञापन निकल रहा हो उसे अथवा नई आई हुई चीजों का, जिनकी ओर ग्राहकों का ध्यान आकर्षित करना है, इनमें जरूर प्रदर्शन करना चाहिये।

(४) माल पर दाम डालना—

चीजों का दाम जहाँ तक हो हर एक मेल की चीज़ पर जो बिकने के लिये दूकान में लगाई जावे सफ़ाई के साथ पेन्सिल से अथवा चिट द्वारा लिखा रहना चाहिये, इससे ग्राहक उसके दाम पूछने के असमंजस से बच जाता है, और वह उसे लेने या न लेने का निश्चय सुविधा पूर्वक कर सकता है। हाँ इस बात का भी ध्यान रखना जरूरी है कि सामने रखी हुई उन्हीं चीजों का दाम आकर्षित रूप से प्रदर्शित किया जाय जो मँहगी न हों। प्राइस-टिकट (मूल्य-चिट) और शोकार्ड आदि को पुराना पड़ने से पहले ही बदल डालना चाहिये ताकि उनके कारण दूकान अथवा चीज़ जिस पर वह लगे हों गन्दी न दीखें। बहुमूल्य वस्तुओं पर दाम उसी दशा में डाले जावें जब कि उनका दाम किसी कारण बहुत कम कर दिया गया हो। ऐसी दशा में उनका असली दाम भी दर्शाना जरूरी है।

(५) व्यापार-स्थान के सामने का भाग—

दूकान अथवा कारखाने के अन्दर की ही सफ़ाई आदि होती रहना काफ़ी नहीं होता। उसके बाहर यदि कूड़ा आदि जमा हो अथवा नाली साफ़ न हो तो यह भी उसके वातावरण को बिगाड़ कर उसकी आकर्षण शक्ति को घटाते हैं। इसके अति-रिक्त उनसे पैदा होने वाली मक्खियाँ, भुनगे, मच्छर आदि आकर और भी गन्दगी पैदा करते हैं। इसलिये इस भाग को

भी नित्य अच्छे प्रकार से साफ कराके वहाँ पर छिड़काव करा देना चाहिये। वर्षा ऋतु में लाईट पर आने वाले पतंगे बहुत परेशान किया करते हैं। इनसे बचने के लिये सब से अच्छा उपाय यह है कि उनके ऊपर कुछ झालरदार चीज़ लगा कर उसके नीचे कुछ कपड़ा टाँग दिया जाय, लाइट भी इस प्रकार की हो जिस पर पतंगे अधिक न आवें।

———

अध्याय ३

बिक्री करने के उपाय

(१) साधारण उपाय—

हमारे अनुभव में बहुत कम दुकाने ऐसी आई हैं जिनके बारे मे कहा जा सकता है कि उनके बिक्री के ढंग अच्छे हैं। अधिकांश दुकानदार, या उनके बिक्रेता, किसी प्रकार माल बेच देने मे ही अपनी सफलता समझते हैं, चाहे खरीदने वाला फिर उस दुकान पर आने का नाम भी न ले। ऐसी दुकानें इसी कारण चलती हैं कि ग्राहकों को दूसरी दूकान जहाँ नम्रता और सच्चाई का व्यवहार होता है मालूम न हों। बिक्री का सबसे अच्छा और सरल गुर यह है कि आगन्तुक ग्राहक माल लेकर जाय अथवा बिना लिये जाय, उसके ऊपर बिक्रेता का प्रभाव ऐसा पड़े कि वह उस दुकान पर बार बार आने की चाह करे। ऐसे व्यवहार का परिणाम यह होता है कि वह दूसरों से भी प्रसन्नता पूर्वक उस दूकान का जिक्र करता है जिससे कि दूकान-दार की कीर्ति व कारोबार आप से आप बढ़ता जाता है। लेकिन एक बिक्रेता को सदा इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि वह नम्रतापूर्वक ग्राहक को संतुष्ट करके उसके हाथ कुछ

बेच लेता है, तो उसके ऊपर वह अपनी गहरी छाप डालता है जिससे कि उसके दुबारा आने में कोई सन्देह नहीं रह जाता। लेकिन हर हालत में यदि वह समझता है कि वह उसको अपने माल से वास्तविक रूप से संतुष्ट नहीं कर सकता तो उसके हाथ उसे बेचने का कदापि अनुरोध नहीं करना चाहिये, बल्कि नम्रता पूर्वक उसको दूसरे समय आने के लिये अथवा कोई और दूकान से मंगवा कर उसे देकर सन्तुष्ट करने की चेष्टा करनी चाहिये। ग्राहक को किसी प्रकार का धोखा देने का विचार मन में भी नहीं लाना चाहिये। उसके हित में ही अपना हित समझना चाहिये।

हर विक्रेता को अपने कार्य में निपुण होना बहुत जरूरी है। जिस वस्तु को वह बेचने के लिये प्रस्तुत करे उसका उसे पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिये। वह किस कारखाने या देश का बना है, मजबूती व रंग के पक्का होने न होने में कैसा है, उसकी नाप तोल क्या है, भाव में उसी प्रकार के मालों की अपेक्षा कैसा है, इत्यादि। केवल यह कह देना कि यह माल बहुत अच्छा है या सस्ता है काफ़ी नहीं होता। हर एक बात जो वह कहे प्रमाण सहित कहने से ही ग्राहक के ऊपर उसका असर होता है, क्योंकि इस अवसर पर एक दूसरे के स्वार्थ का संघर्ष होता है। इसलिये जिस माल की वह प्रशंसा करे उसे अवसर अनुसार जहाँ तक हो सके प्रमाण सहित कहे। एक विक्रेता को नीचे लिखे विक्री के क्रमशः उपायों (stages) का सदा ध्यान रखना चाहिये :—

पहले—ध्यान आकर्षित करे (Awaken attention)

फिर—दिलचस्पी पैदा करे (Create interest)

इसके बाद—खरीदने की चाह उत्पन्न करे (Create desire to buy).

तब—इस चाह को खरीदने के संकल्प मे परिणित करे। (Turn that desire into a resolve to buy).

यह परम आवश्यक है कि ग्राहक जो माल चाहता या मांगता हो पहिले उससे उसका अथवा उससे मिलती जुलती चीज़ का सौदा पक्का करे। फिर अवसर पाकर या साथ साथ इस बात की चेष्टा करे कि उसके हाथ दूसरा और भी माल बेचा जाय। यदि वह किसी दूसरी चीज़ के लिए अपना विचार प्रकट करता है या उस पर निगाह डालता है, तो उसे उसको दिखाने में या उसका पूरा पूरा हाल बताने में जरा भी ढीलढाल न करनी चाहिये, बल्कि इस बात की प्रतीक्षा करते रहना चाहिये कि वह और किसी चीज़ के बारे में पूछताछ करे और वह उसे तत्काल दिखावे या उसका पूरा पूरा हाल बतावे, और यदि वह उससे प्रभावित नहीं होता तो तत्काल उससे मिलती जुलती अन्य प्रकार की चीजें दिखावे, पर साथ साथ इस बात का ध्यान रक्खे कि जो चीज वह दिखा रहा है या दिखाने के लिए कहता है वह उसकी हैसियत इच्छा और मनोवृत्ति के अनुसार हो। याद रहे कि विक्रेता का कार्य केवल इसी में नहीं समाप्त हो जाता कि जो चीज़ एक ग्राहक माँगता हुआ आये वही उसको

ग्राहक अपने लेने की सभी वस्तुओं को पूछते नहीं आता है। विक्रेता की सफलता इसी में है कि वह उसकी चाह, मनोवृत्ति तथा हैसियत के अनुसार उसके हाथ जितना माल बेचा जा सके बेचे, या उसको बाद में उसे लेने के लिए प्रभावित करे।

सबसे अच्छी नीति जो एक दूकानदार या उसके विक्रेता को ग्राहक के साथ बर्तनी चाहिये वह उसकी निर्दोष सच्चाई और ईमानदारी तथा नम्रता का बर्ताव है। किसी प्रकार की चालाकी या बेईमानी उसके साथ व्यवहार में लाते ही उसे समझ लेना चाहिये कि उसने अपने व्यापार को बहुत बड़ी ठेस पहुँचाई है। इसलिये मालिक दूकान को ही नहीं बल्कि उसके सब कर्मचारियों को इस नीति का कड़ाई के साथ पालन करना चाहिये। यदि कोई चीज़ किसी प्रकार खराब हो गई है या विक्रेता को मालूम है कि ग्राहक अज्ञानतावश उस पर मोहित हो रहा है तो कम से कम एक बार उसे उसके दृष्टिगोचर जरूर कर देना चाहिये। यदि किसी कारण वह फिर भी उसे लेने के लिए तत्पर हो तो इसमें विक्रेता का कोई दोष नहीं। हाँ यदि विक्रेता को मालूम है कि ग्राहक अपनी पसंद में भूल कर रहा है, जिसके कारण उसे आगे पछताना पड़ेगा, तो उसको चाहिये कि उसे वह फिर आगाह कर दे। इसी प्रकार यदि ग्राहक की हैसियत या मनोवृत्ति अच्छा माल लेने की है, लेकिन वह सस्ते के लालच में घटिया माल ले रहा है, तो भी विक्रेता को यह कोशिश करनी चाहिए कि वह बढ़िया माल ले। क्योंकि आशय यह है कि

उसको बाद में किसी प्रकार से पछताना न पड़े। एक दफ़ा दाम अधिक लग जाने का जो क्षणिक कष्ट होता है वह उसे उस चीज़ को बर्तते समय भूल जायगा और दूकान तथा विक्रेता की ओर उसकी श्रद्धा बढ़ेगी। यह इस बात से कहीं अच्छा होगा कि वह कम दाम में घटिया चीज़ ले जाय और बाद में उसका उपभोग करते समय पछताए।

यह निश्चय है कि दूकानदार हर एक ग्राहक की ओर स्वयं ध्यान नहीं दे सकता, यद्यपि हर एक ग्राहक चाहता यही है कि वह मुख्य व्यवसायक या दूकानदार से ही बातचीत करे, क्योंकि इससे उसे ठीक ठीक जानकारी की आशा होती है, जिससे उसे सन्तोष अधिक होता है। लेकिन यदि माल के ऊपर उसमें साफ़ साफ़ दाम पड़े हैं और विक्रेता उसके बारे में ठीक ठीक हाल नम्रतापूर्वक बता सकता है तो वह उससे व्यवहार किये जाने पर उसी प्रकार सन्तुष्ट होगा जैसे कि दूकानदार द्वारा। फिर भी दूकानदार को यह देखते रहना चाहिये कि हर एक ग्राहक की ओर जो उसके यहाँ आया है पूरा पूरा ध्यान दिया जा रहा है, यदि ऐसा नहीं हो रहा है तो तत्क्षण उसकी ओर उसे स्वयं ध्यान देना चाहिये। उसे यह भी देखना चाहिये कि हर एक ग्राहक की सुविधा और रुचि के अनुसार उसके साथ विक्रेताओं का व्यवहार हो रहा है या नहीं, या किसी प्रकार की असावधानी तो नहीं बर्ती जा रही है। यदि ग्राहक को यह भाषित होता रहे कि दूकान का मालिक ध्यान से

अपने कार्यकर्त्ताओं का काम देख रहा है और उसकी ओर से वह अचेत नहीं है तो उसे बहुत सन्तोष होता है।

कभी कभी ग्राहक के साथ उसके कुछ साथी भी आ जाते हैं, उनकी ओर भी ध्यान देकर अपने यहाँ बिकने वाली चीज़ों की ओर उन्हें आकर्षित करना चाहिये और इस बात की प्रतीक्षा करनी चाहिये कि वह किसी वस्तु के बारे में पूछें तो तत्काल ही उन्हें वह चीज़ दिखाकर उनकी दिलचस्पी को बढ़ाना चाहिये। यदि ऐसा अवसर न मिले तो उनको कुछ हैन्डबिल आदि देकर या अपनी तरफ़ से उनकी रुचि अनुसार कोई चीज़ उन्हें दिखाकर उनका मन आकर्षित करते रहना चाहिये ताकि वह भी उस दूकान पर ग्राहक के रूप में आने लगें।

(२) आकर्षण पैदा करना—

कोई दूकानदार यह आशा नहीं कर सकता कि उसकी दूकान पर आप से आप ग्राहक आते रहें। यही स्थिति एक कारखानेदार की भी है। दोनों को ही अपने माल की किसी न किसी प्रकार की घोषणा करते रहना चाहिए। इसके कई तरीके है जो नीचे लिखे जाते हैं। अपने माल तथा स्थिति के अनुसार उन्हें कार्यरूप में लाते रहना चाहियेः—

१—हैन्डबिल (नोटिस), शो-कार्ड आदि निकालना।

२—प्राईस लिस्ट (मूल्य सूची) कैटेलौग, कैलेन्डर आदि निकालना।

३—समाचार पत्रों या रेलवे टाइम टेबिल आदि में विज्ञापन देना।

४—साइनबोर्डों, पोस्टरों, या दीवारों आदि पर लिखवा कर घोषणा करना।

५—दूकान के आगे बड़े बड़े अक्षरों से लिखकर या अन्य प्रकार से घोषणा करना।

६—शो-केस आदि में माल बाहर की ओर लगाना।

७—कैशमीमों, अथवा लिफ़ाफ़ों आदि पर छपवा कर घोषणा करना।

८—छपे हुए गश्ती-पत्र, नमूने सहित अथवा बिना नमूने के भेजना।

९—फ़िल्म द्वारा, रेडियो द्वारा या रात को मुख्य स्थानों पर बड़े बड़े बोर्ड अथवा रात में बिजली के बोर्ड लगवा कर घोषणा करना।

१०—बस आदि पर लिखवा कर घोषणा करना।

किन हालतों में और किस प्रकार से घोषणा की जाय यह विशेषतः नीचे लिखे विचारों पर निर्भर है :—

(अ) यदि बिकने वाली ऐसी वस्तु है जिसका हमें देश भर में प्रचार करना है तो ऊपर लिखे (२) (३) (४) व (९) के अनुसार बर्तना चाहिए।

(आ) यदि अपने ही नगर मे अथवा आस पास के स्थानों

में प्रचार करना है तो स्थानीय पत्रों द्वारा और ऊपर लिखे (१), (२), (४), (५), (६), (७), (८), (९) व (१०) के अनुसार बर्तना चाहिए। स्थानीय समाचार पत्रों में विज्ञापन और समय समय पर दूकानदारों के यहाँ मूल्य-सूची भेजते रहना बहुत जरूरी है।

समाचार पत्रों में विज्ञापन देना विशेषकर उसी अवस्था में उपयुक्त होता है जब कि कोई नया माल आया हो, नई योजना शुरू की हो या बिक्री की फ़सल हो और बिक्री अधिक होने की सम्भावना हो, हर प्रकार का प्रकाशन करते समय उसकी उपयोगिता और खर्च की ओर भी ध्यान देना चाहिये। आशय यह होना चाहिये कि कम से कम खर्च में अधिक से अधिक प्रचार हो सके। लेकिन इस प्रकार से कि वह सुन्दर मालूम हो।

वर्तमान समय में कोई व्यापारी चुपचाप बैठ कर अपनी उन्नति नहीं कर सकता, उसकी उन्नति उसी के हाथ में किसी न किसी प्रकार से अपने माल की घोषणा करते रहने में है। यदि यह घोषणा चलते फिरते, आकस्मात रूप से होती रहे तो उस पर उपभोक्ताओं का ध्यान बिना उनकी चेष्टा किए आकर्षित होता रहता है, और अवसर पाकर वह फलीभूत भी होता रहता है। हर एक चीज़ की घोषणा करते समय उसको किसी न किसी भाँति आर्कषित बनाना बहुत जरूरी है और साथ ही साथ यह भी जरूरी है कि वह उपभोक्ताओं के ध्यान में बार बार आती रहे।

(३) विक्रेता की महत्वता—

किसी चीज़ के बनाये जाने और उसको उपभोक्ताओं तक पहुँचाने में विक्रेता का पद बड़े महत्व का है। क्योंकि उसके बनाने वाले और सीढ़ी दर सीढ़ी बेचने वाले, जो कि प्रायः बड़े अनुभवी और धनी तथा प्रयत्नशील लोग होते हैं, उन सब का पराक्रम व्यर्थ हो जा सकता है यदि उनकी बनाई चीज़ को वह उपभोक्ताओं के प्रति उसकी उचित प्रशंसा के साथ उपस्थित नहीं कर सकता। इसी अवसर पर उस चीज़ का दूसरी उसी प्रकार अथवा बनावट की चीज़ों से मुक़ाबला होता है, और उसे उसका उचित स्थान मिलता है। लेकिन यदि विक्रेता उसके अपेक्षाकृत गुणों से अनभिज्ञ है और पूरे तौर पर उन्हें उपभोक्ताओं को नहीं समझा सकता तो वह उस चीज़ के तथा उसके बनाने वालों अथवा चलाने वालों के साथ बड़ा अनर्थ करता है। इसलिए हर एक व्यापारी का यह एक आवश्यक कर्त्तव्य है कि वह ध्यान रक्खे कि उसका हर एक विक्रेता अपने विभाग की वस्तुओं का हाल ठीक ठीक जानता हो और उसे ग्राहकों को अच्छे प्रकार से समझा सके।

(४) ग्राहकों की सूची—

हर एक दूकानदार अथवा कारखानेदार के लिये यह बहुत जरूरी है कि वह अपने मुख्य ग्राहकों की उनके पूरे पते सहित एक सूची रक्खे। यदि वह नया व्यापारी है तो उसको ऐसी

सूची किसी न किसी प्रकार से (स्वयं जगह जगह जाकर अथवा किसी को भेज कर) तैयार करनी चाहिये और उसे सदा ठीक करते रहना चाहिये। इसी के आधार पर उसे अपने यहाँ की सूचनाएँ अथवा नोटिस आदि भेजते रहना चाहिये।

(५) ग्राहकों से बर्ताव—

मालिक तथा उसके विक्रेताओं को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि उनकी व्यापारिक सफलता का एक मात्र आधार ग्राहक ही होते हैं। उनको सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रखने में ही उनकी उन्नति तथा भलाई है। इसलिए उनसे सदा शिष्टता-पूर्वक और प्रसन्नचित्त होकर व्यवहार करना चाहिये, यदि पत्र-व्यवहार करना पड़े तो भी इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिये कि कोई बात अप्रसन्नता पैदा करने वाली न लिखी जाय। कभी कभी ग्राहक अनजान में या धोखे से अथवा स्वार्थवश मिथ्या-दोषारोपण भी करते हैं ऐसे अवसरों पर धैर्यता और दृढ़ता के साथ उनका भ्रम मिटाने की चेष्टा करनी चाहिये, और यदि वह माल वापस करना चाहें तो इसमें भी कोई आपत्ति प्रदर्शित नहीं करनी चाहिये। ऐसे अवसरों पर छोटे छोटे नुकसान सह लेना कहीं अच्छा होता है बजाय इसके कि ग्राहक को असंतुष्ट किया जाय, जिससे कि अन्य ग्राहकों के ऊपर भी बुरा असर होता है। पर इसका यह भी मतलब नहीं समझना चाहिये कि ग्राहक को प्रसन्न करने के लिये जो बात वह कहे उसे मान लेने में ही भलाई है। हाँ, यदि कोई ऐसी

बात हो जो कि ग्राहक को प्रसन्न करने वाली हो लेकिन अपने को किसी प्रकार से हानिकारक न हो तो उसे मानकर अथवा कह कर उसकी मनोवृत्ति को संतुष्ट करना चाहिये। इससे एक प्रकार की घनिष्टता पैदा होती है जिससे कि व्यापारी तथा ग्राहक दोनों का लाभ होता है। इसी अभिप्राय से विक्रेता को अपने ग्राहक की मनोवृत्ति तथा उसके स्वभाव और आदतों का ज्ञान प्राप्त करते रहना चाहिये, जिससे कि उससे व्यवहार करते समय वह उसके अनुकूल ही उससे वर्त सके। साथ साथ यदि उसमे कुछ बुराइयाँ हों तो उनसे भी उसे सचेत रहना चाहिये। यदि किसी प्रकार की रियायत करना हो तो विक्रेता को चाहिये कि मालिक से बिना पूछे न करे। ऐसा करने से ग्राहक और मालिक दोनों की ही प्रसन्नता उसको मिल सकेगी।

एक विक्रेता को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि उसके मालिक के हर प्रकार खर्चे जो वह करता है तथा उसके निजी खर्चे सब इस बात पर निर्भर हैं कि माल की अधिक से अधिक बिक्री हो। यदि बिक्री यथेष्ट रूप से नहीं होती तो न तो उसके दूकान के खर्चे चल सकते हैं न वह कर्म-चारियों को रख सकता है, और न ही उसकी अपनी जीविका चल सकती है। यह सब केवल यथेष्ट बिक्री होते रहने पर ही निर्भर है। इसलिए जरूरी है कि बिक्री के अवसरों का पूरा पूरा उपयोग किया जाय और ग्राहक को सदा संतुष्ट व प्रसन्न रखा जाय। उससे सदा आदर से पेश आना चाहिये। पहले-पहल

जब नया ग्राहक आता है तो वह दूकान से अथवा उसके मालिक या बिक्रेताओं से बिलकुल अपरिचित होता है। इसलिए ऐसे अवसर पर उसके साथ विशेष ध्यान-पूर्वक व्यवहार करने की जरूरत है ताकि दूकान की ओर उसका मित्र भाव उत्पन्न हो सके, और जब वह दुबारा आवे तो उसको पहचानने में सुविधा हो। यदि अवसर मिले तो उसको पते का कार्ड अथवा कोई इसी अभिप्राय वाला कागज पेश करके उसका परिचय भी प्राप्त करना चाहिये ताकि भविष्य मे इसके साथ व्यवहार करने में सुविधा हो।

उपरोक्त विचार क्रमानुसार अधिक स्पष्ट रूप से नीचे लिखे जाते हैं:—

१—ग्राहक के आते ही उसका स्वागत प्रसन्नता पूर्वक करो।

२—जो माल वह मांगे वह उसको तत्काल दो या दिखाओ और दूसरे माल के मांगने की प्रतीक्षा करो। यदि माल देखने पर लेने मे उसकी असमंजस जान पड़े तो जल्दी फ़ैसले की चेष्टा न करके उसके मन की भावना को जानो और उसी के अनुसार दूसरा माल प्रशंसा सहित दिखाओ, लेकिन देखते जाओ कि वह उस पर जमता है या नहीं। यदि वह उसे पसन्द कर लेता है तो फिर अधिक प्रकार का वही माल दिखाने की जरूरत नहीं है। ऐसा करने से कभी कभी उसका इरादा गड़बड़ी में पड़ जाने का डर रहता है। हाँ, यदि व सन्तुष्ट न होता हो तो उसे

और माल दिखाकर अथवा दिखाये हुये माल में ही किसी एक पर उसका चित्त जमाने की चेष्टा करो।

३—जब तक ग्राहक तुम्हारी सम्मति की आशा या मांग न करे तब तक अपनी राय विरुद्ध या अनुकूल में मत दो। लेकिन यदि वह असमंजस में हो तो पसन्द करने में सहकारी की भाँति अपनी ठीक-ठीक राय कारण सहित प्रकट करके उसका असमंजस दूर करो। कभी अपना मत उसके ऊपर जबरदस्ती लादने की चेष्टा मत करो।

४—जो माल ग्राहक मांगे उसे ही बेचकर संतुष्ट न हो जाओ, बल्कि इस बात की चेष्टा करो कि अन्य माल भी जो दूकान में उसकी रुचि या आर्थिक स्थिति के अनुकूल हों उन्हें लेने की वह चाह करे। केवल यह पूछना कि कुछ और चाहिये काफ़ी नहीं है। यह तो चलते समय के बिदाई के वाक्य हैं।

५—यदि ग्राहक कोई ऐसी चीज़ माँगे जो तुम्हारे स्टाक में नहीं है तो उससे मिलती-जुलती दूसरी चीज़ उसकी प्रशंसा सहित पेश करो और जहाँ तक हो सके उसे उसके लिए दूसरी दूकान पर न भेजो। यदि दूसरी दूकान पर वह चीज मिल रही हो तो स्वयं उसको वहाँ से मँगवा कर दे दो। ऐसा करने से तुम उसकी सहानुभूति लेते हो। साथ साथ उसे दूसरी दूकान का ग्राहक बनने का अवसर नहीं देते। इस प्रकार से मँगवा कर माल उसी दशा में देना चाहिये जब कि वह उसका

नक़द रुपया देता हो। इस प्रकार के माल पर मुनाफ़ा नहीं लेना चाहिये।

६—यदि ग्राहक बिना माल लिए चला जाता है तो इसके कारणों पर विचार करो, और इस बात की चेष्टा करो कि भविष्य में ऐसे अवसर जहाँ तक संभव हो न पैदा हों। सिवाय ऐसी दशा के कि जो चीज़ वह माँगता है वह तुम्हारी लाइन की अथवा विशेष चलने वाली न हो।

अधिकांश विक्रेता इसलिए भी माल बेचने में असफल होते हैं कि वह ग्राहक की बहस का संतोषजनक उत्तर नहीं दे पाते। यह इस कारण होता है कि वह अपने माल का पूरा-पूरा और ठीक-ठीक हाल नहीं जानते, और यदि जानते भी हैं तो दूसरों के मुकाबिले में वह कैसा है यह नहीं बता सकते। यदि उसमें उनके मुकाबिले में कुछ विशेषताएँ हैं तो उनको जानना उसके लिए बहुत जरूरी है। इसलिए जहाँ तक हो सके हर एक विक्रेता को अपने माल के अपेक्षाकृत गुण व दोष का पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिये ताकि वह ग्राहक की आलोचनाओं का सन्तोषजनक और ठीक ठीक उत्तर दे सके। कभी कभी ग्राहक केवल दाम कम कराने के विचार से भी माल में फ़िज़ूल का दोषारोपण करने लगते हैं अथवा उसको और दूकानों से महंगा बताते हैं। ऐसी दशा मे उनका खंडन दृढ़तापूर्वक समझाते हुए करना चाहिये और अपने यहाँ के दाम ठीक होने का संतोषजनक उत्तर देना चाहिये। यदि वास्तव में दाम अपेक्षाकृत अधिक हैं तो उसे

बताना चाहिये कि ऐसा क्यों है। हो सकता है कि दूसरे का माल पुराना अथवा मिलावट का हो, या वह केवल एक छोटी चीज़ को चलाने के लिए उसे बेमुनाफ़े बेच रहा हो जिसको कि तुम उससे मँगवा कर उसी दाम में उसे दे सकते हो, लेकिन उसकी शुद्धताई का जिम्मा न लेकर। यदि किसी बात से भी तुम उसको संकोच या सन्देह मे डाल देते हो तो यह काफ़ी है। लेकिन यदि विक्रेता उसे संतोषजनक उत्तर नहीं दे सकता तो उसे तत्काल मालिक को अपनी कठिनाई बतानी चाहिये ताकि वह उसका समाधान कर सके।

ग्राहक का यह पूरा अधिकार है कि वह अपने रुपये का अधिक से अधिक प्रयोग करे, वह ऐसा इसी प्रकार कर सकता है कि जहाँ से उसे अच्छी से अच्छी और कम से कम मूल्य मे चीज़ मिलती हो वहाँ से ले। इसी प्रकार यदि दूकान-दार चाहता है कि उसे भी उसके माल का अधिक से अधिक मूल्य मिले तो वह उसे उस जगह बेचने का यत्न करे जहाँ उसे उसकी इच्छानुसार मूल्य मिल सके। वह यह नहीं कर सकता कि दूसरों के मुकाबिले में किसी प्रकार से भी अपना माल महँगा दे। हर हालत मे ग्राहक के साथ सच्चा व्यवहार होना बहुत जरूरी है।

(६) दाम कम करना—

चीज़ों के दाम इस प्रकार रखे जायँ जिससे कि उनमें कमी करने की आवश्यकता न पड़े। यदि किसी विशेष दशा में ऐसा

करना भी पड़े तो उसके कारण सहित करना चाहिये। ग्राहक को दाम कम करके सन्तुष्ट करना बहुत भूल की बात है इससे उसका विश्वास कम होता है और भविष्य में भी वह ऐसी ही आशा करने लगता है। हाँ यदि कोई ग्राहक अधिक सामान लेता है और कुछ घटाने के लिये आग्रह करता है तो भाव में कमी न करके जोड़ में से कुछ रकम घटा कर उसकी खातिर कर देने में कोई हर्ज नहीं। यदि कोई घनिष्ट मित्र अथवा रिश्तेदार को माल देना हो और उसके साथ रियायत करना वाजिब हो तो दाम ठीक ठीक लगाकर कुछ डिस्काऊन्ट के तौर पर जोड़ में से घटा देना चाहिये। ताकि उसे भी मालूम हो कि दाम में उसकी खातिर की गई। इस प्रकार उसको प्रसन्न करना बहुत जरूरी है। यदि कोई माल बिगड़ गया हो तो उसके दाम कम जरूर कर देना चाहिये। यही हालत कोई ऐसे बचे हुये माल की भी होनी चाहिये जो अधिक बिक कर थोड़ा रह गया हो, और उसको निपटाना जरूरी हो।

सिवाय उपरोक्त वर्णित दशाओं के अन्य अवसरों पर यदि दाम कम करना पड़े तो इस प्रकार करे कि कोई कारण विशेष अथवा खातिर मालूम हो। माल को किसी प्रकार निकालने के विचार से उसकी दशा अच्छी होते हुये भी दाम गिराना बड़ी भूल है क्योंकि बिना जरूरत कोई चीज इस वास्ते नहीं लेता कि वह सस्ती है। ऐसा करने से प्रायः नुकसान ही होता है। अच्छे माल का दाम कम करना किसी

विचार से ठीक नहीं होता। सिवाय ऐसी सूरत के कि उसका बाज़ार भाव गिर गया हो। हाँ बिना मूल्य लिये कोई चीज़ नज़र कर दी जाय यह रीति अवस्था तथा अवसर अनुसार ग्राहक को प्रसन्न करने की उचित है। लेकिन ऐसा तभी करना चाहिये जब कि ऐसा करना विशेष आवश्यक हो।

कभी-कभी किसी विशेष गरीब ग्राहक की सहायतार्थ उसे दाम कम करके चीज़ बेचना होता है। लेकिन ऐसे अवसर बहुत कम होते हैं उनसे दूकान के दस्तूर पर कोई असर नहीं पड़ता।

(७) ग्राहक की खातिरदारी—

याद रहे कि ग्राहक जो आता है वह अपनी खातिर कराने के ख्याल से नहीं आता। उसकी सब से बड़ी खातिर इसी में है कि उसकी रुचि तथा स्थिति के अनुसार उसे अच्छे से अच्छा माल ठीक दाम मे दिया जाय। जिसको लेकर और उपभोग में लाकर वह प्रसन्न हो। जो बात वह कहे उसे आदरपूर्वक सुनना और जो माल वह मांगे उसे योग्यतापूर्वक देना या दिखाना, इसी की वह आशा करता है। इसमें किसी प्रकार की कसर नहीं होनी चाहिये। यदि वह विशेष रूप से परिचित है तो दूकानदार को चाहिये कि उसकी पान, इलायची द्वारा अथवा सिगरेट आदि से भी खातिर करे। लेकिन जहाँ तक हो सके यह कार्य वह अपने ही हाथ से करे, नौकर द्वारा ऐसा करना उचित नहीं है। दूकान में जल पिलाने का भी उचित प्रबन्ध

होना चाहिये और यदि गर्मी का मौसम हो तो अवस्थानुसार बर्फ़ का प्रयोग भी करना चाहिये।

सदा इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि ग्राहकों के सुविधापूर्वक बैठने का स्थान नियत हो और वह सदा स्वच्छ रखा जाय। साथ ही साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि उसके कारोबार का स्थान उसके जीविकोपार्जन के लिये है जिस पर उसे बहुत खर्च करने पड़ते हैं। बेकार की बातें तथा गपशप करने वालों के लिये नहीं है। ऐसे लोग यदि आवें तो उनको थोड़े ही समय में निपटा देना चाहिये और .फ़ुरसत रहने पर सदा अपने कारोबार की उन्नति के बारे में विचार तथा कार्य करते रहना चाहिये।

छोटी छोटी सुविधा की बातें, जैसे नोट आदि भुनाना, परिचित ग्राहक के चिक का रुपया देना, उसके पैन में स्याही भरना, पोस्ट-कार्ड, लिफ़ाफ़े आदि दाम लेकर देना-यह ऐसी बातें हैं जिनके द्वारा जरूरत पड़ने पर ग्राहक की बिना किसी खर्च के खातिर की जा सकती है, और इस प्रकार उससे घनिष्टता पैदा करके बिक्री का कठिन कार्य सरल बनाया जा सकता है। पर इस किस्म की खातिर केवल उसकी ओर अपनी शिष्टता दर्शाने के विचार से ही करनी चाहिये न कि कोई अहसान के विचार से।

(८) विख्यात ब्रान्ड का माल—

ग्राहकों का साधारण रुझान प्रायः विख्यात ब्रान्ड का माल

ही लेने की ओर होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि माल तभी विख्यात होता है जब कि वह पर्याप्तरूप से अच्छा हो। केवल उसके विज्ञापन निकालने ही से वह प्रसिद्ध नहीं हो सकता। लेकिन अच्छा होने पर भी यदि उसका यथोचित रूप से प्रचार नहीं होता और बराबर विज्ञापन नहीं निकलता तो भी वह विख्यात नहीं हो सकता। ऐसे माल का बिकना बहुत आसान होता है, और उसमें लगा रुपया बराबर लौट फेर होता रहता है। इसलिये दूकानदार को चाहिये कि अपनी लाइन का जो विख्यात माल हो उसे बेचने के लिये जरूर रखे। उसके साथ साथ अन्य माल का ब्रान्ड भी जिसमें मुनाफ़ा अधिक मिलने की संभावना हो मेल के लिये रखे। पर यह माल भी तभी अधिक चल सकता है जब कि उसका विज्ञापन हो रहा हो, अथवा उसके विज्ञापन की सामग्री अच्छे प्रकार की उपलब्ध हो सके। बिना विज्ञापन या विज्ञापन सामग्री के किसी नए माल में रुपया फँसाना अच्छा नहीं होता। उसके चलाने में दूकानदार को उसके अच्छा होते हुए भी बड़ी कठिनाई पड़ती है, सिवाय इसके कि उस प्रकार का दूसरा विख्यात माल मिल न रहा हो। इसी प्रकार यदि कोई नये ब्रान्ड का माल है और उसका विज्ञापन हो रहा है तो वह उस माल की अपेक्षा जिसका विज्ञापन नहीं हो रहा है अधिक आसानी से बिकेगा।

एक कारखानेदार के लिए जरूरी है कि वह अपने यहाँ के बने माल का एक ब्राण्ड स्थापित करके उसी नाम से उसे चलावे

और इस ब्रान्ड की रजिष्ट्री करा दे ताकि मशहूर होने पर उसी नाम से दूसरा कोई लाभ न उठा सके। लेकिन इस बात का भी ध्यान रक्खे कि जब तक माल बिल्कुल अच्छा और उसका पैकिंग आदि बिल्कुल ठीक न हो जाय तब तक उसे बाजार में उस ब्रान्ड से न चलावे, क्योंकि यदि एक दफ़ा उसकी बदनामी किसी प्रकार की हो गई तो फिर उसको चलाना बहुत कठिन हो जायगा, और ऐसे माल को चलाने का प्रयत्न बेकार ही सिद्ध होगा।

(९) विशेषता (Speciality) की आवश्यकता—

बहुत प्रकार की वस्तुओं का व्यापार करना उसी अवस्था में ठीक होता है जब कि दूकान बड़ी हो, इसी प्रकार दूकान छोटी होने पर बहुत प्रकार की वस्तुयें रखना उसी अवस्था में ठीक होता है जब कि अन्य दूकानें उसी प्रकार की बड़ी न हों। ऐसी दूकानें अधिकांश सुनसान स्थानों में, जैसे पहाड़ों या गांवों की छोटी बस्तियों में होती हैं। लेकिन बड़े बड़े शहरों में जहाँ एक एक प्रकार की अनगिनती दूकानें होती हैं वहाँ या तो बड़ी दूकानें अधिक चलती हैं या ऐसी दूकानें चलती हैं जो किसी ख़ास चीज़ में विशेषता रखती हों। क्योंकि ग्राहक ऐसी दूकानों से उनमें एक ही मेल की चीज़ों का स्टाक अधिक होने के कारण और उनमें ठीक-ठीक दाम होने की आशा से वहाँ से लेने में अपने स्वार्थ की रक्षा अच्छे प्रकार से कर सकता है। इसी प्रकार

एक कारखानेदार को भी चाहिये कि वह अपने यहाँ अनेक मेल की चीज़ें न बना कर एक ही मेल की चीजें बनाये, और उन्हें अधिक संख्या में सस्ते भाव से बेचने का प्रयत्न करे। इस प्रकार वह अच्छा माल अधिक संख्या में क़िफ़ायत से बनाकर अपने ग्राहकों को आसानी से सन्तुष्ट कर सकेगा। यदि किसी कारण ऐसा करना मुनासिब न समझा जाय तो कम से कम एक या दो चीज़ें ऐसी ज़रूर पकड़े या बनाये जिनमें उसकी विशेष रूप से ख्याति हो सके, और अन्य माल केवल मेल के लिये अथवा उसकी माँग के कारण रखना या बनाना जरूरी हो।

(१०) कैश डिस्काउन्ट (नकद बिक्री पर बट्टा)--

कभी कभी देखने में आता है कि नक़द बिक्री पर दूकानदार कुछ कैश डिस्काउन्ट (प्रायः एक पैसा रुपया) घटा देते हैं। इसका प्रभाव ग्राहक पर बहुत अच्छा पड़ता है, क्योंकि इससे यह सिद्ध होता है कि दूकानदार नकद दाम देने वालों के साथ अपेक्षाकृत उधार लेने वालों के कुछ रियायत बर्तता है। यह बिल्कुल स्वाभाविक है, क्योंकि जो बिक्री उधार होती है उसका उसे हिसाब रखना पड़ता है, बिल बनाना पड़ता है और उसका रुपया वसूल करने के लिए आदमी रखना पड़ता है। इन सब बातों में उसका जो अधिक खर्च पड़ता है वह उन्हीं ग्राहकों पर पड़ना चाहिये जो नकद दाम नहीं दे सकते, न कि उन पर भी जो कि नक़द दाम देकर माल खरीदते हों।

(११) माल का मेल बनाना—

हर एक बड़ी दूकान के लिए यह परम आवश्यक है कि जिस प्रकार की वस्तुयें वहाँ बिकती हों उनका पूरा मेल रहे। क्योंकि ग्राहक तभी सन्तुष्ट होता है, जब कि वह कई प्रकार की चीजें देखकर उनमें से अपनी मनोवृति और आर्थिक स्थिति के अनुसार छाँट सके। इसीलिए जिस मेल का माल उस पर बिकता हो उसमें हर प्रकार की चीजें होना जरूरी है, बढ़िया, घटिया, छोटी, बड़ी, इत्यादि। अधिक तो साधारण मेल का माल, जो न बहुत घटिया हो न बढ़िया, बिकता है यदि वह अपनी उतार चढ़ाओ की चीजों की अपेक्षा आकर्षित भी हो। इसीलिए व्यापार उसी प्रकार का करना चाहिये जिसके अनुसार अपने पास पूँजी हो, वर्ना बड़ी कठिनाई होती है और नुकसान के साथ काम बन्द कर देना पड़ता है।

(१२) बचा माल—

हर एक दूकान में कुछ न कुछ ऐसा माल बचता जाता है जो कि उसके अधिकांश बिक जाने पर रह जाता है, और उसका बिकना कठिन हो जाता है। इसलिए कि वह एक तो कम होने और छंट जाने के कारण आकर्षित नहीं रहता, दूसरे अधिक माल के आगे वह पीछे पड़ जाता है। पर ऐसे माल में जो रुपया फंसा होता है, और उसके न बिकने से अथवा उसकी ओर लापरवाही होने के कारण उसकी चोरी आदि से जो

नुकसान होता है वह दूकान के निखर्चे मुनाफ़े पर बहुत बुरा असर डालता है। यदि ऐसा माल जल्दी नहीं बिक जाता तो वह दिन ब दिन खराब भी होता रहता है, जिसके कारण भी नुकसान होता है। लगभग यही हाल उस माल का भी होता है जिसका बिकना किसी कारण रुक गया हो, या जो बेमेल हो गया हो। अन्तर केवल यह है कि यदि ऐसे माल की आगे जल्दी मांग हो जाने की संभावना हो, या किसी विशेष अवसर, जैसे मेले आदि, पर वह बेचा जा सकता हो तो दूसरी बात है वरना उसका जल्दी निकलना बहुत जरूरी है। क्योंकि उसमें फंसे धन का जो लौट फेर नहीं हो रहा है उसके कारण न तो उस पर मुनाफ़ा हो पाता है न दूसरा माल ही लेकर उस पर मुनाफ़ा कमाया जा सकता है। इसको निकालने के कुछ सरल उपाय नीचे सुझाये जाते हैं, अवसर तथा स्थिति के अनुसार उन्हें काम में लाना चाहिये :—

१—यदि दूकान में गुन्जायश हो तो वहीं कहीं एक स्थान या शो-केस में ऐसा माल रख दिया जाय और एक बोर्ड "दाम में कमी किया माल" उस स्थान पर टांग दिया जाय। यह स्थान ऐसा हो जहाँ हर एक ग्राहक आप से आप जाकर माल को देख सके और उसका कम किया हुआ तथा पूरा दाम जान सके। यदि सब माल इस प्रकार न दर्शाया जा सके तो केवल नमूने मात्र को ही वहाँ सजाया जाना चाहिये।

२—कभी कभी ऐसे मालों की झाड़ बिक्री (Clearance

sale) भी घोषित करते रहना चाहिये, और यदि इस प्रकार का माल अधिक निकलता रहताहो तो झाड़ बिक्री की एक तिथि भी निश्चित कर देना चाहिये ताकि लोग उसका इन्तज़ार करें। हर हालत में ऐसा करने की अच्छे प्रकार से घोषणा करना जरूरी है।

३—यदि हो सके तो दूसरे माल के साथ जुट बना कर बेचे। दोनों प्रकार के माल के जुट की कुछ रियायती कीमत नियत कर दें या एक बढ़िया एक घटिया मिला कर बेचे।

४—यदि माल बेमेल होने के कारण नहीं बिक रहा है तो उसको ऐसे व्यापारी के हाथ बेचने का यत्न करे जिसके यहाँ वह मेल से बिक सके।

५—किसी दूसरे दूकानदार अथवा फेरी वालों के हाथ उसको बेच डाले।

६—नीलाम करने वालों के सुपुर्द कर दे।

(१३) कारखाने सम्बन्धी विचार—

माल बेचने सम्बन्धी उपरोक्त विचार अधिकांश रूप में दूकान पर रखकर माल बेचने की रीति पर प्रकट किये गये हैं। कारखाने के बने माल को बेचने के बारे में वह बहुत कुछ लागू नहीं होते। एक कारखानेदार को अपना बना माल बेचने के लिये यह जरूरी है कि वह उसकी माँग पैदा करे और उसको दूकानदारों अथवा कमीशन एजन्टों द्वारा बेचने का यत्न करे।

दूकानदारों अथवा एजन्टों का कर्त्तव्य यह नहीं है कि वह उसके माल की माँग पैदा करें। उनके लिये तो इतना ही काफ़ी है कि वह अपना धन और पुरुषार्थ लगाकर उसे बेचने की व्यवस्था करें। बेचने में उन्हें सुविधा प्रदान करना कारखानेदार अथवा उसके विक्रेता विभाग का काम है। यह वह नीचे लिखे उपाय व्यवहार में लाकर कर सकता है:—

१—पोस्टर, पैम्फ़लेट, प्लेकार्ड, हैन्डबिल, कलेन्डर आदि विज्ञापन सामग्री छपवा कर और उन्हें बटवा कर या लगवा कर।

२—बड़े बड़े बोर्ड या होर्डिंग रास्ते के प्रमुख स्थानों पर लगवाकर, या छोटे छोटे एनामिल आदि के बोर्ड लगवा कर।

३—दीवालों पर या चलती फिरती गाड़ियों आदि पर लिखवा कर।

४—समाचार पत्रों में विज्ञापन देकर।

५—नुमाइशों आदि में प्रदर्शिनी करके, अथवा घोषणा के साथ नमूने बटवा कर।

६—सिनेमा स्लाइड अथवा रात को बिजली द्वारा प्रमुख स्थानों पर घोषणा करके।

७—अपना एक वैतनिक घूमने वाला प्रतिनिधि रख कर जो कि प्रचार का बन्दोवस्त करे और साथ साथ दूकानदारों से मिल

कर उन्हें नमूने आदि दिखाकर माल बिकवाने की भी व्यवस्था करे। देखने में प्रायः आता है कि एक कारखानेदार को माल बनवाने के इतने झंझट लगे रहते हैं कि उसको बेचने के उपाय सोचने या करने में बड़ी बाधा मालूम होती है। इसलिए उसका तो यही एक मुख्य कर्तव्य होना चाहिये कि उसका माल अच्छे प्रकार का बने और उसकी रूप रेखा में उन्नति होती रहे या वह नये प्रकार का बने जिससे कि वह उसी माल के और कारखानों से किसी प्रकार पीछे न रहे, और उसका बना माल बाज़ार में कदर के साथ बिके। ऐसी व्यवस्था तब ही हो सकती है जब कि जितना माल उसके यहाँ बने, वह सब किसी एक मुख्य विक्रेता या कमीशन एजन्टों द्वारा बिकवाया जाय, या उसको बेचने का कारखाने में ही एक अलग विभाग हो जिसका काम केवल माल को बेचने का हो और माल की क्वालटी में उन्नति के सुझाव देना हो। बाजार में जिस प्रकार के माल की खपत हो वैसा ही बनवाने में कारखानेदार तथा उसके बिक्री विभाग की सफलता है। यदि वह ऐसा माल बनवा लेता है जिसकी मांग या खपत बाजार में न हुई तो उसको बहुत घाटा होने का डर है। क्योंकि ऐसे माल में रुपया फंस जाता है जिसके कारण कारखाने को चलाना कठिन हो जा सकता है। किसी दशा में भी अपनी क्वालिटी नहीं बिगाड़ना चाहिये, क्योंकि इससे जो नुकसान होता है वह स्थाई होकर कारखाने का नाम बदनाम करके उसे नष्ट कर देता है।

कारखानेदार के लिये इतना ही काफ़ी नहीं है कि वह अपने यहाँ की मूल्य सूची अथवा अन्य विज्ञापन सामग्री छपवाता या बनवाता रहे। उसके बितरण करने की ओर भी उसे पूरा ध्यान देना चाहिये। यह कार्य जितनी सावधानी और तत्परता के साथ होगा उतना ही माल की खपत बढ़ेगी। इसके अतिरिक्त उसके प्रतिनिधि भी दूकानदारों के पास बराबर पहुँचते रहना चाहिये ताकि माल के आर्डर देने में दूकानदारों को सुविधा हो और उनके सुझाव या उसको बेचने में उनकी कठिनाइयों की रिपोर्ट भी मिलती रहे। काम बढ़ने पर बड़े-बड़े नगरों मे स्थाई बिक्रेता अथवा Sales Depot भी नियत करना चाहिये ताकि यदि कोई व्यापारी एक मुश्त अधिक माल न मंगवा सके या माल मँगवा कर उसकी बिल्टी छुड़ाने में अड़चन डाले तो उसका प्रबन्ध आसानी से किया जा सके। कभी-कभी अन्य विक्रेता या एजन्सी का काम करने वाले एक निश्चित स्थान या प्रान्त आदि की सोल-एजन्सी के लिये इच्छा प्रकट करते हैं। इसका यह मतलब है कि जो कुछ माल उस हिस्से मे बिके, चाहे सीधा या उसकी मारफ़त, उसके कुल अंश पर वह अपनी कमीशन के भागी हो जायेंगे। ऐसी शर्त उसी दशा में मंजूर करनी चाहिये यदि वह एक निर्धारित कम से कम बिक्री के लिये बाध्य हों। जब तक वह ऐसा न कर सकें उनके साथ इस प्रकार के बन्धन में नहीं पड़ना चाहिये। स्थानीय एजन्सी का काम उसी दूकानदार को देना चाहिये जिसके यहाँ इसके लिए विशेष प्रबन्ध हो.

उसका प्रतिनिधि आर्डर लेने बराबर जाता हो और उसके यहाँ की सूची-माल बराबर निकलती रहती हो जिसमें कि वह तुम्हारे माल को भी "एजन्सी का माल" घोषित करके प्रकाशित करता रहे। यदि ऐसा नहीं हो सकता लेकिन कोई न कोई स्थानीय विक्रेता नियत करना अनिवार्य हो तो उसके ऊपर निर्भर न रह कर अपना एजन्ट या प्रतिनिधि भी बराबर वहाँ भेजते रहना चाहिये। हर हालत में यह जरूरी है कि बिना कुछ दिन आज़-माए किसी से अधिक दिन के लिए कोई बन्धन या इकरारनामा नहीं करना चाहिये। शुरू में जो इकरार हो वह थोड़े ही समय के लिये होना चाहिये, बाद में आवश्यकता और अनुभव के अनुसार उसे बढ़ाते जाना चाहिये।

माल बेचने के लिये प्रायः एजन्टों की जरूरत होती है। एजन्ट ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो अच्छे चाल चलन, अच्छी पोज़ी-शन (स्थिति) का तथा अनुभवी हो। ऐसा न हो कि न तो उसको उस लाइन का जिसका उसे काम सौंपा जाय कोई अनुभव हो और न उसका उस माल के दूकानदारों में कोई मानदान या परिचय हो। उसको कमीशन केवल उन्हीं आर्डरों पर देना वाजिब होगा जो उसकी मारफ़त आये हों और जिनका रुपया प्राप्त हो गया हो। आर्डर के साथ यदि एडवाँस लेने की जरूरत हो तो केवल चिक द्वारा उसकी एक सीमा नियत करके कारखाने के नाम से प्राप्त करने का अधिकार उसे देना चाहिये। माल लौटाने अथवा उसको रद्दी करने का अधिकार बहुत बंधेज के साथ उसे देना चाहिये।

यह अधिकार केवल कारखाने के बिक्री विभाग के व्यवस्थापक का है और वह भी अधिकाँश मालिक की आज्ञानुसार। जहाँ प्रतिनिधि या एजन्ट जाय उसे वहाँ का प्रकाशन का प्रबन्ध या देखभाल का काम भी जरूर सौंपना चाहिये।

(१४) डाक द्वारा माल बेचना (Mail order business)—

इस प्रकार का व्यापार केवल उन्हीं चीजों में सफलतापूर्वक हो सकता है जो अधिक उपयोगी हों और उनका मूल्य भी कम हो, लेकिन मुनाफ़ा कम न हो। ऐसी वस्तुओं का विज्ञापन सुविधानुसार हर प्रकार से लगातार होते रहना चाहिये। शुरू में विज्ञापन में खर्च अधिक होगा और माँगे कम आवेंगी क्योंकि डाक से माल मँगवाने वालों को इस बात का विचार करना पड़ता है कि उसमें किसी प्रकार का धोखा तो नहीं है, जैसा कि प्रायः झूठे विज्ञापन देने वालो से होता रहता है। आजमाइश के बाद जब उन्हें माल का अनुभव हो जाता है तो वह दूसरों से भी उसका जिक्र करते है और स्वयं भी मँगवाते रहते हैं। इस प्रकार आर्डर सदा आते रहते हैं और मुनाफ़ा विशेष होने लगता है। साथ साथ उस माल की स्थानीय बिक्री भी बढ़ती है जिससे कि दुगना लाभ होता है। इस प्रकार के माल के लिये यह जरूरी नहीं है कि वह अपने यहाँ के और माल से मिलता जुलता या उसी लाइन का हो, क्योंकि दूर बैठे होने के कारण उसके खरीदारों पर उसके मेल अथवा बेमेल होने का कोई प्रभाव नहीं

पड़ता। हाँ उसे इस बात से अधिक संतोष होता है कि वह उसे बनाने वाले अथवा उसके मुख्य विक्रेता से ही खरीद रहा है।

(१५) बिका माल वापस लेना—

कुछ दूकानदार बिके माल को वापस लेने में प्रायः बहुत संकोच करते हैं, और जहाँ तक हो सकता है, किसी न किसी बहाने से टाल देते हैं या इन्कार कर देते हैं। वह यह नहीं समझते कि ग्राहक पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, और उसके इस प्रकार के व्यवहार से वह भविष्य में अपना सम्बन्ध उससे जारी रखने के लिये उत्साहित होगा, या सदा के लिये उसे छोड़ देगा। प्रायः सभी प्रकार के माल के बारे में कहा जा सकता है कि हरएक दूकानदार अथवा कारखानेदार को ऐसे अवसरों से लाभ उठाना चाहिये। कोई ग्राहक उसके माल की त्रुटि बताता हो यह इस बात से कहीं अच्छा है कि वह त्रुटि उससे न कह कर दूसरों से कहे, जिससे कि दूकानदार को मालूम भी न पड़े और उस पर एक-तरफ़ः डिग्री होती रहे, जिससे कि उसकी साख में धब्बा लगता जाय। इसलिए हर एक व्यापारी की यह अभिलाषा होनी चाहिये कि यदि ग्राहक उसके माल या व्यवहार से सन्तुष्ट है तो वह उसका जिक्र औरों से करे, लेकिन यदि ऐसा नहीं है तो वह अपने असन्तोष का कारण उससे कहे। माल में खराबी या उसके अनुचित मूल्य का जिक्र दूकानदार से करने में अधिकाँश ग्राहक संकोच करते हैं। ऐसा करने की बजाय वह उससे अपना व्ययहार कम कर देते हैं। लेकिन यदि वह उससे

कहते हैं तो दूकानदार को उनका कृतज्ञता पूर्वक समाधान करने की चेष्टा करनी चाहिये। ऐसा करने से उसे अपनी त्रुटियों अथवा अपने माल के बारे में शिकायत मालूम करने का अवसर मिलता है, जिसका कि उसे सदुपयोग करना चाहिये, ताकि उसके व्यापार की उन्नति होती रहे।

कभी कभी ग्राहक इस कारण से भी माल वापस करता है कि वह उसकी जरूरत से अधिक सिद्ध हुआ है, जैसा कि विवाह आदि के अवसरों पर होता है। ऐसे अवसरों पर यदि पहले से इस बात को तय कर लिया हो अथवा बिना ऐसा किये ही बचे माल को लौटा लेने में कोई अड़चन न पैदा करनी चाहिये। बशर्ते कि वह ज्यों का त्यों बिना उपयोग में लाये लौटाया जा रहा हो। या इस बीच में उसके दाम कम न हो गये हों, या मौसिमी माल की दशा में उसका मौसम न बीत गया हो। ऐसी दशा में यदि माल वापस लेना पड़े तो उसे केवल उचित दामों अथवा शर्तों के साथ लेना चाहिये, जिससे कि उसके कारण घाटा न होने पावे।

कभी कभी दूकानदार कुछ माल लेकर उसे बेचने में असमर्थ हो जाता है। ऐसी दशा में भी जिस थोक दूकानदार अथवा कारखानेदार से उसने वह लिया हो, उसे लौटा लेने अथवा अन्य प्रकार से उसे बिकवा देने की सुविधा करके उसके साथ अपनी पूर्ण सहानुभूति अथवा सहयोग वर्तना चाहिये, और यदि वह नमूने अनुसार न हो अथवा रास्ते में खराब हो गया हो या टूट-

फूट गया हो तो उसके बारे में एजन्ट द्वारा जाँच करा कर उसका निपटारा करना चाहिये। ऐसी दशा में यह देख लेने की जरूरत है कि दोष किसका है। यदि माल नमूने के अनुसार नहीं है तो उसे बिना किसी अड़चन डाले वापस कर लेना चाहिये, यदि रेल आदि जिम्मेदार है तो उसका नुकसान सम्बन्धी सार्टीफिकेट मंगा कर देखना चाहिये कि रेल जिम्मेदार है या नहीं, अगर है तो उससे हरजाना वसूल करने के लिये यत्न करना चाहिये। माल वापस आने पर यह देखना जरूरी होगा कि उसमें किसी प्रकार की गड़बड़ तो किसी ने नहीं कर दी। यदि ऐसा माल का रुपया लौटाना हो तो पहले उसे मंगवा कर उसका निरीक्षण कर लेना चाहिये।

हर हालत में यह भी देखना जरूरी है कि जिस माल को लौटाना है वह अपने ही यहाँ से खरीदा हुआ है अथवा किसी अन्य के यहाँ का। यदि मोहर बन्द माल है तो भी यह देखना चाहिये कि उसकी मोहर में किसी प्रकार का छल तो नहीं किया गया है। इस प्रकार से हर तरह से सन्तुष्ट हो जाने पर कोई कारण नहीं है कि माल को बदल न दिया जाय, अथवा उसको वापस करने वाला यदि रुपया चाहता है तो उचित खर्चे आदि काट कर उसका रुपया वापस न कर दिया जाय। यद्यपि प्रयत्न यही होना चाहिये कि जहाँ तक हो सके बदले में दूसरा ही माल दिया जाय, ताकि ग्राहक का व्यवहार जारी रहे।

यदि ऐसे कारणों से जैसे मौसिमी माल मौसिम बीत जाने

पर कोई वापस करना चाहे, केवल इस विचार से कि उसमें लगा धन उतार कर वह दूसरे काम में लग सके। यह कारण तो उसको वापस लेने का व्यवहारिक दृष्टि से उचित नहीं है। क्योंकि जिस प्रकार लेने वाले का धन उसमें फंसने का डर है उसी प्रकार बेचने या बनाने वाले का भी बेकार उसमें धन फंसने का डर है, जिसके लिये कि वह जिम्मेदार अब नहीं रहा। लेने वाले का ही कर्त्तव्य था कि उसके बिक्री के मौसम समाप्त होने के पेश्तर उसे बेच कर अथवा सुविधा और शर्त अनुसार लौटा कर उसे खत्म कर देता। यदि वह ऐसा नहीं कर सका तो इसका वह स्वयं ही जिम्मेवार है।

(१६) व्यापारी की स्टेशनरी--

कुछ व्यापारियों का ऐसा मत होता है कि यदि उन्हें ५००० नोटिस अथवा बिल-फ़ार्म आदि छपवाने हैं और वह २० रु० में छप सकते हैं तो ३० रु० उसके लिए अच्छे कागज़ और सुन्दर छपाई पर क्यों व्यय किये जायँ। इसलिए वह २० रु० में ही उन्हें छपवाकर अपना काम चलाने में अच्छाई समझते हैं। उनको इस बात का ध्यान नहीं होता कि वह जो एकर करके लोगों के पास पहुँचेंगे तो वह उसके निकालने वाले कारखाने या दूकान के बड़े छोटे या अच्छे होने या न होने के भी सूचक होंगे। लोग प्रायः ऐसे परचे तब ही पढ़ना पसन्द करते हैं जब कि वह सुन्दर प्रतीत होते हों और अच्छे प्रकार से छापे या लिखे गये हों, जिससे कि उनके पढ़ने में किसी प्रकार का बोझ

न पड़े और वह आकर्षित भी हों। अच्छे कागज पर अच्छी छपाई होना अच्छी लिबास की भाँति प्रतिष्ठा सूचक होता है, इसलिये उसकी आकर्षण शक्ति बढ़ जाती है और वह आदर के साथ पढ़ा जाता है। इसलिये यह जरूरी है कि कारोबार सम्बन्धी जो भी छपाई कराई जाय, चाहे वह चिट्ठी पत्री का काग़ज़ हो या बिलफ़ार्म अथवा नोटिस या सूची-पत्र हो, उसको अच्छे काग़ज़ पर अच्छे ही छापेखाने से छपवाना चाहिये और उस पर जो हाथ से लिखाई की जाय अथवा टाईप-राइटर से छापा जाय वह भी बहुत सुन्दरता और सफ़ाई के साथ अच्छी स्याही से लिखना या छापना चाहिये।

(१६) नमूने, कलेन्डर आदि—

उपरोक्त साधनों के अतिरिक्त यह भी जरूरी है कि ग्राहकों को अपनी दूकान या अपने यहाँ के बने माल से परिचित रखने के लिये कभी कभी अवसर के अनुसार उनके पास कुछ नई चीजों के नमूने, कलेन्डर या नये वर्ष की बधाई सूचक छपे पत्र आदि भेजते रहना चाहिये। इससे ग्राहक अथवा दूकानदार दोनों का मित्रभाव उत्पन्न होता है, जिससे कि रोज़गार की उन्नति होती रहती है और ग्राहक प्रसन्न रहते हैं।

अध्याय ४

बिक्री बढ़ाने के उपाय

(१) साधारण उपाय--

इस देश की गरीबी आजकल इतनी बढ़ी हुई है कि अधिकांश लोगों के पास पेट भरने और तन ढकने के लिये भी पर्याप्त धन नही है, तो फिर वह जीवन की अन्य आवश्यक वस्तुओं के लिये पैसा कहाँ से लावें। ऐसी दशा में यहाँ व्यापारिक अथवा औद्योगिक उन्नति करना बड़ा कठिन हो रहा है। इसीलिये वे कम से कम जीवन सामग्री से अपना काम चलाने को विवश होते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि खाद्य पदार्थ या तन ढकने की जरूरी वस्तुओं के अतिरिक्त अन्य चीजों की बिक्री या खपत बढ़ने नहीं पाती, ऐसी दशा में बेकारी के कारण लोगों की खरीदने की शक्ति और भी घट जाती है।

इसलिये सबसे आवश्यक उपाय देश के व्यापार तथा उद्योग बढ़ाने का यह है कि उसकी आर्थिक दशा पहले सुधारी जावे। किन्तु यह तभी हो सकता है जब कि इसकी हर प्रकार की उपज बढ़ाई जावे और जो वस्तुये बनाई जावें वह विदेशी वस्तुओं की अपेक्षा सस्ती और अच्छी हो ताकि उनकी खपत उनके मुकाबले

में बढ़े। वह कार्य अधिकांश सरकार या किसी जनसमूह का नहीं है। यह तो बहुत अंश तक उन व्यक्तियों का है जो अपना धन बुद्धि या शारीरिक परिश्रम इस ओर लगाये हुये हैं। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि जो जिस कार्य में लगा हुआ है उसे चाहिये कि वह उसे अधिक से अधिक परिश्रम व मन लगाकर करे, जिससे कि अधिक से अधिक और अच्छी से अच्छी वस्तुएँ सर्वसाधारण को कम से कम मूल्य में प्राप्त हो सकें और वे अन्य देशों में भी भेजी जा सकें जिससे कि वहाँ के धनी लोग उनको व्यवहार में ला सकें और इस प्रकार उनका धन इस देश में आकर फैले और उससे देश वासियों की आर्थिक दशा सुधरे, और साथ साथ यहाँ का धन भी बाहर जाने से रुके। देश की आर्थिक दशा सुधारने का दूसरा कोई उपाय नहीं है। ऐसा करना हर एक देशवासी का, जो कि उद्योग धन्धों या कृषि में लगा हुआ है परम धर्म है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह देश की स्वतन्त्रता का मूल्य नहीं चुकाता और न ही वह उसका अधिकारी हो सकता है। देखने में आता है कि मिल के मज़दूर कभी कभी बड़ी संख्या में काम छोड़कर बैठ जाते हैं इससे देश की जो आर्थिक हानि होती है वह किसी प्रकार पूरी नहीं की जा सकती। हर एक स्वतंत्र देशवासी को ऐसी बातों से घृणा होनी चाहिये, विशेषकर ऐसी अवस्था में जब कि स्वतन्त्रता नई प्राप्त हुई हो। इसी प्रकार जो लोग कृषि अथवा अन्य उपजाऊ कार्यों में लगे हुए हैं, उनका भी यही कर्तव्य है कि वे

अधिक से अधिक उपज पैदा करने का यत्न करें। निश्चित रूप से इस देश में तीन ऋतुएँ अपने अपने समय पर होती हैं। फिर कोई कारण नहीं कि उनमे थोड़ी बहुत गड़बड़ी हो जाने पर भी हम उनसे पूरा पूरा लाभ न उठा सकें। इसके अतिरिक्त यहां की जलवायु तथा भूमि भी विभिन्न प्रकार की है। और वह अधिकांश उपजाऊ है। इसलिए यहाँ की उपज तो अथाह होनी चाहिये। देखने में आता है कि कोई कोई किसान अपने परिश्रम तथा ज्ञान के कारण औसत उपज से छः व सात गुना उपज पैदा कर लेते हैं। इसी प्रकार यदि हर एक कृषक की उपज अधिक होने लगे तो हमारे देशवासियों की आर्थिक स्थिति देखते देखते कुछ से कुछ हो जाय। परन्तु जब तक यह नहीं होता तब तक न तो कोई व्यापार बढ़ सकता है न लोगों की व्यय करने की शक्ति ही बढ़ सकती है। इसलिये जो जिस कार्य में लगा हुआ है वह उसे अच्छी प्रकार से यत्न पूर्वक परिश्रम से करे। यदि वह ऐसा करता है, तो अपने साथ-साथ वह देश की भी भलाई करता है। दूसरा ऐसा करता है या नहीं, अथवा उसका सहयोग देता है या नहीं, इसकी उसे परवाह नहीं होनी चाहिये। क्योंकि प्रकृति का नियम उसी की सहायता करना है जो अपनी सहायता आप करता हो। इस प्रकार कार्य करने से वह अपनी सहायता तथा उन्नति के साथ दूसरों के लिये अच्छा उदाहरण भी बनता है। जो बात एक किसान के लिए लागू होती है वही अन्य उद्योगों में लगे हुये लोगों के लिये भी लागू होती है।

व्यक्तिगत उन्नति के साथ साथ यह भी जरूरी है कि सरकार से देशवासियों को हर प्रकार की सुविधायें तथा प्रोत्साहन मिलते रहें। बेकार की रुकावटें पैदा न की जावें और कृषकों तथा श्रमजीवियों की पैदावार को भली प्रकार फैलाने तथा दूसरे देशों में भेजने में उनकी सब प्रकार से सहायता करे। मिल मालिकों को भी चाहिये कि उनके यहाँ लगे श्रमजीवियों को अपना ही एक महत्वपूर्ण अंग समझ कर उन्हें उचित रूप से पुरस्कृत तथा उत्साहित करते रहें, क्योंकि उन्हीं के परिश्रम के फल स्वरूप वह अपने धन तथा मस्तिष्क का उपयोग करके अधिक और अच्छा माल पैदा कर सकते हैं।

उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त सरकार के द्वारा लगाये अनुचित प्रतिबंध भी पैदावार के बढ़ाने में बहुत बाधक सिद्ध होते हैं। अच्छी सरकार वही है जो जनता की स्वतन्त्र कार्य चेष्टा में कम से कम हस्तक्षेप करे। और अधिक से अधिक पैदा करने के लिये उसे केवल उत्साहित ही नहीं करती रहे बल्कि उसकी समस्याओं को जानने और उन्हें हल करने की व्यवस्था भी करती रहे।

जिस प्रकार देश की आर्थिक उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि अधिक से अधिक चीज़ें बनाई या उपजाई जावें उसी प्रकार यह भी अत्यन्त जरूरी है कि जो माल बने उसकी उपभोक्ताओं में खपत भी होती जावे। यह कार्य उसको बनाने या पैदा करने के कार्य की अपेक्षा बहुत कठिन है क्योंकि इसमें उसे

अन्य बेचने वालों से पारस्परिक संघर्ष करना होता है और इस कार्य में पूरी चतुराई तथा अनुभव से काम लेना पड़ता है, तथा तरह-तरह के उपाय करने पड़ते हैं। अधिक बिक्री के उपायों को काम में लाते रहना हरएक दूकानदार का एक बहुत जरूरी कार्य है। इन उपायों को जानना और काम में लाना यह काम उसको सदा ही करते रहना चाहिये।

(२) विज्ञापन की आवश्यकता और विधि—

बिक्री बढ़ाने का एक मात्र उपाय अपने यहाँ बिकने वाली मुख्य-मुख्य चीजों को उनके उपभोक्ताओं की निगाह में बार-बार लाना है। इसी को विज्ञापन कहते हैं।

एक व्यापारी के व्यापार बढ़ाने में विज्ञापन वही असर रखता है जो कि खाद एक कृषक की उपज बढ़ाने में, बर्शतेकि वह ठीक-ठीक रीति तथा अवसर अनुसार किया जावे। समाचार-पत्रों का विज्ञापन अधिकाँश बहुत महँगा होता है, इसलिये उसको तभी शुरू करना चाहिये जब कि भिन्न-भिन्न स्थानों में बिकने वाली वस्तु का विज्ञापन देना हो और उसे बराबर जारी रखना हो, कुछ दिन देकर फिर बन्द कर देने से विशेष लाभ नहीं होता।

विज्ञापन के कई प्रकार हैं जो कि नीचे लिखे जाते हैं :—

१—समाचार पत्रों में छपवाकर।

२—हैन्डबिल, नोटिस, सूचीपत्र, कलेन्डर आदि निकालकर।

३—चलती-फिरती गाड़ियों, बसों आदि पर लिखवाकर।

४—सड़कों, स्टेशनों आदि पर बोर्ड या होर्डिङ्ग लगवाकर।

५—दीवारों आदि पर लिखवाकर या पोस्टर चिपकवाकर।

६—रात्रि में बिजली द्वारा प्रकाशित करवा कर।

विज्ञापन जारी करने में इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिये कि जिस माल का विज्ञापन द्वारा प्रचार किया जावे वह उत्तम प्रकार का होना चाहिये, क्योंकि विज्ञापन से प्रभावित होकर ग्राहक एक बार उसे ले जा सकता है, किन्तु यदि वह माल अच्छा नहीं होगा तो वह उसे दुबारा नहीं लेगा और विज्ञापन में लगा धन व श्रम दोनों ही बेकार सिद्ध होंगे। विज्ञापन किस चीज़ का किस प्रकार से किया जावे यह अधिकांश माल और उस पर मुनाफ़े की दर पर ही निर्भर है। पर यह जरूरी है कि बाजार में चीज़ पहुँचने के साथ ही उसके विज्ञापन की व्यवस्था हो जानी चाहिए। यह विज्ञापन कुछ बाहरी तरीकों पर और कुछ उसके विक्रेताओं द्वारा होते रहना चाहिये। बाजार में चीज़ पहुँचने के पहले से ही विज्ञापन की व्यवस्था केवल उन्हीं दशाओं में होनी जरूरी है जब कि बहुत बड़ा काम करना हो अथवा केवल एक निश्चित समय के लिये ही कहीं उसके बेचने की व्यवस्था की गई हो, जैसे नुमायशों आदि के अवसरों पर। विज्ञापन के साथ ही एजेन्टों को माल के नमूने आदि लेकर दूकानदारों के पास आर्डर लेने और उनको माल पहुँचाने का प्रबन्ध भी हो जाना चाहिये ताकि वह उसकी

प्रदर्शनी भी अपने यहाँ करना शुरू कर दें। यदि एजन्ट न भेजा जा सके तो नमूने और विवरण पत्र डाक द्वारा दूकानदारों के पास भेज देना चाहिये ताकि वे उसका पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कर उसे मँगवाकर अपने यहाँ बेचना शुरू कर सकें।

किस प्रकार से विज्ञापन बनाया या जारी किया जावे यह एक कठिन विषय है। इस बात को इसके विशेषज्ञ ही अच्छी रीति से कर सकते हैं। इसलिए जहाँ तक हो सके उनकी सहायता लेकर ही यह काम करना चाहिये। समाचार पत्रों में विज्ञापन देते समय नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :—

१—किस समाचार पत्र में विज्ञापन देना चाहिये जिससे कि अधिक से अधिक उसके उपभोक्ताओं की उस पर निगाह पड़े और उसके लिये आर्डर आवें।

२—कितने स्थान में और किस प्रकार से तथा कब तक उस पत्र में वह विज्ञापन निकाला जावे।

३—उसका विषय क्या और कैसा हो।

यदि नये बाजार में माल चलाना है तो उसका विषय अन्य प्रकार का होगा लेकिन यदि माल चल रहा है और उसकी खपत बढ़ानी है तो वह दूसरे प्रकार का होगा।

हर हालत में यह जरूरी है कि जो घोषणा की जावे वह बार बार होती रहे और किसी न किसी रूप में चित्त आकर्षित करती रहे। यदि समाचार पत्रों में छपवाकर घोषणा करना है तो

उसके लिये कुछ स्थान नियत कर उसका इकरारनामा कर लेना चाहिये। कम से कम ५० इंच स्थान के लिये अधिकांश समाचार पत्र कुछ रियायती दर से विज्ञापन की छपाई लेते हैं जो कि एक वर्ष के अन्दर तक उपयोग में लाई जा सकती है।

किस समाचार पत्र में विज्ञापन दिया जावे यह इस बात पर निर्भर है कि हम जिस चीज़ का विज्ञापन देना चाहते हैं वह किन लोगों और कहाँ के रहने वालों के उपयोग की है। यदि वह अधिकांश उसी शहर या आस पास के गाँव आदि में बिकने की चीज़ है तो उनमें प्रचलित स्थानीय समाचार पत्र में, वरना बाहरी पत्र जो उस चीज़ के उपभोक्ताओं में प्रचलित हो उसी में उसका विज्ञापन देना चाहिये।

समाचार पत्रों में विज्ञापन देते समय नीचे लिखी बातों का भी पूरा ध्यान रखना चाहियेः—

१—विज्ञापन में कम से कम भाषा लिखी जावे और अधिक से अधिक खाली स्थान छूटे।

२—उसको आकर्षक बनाने के लिये उसमें एक सुन्दर चित्र का ब्लाक भी हो या उसकी भाषा का ही आकर्षक रूप में ब्लाक बनवाया जावे जिसकी छपाई गाढ़ी हो और चित्र तथा अक्षर साफ हों।

३—उसके शीर्षक की भाषा ऐसी हो जिसे देखकर उसको पढ़ने की अभिलाषा जागरित हो तथा उसको पढ़कर कोई भी उसे अन्त तक पढ़ता चला जावे।

४—समय समय पर भाषा आदि मे न्यूनता करते रहना चाहिये।

५—यत्न यह होना चाहिये कि वह ऐसे स्थान पर निकले कि अधिक से अधिक लोगों की निगाह में समाचार पढ़ने के सिलसिले मे अनायास आता रहे। खास स्थान के लिये समाचार पत्र कुछ विशेष दाम चार्ज करते है। व्यवस्थानुसार या कभी कभी ऐसे स्थानों से भी जरूर लाभ उठाना चाहिये। यदि स्थानीय लोगों मे किसी चीज़ का प्रचार करना हो तो यत्न यह होना चाहिये कि स्थानीय समाचार के सिलसिले मे ही उसका विज्ञापन निकले।

विज्ञापन की भाषा जहाँ तक हो सके रोचक होनी चाहिये और इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि हर एक बात जो उसमे लिखी जावे ठीक हो। जहाँ तक हो सके अपने विज्ञापन के रूप को अन्य विज्ञापनों से जो उस समाचार पत्र मे प्रकाशित होते हों भिन्न रूप का बनाने की चेष्टा करनी चाहिये जिससे कि वह विशेष आकर्षक हो सके। अपना माल अच्छा होने की दलील जो लिखी जावे, वह ऐसी होनी चाहिये कि उसको पढ़ने वाला तत्काल यकीन कर ले और उस पर मुग्ध होकर उसे उपयोग मे लाने का संकल्प कर ले। उसे यह बताना चाहिये कि उसे क्यों कोई चीज़ तुम्हारी ही खरीदनी चाहिये, बजाय उस चीज़ के जिसे वह सदा प्रयोग मे लाता रहा है और जिसको वह अच्छी तरह जानता है। अपने माल या अपने यहाँ की मुख्य मुख्य

विशेषताओं का अपने विज्ञापन में संक्षेप से जिक्र करो, यदि तुम समझते हो कि तुम्हारी चीज़ बढ़िया होते हुये भी दाम में कम है तो उसके दाम का भी अपने विज्ञापन में ज़िक्र कर दो। इस तरह नये ग्राहक बनते हैं।

हर एक विज्ञापन जो समाचार पत्रों में देना हो उसे पहले इस रूप में लिखो जिससे उपरोक्त विचार उसमें पूर्ण रूप से आ जावें। तब फिर उन्हें संक्षेप रूप में इस प्रकार से ले आओ कि जैसे वह एक दूर देश को जाने वाला तार हो, जहाँ कि एक एक शब्द का कई कई रुपया दाम देना होता है, और जहाँ भेजने में लिखाई के स्थान को भी पाबन्दी है। फिर उसे इस विचार से पढ़ो कि जैसे तुम उसमें वर्णन की हुई चीज़ से बिलकुल अनभिज्ञ हो और उसके लेने की इच्छा पहले से नहीं रखते, फिर भी क्योंकर उसे लेने में प्रेरित हो सकते हो। यदि वह विज्ञापन दवाई का है तो पहला आकर्षण शब्द जो उसमें नज़र पड़े वह उस बीमारी का हो जिसके लिए वह गुणकारी होगी। इसी प्रकार यदि कपड़े का विज्ञापन है तो पहले उसकी विशेषता का ज़िक्र होना चाहिये। साथ साथ उसके ब्रान्ड का नाम भी आकर्षक रूप में प्रदर्शित होना चाहिए। अधिक विख्यात माल के ब्रान्ड के साथ चीज़ का नाम भी होना बड़ा लाभदायक होता है जैसे 'लाल इमली के कम्बल' 'फ़्लेक्स के जूते' इत्यादि।

विज्ञापन की भाषा बनाने में नीचे लिखी बातों का ख्याल भी रखना जरूरी है :—

१—उसमें साधारण बोल चाल के मनोहर शब्दों का प्रयोग हो।

२—उसके वाक्य छोटे हों।

३—इतनी प्रशंसा न करो जो झूठी साबित हो और लेने वाले को धोखा जान पड़े।

४—कोई अश्लील शब्द अथवा चित्र का प्रयोग न करो।

५—तुम्हारा माल किन बातों में औरों से अच्छा है सो भी लिखो, पर ऐसा करने में दूसरे के माल आदि का ज़िक्र न करो।

६—अपने मुख्य स्थानीय विक्रेताओं अथवा एजन्ट का नाम व पता भी लिखो।

यदि किसी मुख्य स्थान या नगर में ही अपने किसी माल की घोषणा करनी हो तो कभी कभी स्थानीय समाचार पत्रों मे जो अधिक पढ़े जाते हों उन्हें प्रकाशित करके या हैन्डबिल आदि निकालकर या दूकान के सामने बोर्ड लगाकर या मुख्य मुख्य स्थानों में बड़े या छोटे बोर्ड लगाकर या दीवारों पर लिखवाकर अथवा पोस्टर लगवाकर सुन्दर रीति से करना चाहिये। बड़े बड़े नगरों मे बस आदि के बाहर व अन्दर लिखवाकर भी अपने यहाँ के माल और उसकी विशेषता प्रकाशित करते रहना चाहिये, जिससे कि दूकान या कारखाने का नाम अथवा ब्रान्ड का प्रचार होकर वह विख्यात हो जावे, क्योंकि विख्यात होना ही उसको चलाने में बहुत सहायक होता है। यदि अपने यहाँ का बना या एजेन्सी का माल थोक रूप से फुटकर विक्रेताओं के हाथ बेचना

हो तो उपरोक्त साधनों के अतिरिक्त मासिक रूप से व्योरे सहित उसकी मूल्य सूची भी निकालते रहना चाहिये।

हर हालत में विज्ञापन का खर्च पहले निश्चय करके उसके अनुकूल कुछ दिन के लिये एक योजना बना लेनी चाहिये, और फिर उसी के अनुसार काम शुरू करके उसके फल को जाँचते रहना चाहिये। जिस प्रकार से अधिक बिक्री हो उसी ओर अधिक ध्यान देना चाहिये ताकि रुपया व्यर्थ न व्यय हो। एक समय में एक ही स्थान या प्रान्त की ओर विशेष ध्यान देना अधिक सफलता देता है। सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि विज्ञापन बन्द कर देने से आगे के लिये व्यापार की उन्नति में बहुत बाधा पड़ती है, क्योंकि व्यापार कभी स्थिर नहीं रहता इसके मुक़ाबिले में नये नये ब्राण्ड तथा प्रतिवादी निकलते रहते हैं। यदि किसी कारण से एक व्यापारी या कारखानेदार पिछड़ जाता है तो दूसरा उसका स्थान मौका मिलने पर तुरन्त ले लेता है, जिससे कि उसे बहुत नुकसान होता है। ऐसी दशा में अधिक बेचने का एकमात्र उपाय यही है कि अपने माल को अच्छा और दूसरों की अपेक्षा कम दामवाला रखे और उसका प्रचार सदा करता रहे। अधिक मुनाफ़ा केवल उसी माल में लिया जा सकता है जिसमें प्रतिद्वन्दिता का डर न हो।

विविध प्रकार से प्रचार करने के अतिरिक्त एक कारखानेदार को एजेन्ट अथवा वितरणकर्ता द्वारा भी अपने माल का प्रचार करते रहना चाहिये। कभी कभी स्वयं भी विक्रेताओं से भेंट

करके उसके बारे में तथा अन्य नये प्रकार के उसी से मिलते जुलते माल की रिपोर्ट लेते रहना चाहिये, ताकि उसके सम्बन्ध में यदि कोई त्रुटि हो अथवा दूसरे के ब्रान्ड का माल अच्छा हो तो उसकी जानकारी होती रहे। इस प्रकार से अपने माल के बारे में दूसरों की राय और उसमें उन्नति के बहुत से सुझाव भी मिलते रहते हैं, जिनको कार्यान्वित करते रहने से सदा उन्नति होती रहती है।

(३) बाहर की माँग—

विज्ञापन द्वारा जब कोई पूछताछ का पत्र आवे अथवा सूचीपत्र मँगवाया जावे तो केवल सूचीपत्र या उस सम्बन्ध का पैम्फ़लेट (Pamphlet) भेजना ही पर्याप्त नहीं समझना चाहिये। उसके साथ पूछी हुई बात का उत्तर देते हुए पत्र भी अलग से लिखकर भेजना चाहिये। यह प्रत्यक्ष है कि डाक द्वारा पूछताछ करने वाला व्यक्ति अधिकांश रूप से अपनी वस्तुओं से आकर्षित हो चुका है। थोड़ी ही चेष्टा और करने से उसका आर्डर उस चीज़ के लिये प्राप्त हो जाना चाहिये। यदि जवाब न आवे तो कुछ दिन बाद एक याद दिलाने का पत्र भेजना चाहिये ताकि यदि सूचीपत्र न पहुँचा हो अथवा समय व्यतीत होने से उसकी चाहना उसके लिये कुछ डाँवाडोल हो गई हो तो उसमें फिर से जागृति होकर माल का आर्डर मिल सके। आर्डर आने पर माल भेजने में जरा भी देर नहीं होनी चाहिये क्योंकि ऐसा होने से आर्डर देने वाले की जरूरत यदि इस बीच में अन्य प्रकार से

पूरी हो जाती है तो वह उसे लेने से इनकार कर देता है, जिससे कि बड़ी हानि होती है। यदि आर्डर का माल भेजने में कुछ देर की संभावना हो तो आर्डर मिलते ही इस बात की सूचना दे देनी चाहिये, ताकि उसको इसका कारण मालूम हो जावे। यही कार्यवाही उस दशा में भी करनी चाहिये जब कि आर्डर में कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता हो। हर हालत में यदि माल को तुरन्त न रवाना किया जा सके तो आर्डर की पहुँच जरूर छपे रूप से भेज देनी चाहिये। इसके प्रभाव स्वरूप माल का वी० पी० लौटने की संभावना भी कम हो जाती है।

माल जो भेजा जाय उसके सम्बन्ध की विज्ञापन-सामग्री भी भेजनी चाहिये। यदि उपभोक्ता को माल जा रहा हो तो उसी प्रकार की अन्य वस्तुओं की सूची भेजनी चाहिये ताकि वह उनसे प्रभावित होकर और चीजों के आर्डर देने के लिये भी उत्साहित हो। इसी प्रकार यदि दूकानदार को माल जा रहा हो तो उसके साथ उसके सम्बन्ध की विज्ञापन-सामग्री, जैसे पोस्टर, डिस्पले-कार्ड, कलेन्डर, हैन्डबिल, मीमोबुक आदि जानी चाहिये, ताकि वह उनके द्वारा उस माल को सुविधापूर्वक बेच सके और जल्दी ही उसके लिये फिर आर्डर दे।

(४) पतों का रजिस्टर—

खरीदार चाहे दूकानदार हो अथवा उपभोक्ता उनमें जो भी विशेष ध्यान देने योग्य हों उनके पतों का एक रजिस्टर रखना हरएक व्यापारी के लिये आवश्यक है, ताकि भविष्य में उनके

साथ व्यवहार करने में सुविधा हो। इसके लिये एक या अधिक रजिस्टर नियत होने चाहियें जो कि नीचे लिखी श्रेणियों में विभाजित किए जा सकते हैं।

(अ) नगर के थोक दूकानदारों की सूची

(आ) ,, फुटकर ,, ,,

(इ) ,, उपभोक्ताओं की सूची

(ई) बाहर के दूकानदारों की सूची—(१) माल बेचने वालों की और (२) माल खरीदने वालों की।

(उ) ,, उपभोक्ताओं की सूची

उपरोक्त श्रेणियों में विभाजित पतों को इस रीति से लिखे कि एक हल्के के सब पते एक ही ठिकाने एकत्रित हों, और यदि किसी नाम या पते के साथ कोई विशेषता हो तो उसको भी किसी नोट द्वारा चिह्न से अंकित कर देना चाहिये, और उन्हीं लोगों को दर्ज करना चाहिये जिनसे व्यवहार जारी हो गया हो अथवा होने की सम्भावना हो।

सूची पत्र आदि भेजते समय हर पते के आगे उसके भेजने की तारीख दर्ज कर देना चाहिये और यह देखते रहना चाहिये कि कौन ग्राहक अपना सम्बन्ध जारी किये है और कौन नहीं। यदि बहुत दिनों से किसी ग्राहक की मांग नहीं आई हो और यह मालूम है कि वह ग्राहक बना रहना चाहिये या तो उसको एक पत्र लिखकर उसके चुप साधने का कारण मालूम करना चाहिये अथवा एजन्ट द्वारा कारण का पता लगाकर उचित

कार्यवाही करनी चाहिये। हर हालत में अपने ग्राहकों से बराबर सम्पर्क जारी रखना बहुत जरूरी है। पतों की सूची को सदा ठीक रखना चाहिये और उसमे नये पते जोड़ते रहना तथा ऐसे पते जो अब बेकार हो गये हैं छाँटते रहना चाहिये, ताकि जो सूचीपत्र, रेट लिस्ट, विक्री पत्र या कलेन्डर आदि भेजे जावें उनका यथोचित असर हो सके। विशेषतः ध्यान उन्हीं पतों पर देना चाहिये जिनसे बिक्री की आशा हो।

(५) विक्री बढ़ाने के अन्य उपाय—

बिक्री बढ़ाने के नीचे लिखे उपायों पर भी ध्यान देते रहना चाहिये :—

१—किसी पर्व या उत्सव या मेलों आदि के अवसर पर अपने यहाँ विशेष सजावट की जाय। ऐसे अवसरों पर अपने यहाँ आये ग्राहकों की कुछ खातिर का भी विशेष प्रबन्ध करना चाहिये।

२—ऋतु परिवर्तन के अवसरों पर अपने यहाँ का नया माल विशेष रूप से सजाकर उसकी घोषणा की जाय।

३—कभी कभी अपने यहाँ कुछ खास तौर पर अच्छा सस्ता मौसिमी माल मँगवाकर उसकी घोषणा करके बेच डालने से नये ग्राहक बनते हैं, जो कि एक बार अच्छी चीज़ पाकर आगे भी व्यवहार जारी रखते हैं, तथा पुराने ग्राहक प्रसन्न होते हैं।

४—माल बनाने वाले कारखाने आदि को कभी कभी अपने यहाँ की बनी कोई चीज़, जो खास तौर पर विख्यात हो, या जिसे

विख्यात करना हो, उसके अधिक संख्या में नमूने प्रशंसा-पत्र सहित बाँटना चाहिये, जिससे कि उसका प्रचार बढ़े और नई मांगें पैदा हों। जितनी अधिक चीज़ विख्यात होगी उतनी ही उसकी माँग बढ़ेगी और दूकानदारों द्वारा उसके आर्डर मिलेंगे। केवलमाल का अच्छा होना उसको चलाने के लिए कारगर नहीं होता, जब तक कि साथ साथ ख्याति भी न पैदा की जावे। ब्योरे सहित उसके नमूने बाँटने से और साथ साथ उसकी घोषणा करने से अधिक तत्काल असर करने वाली दूसरी विधि नहीं होती।

५—मेले, नुमायशों आदि के अवसरों पर भी प्रदर्शनी करने से चीज़ खूब विख्यात होती है और उसका प्रचार बढ़ता है। ऐसे अवसरों पर अच्छे रूप से प्रदर्शनी करके उसके नमूने आदि सुविधापूर्वक बाँटे जा सकते हैं और साथ साथ बेचने का भी प्रबन्ध होता है जिससे कि चीज़ जल्दी ही मशहूर हो जाती है। लेकिन ऐसे अवसरों पर अधिकांश वही चीज़ बेचने की योजना करनी चाहिये जिसमें कुछ विशेषता हो और जो लोगों की रुचि तथा आवश्यकता के अनुसार हो। उन दिनों उसकी स्थानीय समाचार पत्रों द्वारा भी घोषणा करना बहुत हितकर सिद्ध होगा।

६—हर महीने का कुल बिक्री धन मालूम करते रहना चाहिये, और उसे पिछले वर्षों के उन्हीं महीनों के बिक्री-धन से मुकाबला करके देखना चाहिये कि बिक्री धन दूकान आदि के

खर्च अनुसार बढ़ रहा है या नहीं। यदि नहीं बढ़ रहा है तो उसके क्या कारण हैं। उनका तत्काल उपाय करना चाहिये।

(६) ग्राहकों से विशेष रियायती बर्ताव—

दूकानदारों को अपने ग्राहकों के साथ विशेष रियायत का व्यवहार करने की कोई योजना बनाकर अपना तथा उनका लाभ करना चाहिये। इस प्रकार दूकान प्रसिद्ध होकर ग्राहक संख्या बढ़ती है। दो ऐसे सुझाव नीचे दिये जाते हैं :—

विद्यार्थियों को हर वर्ष स्कूल या कालेज खुलने पर पुस्तकों और कापियों आदि में बहुत खर्च करना पड़ता है जो कि उनके संरक्षकों के लिये प्रबन्ध करना कठिन हो जाता है। यदि उनको इसके लिये पहले से रुपया जमा करने की सुविधा दी जावे और इस उपलक्ष्य में उनके साथ कुछ विशेष रियायत का व्यवहार किया जावे तो उसे वे हर्षपूर्वक प्रयोग में लावेंगे, क्योंकि स्कूल आदि खुलने के पहले उनकी पढ़ाई का खर्च बन्द सा हो जाता है जो कि इस ओर पहले से लगाया जा सकता है। शर्त यह रहे कि कम से कम कुछ निर्धारित रकम जमा भी रहे। जिसको केवल उसी समय लौटाया जावे जबकि हिसाब बन्द किया जावे। इस प्रकार उसके ग्राहक बँधे रहने से बिक्री भी अधिक होगी। हिसाब का कार्ड जिसमें जमा व नाम की रक़मों का और बिक्री के कैश मीमो (Cash Memo) का तारीख सहित हवाला हो, हर एक विद्यार्थी को देना चाहिये।

कपड़े वाले भी इसी प्रकार की मिलती जुलती योजना बना

कर प्रयोग में ला सकते हैं और मौसिमी माल खरीदने में अपने ग्राहकों को सुविधा तथा लाभ पहुँचाकर स्वयं भी लाभ उठा सकते हैं। ग्राहकों को अधिकांश दशहरे, दीवाली अथवा होली के अवसर पर जब कि मौसम बदलता है कपड़ों की अधिक जरूरत पड़ती है, जिसके लिये उन्हें यदि पहले से धन जमा कर लेने के लिये विशेष रियायत की जावे तो वे उसे हर्ष पूर्वक अपनावेंगे।

२—बहुमूल्य चीज़ें जैसे साइकिल आदि बहुत लोग इसलिये नहीं खरीद सकते कि उसके लिये वह पर्याप्त धन नहीं संचय कर पाते। यदि ग्राहकों को केवल एक चौथाई दाम लेकर ऐसी चीज़ें उनकी उचित ज़मानत लेकर और चीज़ का बीमा कराके बेची जावे, और बाकी दाम कुछ व्याज सहित किस्तबन्दी से बाद में लिया जावे तो माल अधिक बिके और ग्राहक संख्या भी बढ़े। ज़मानत व बीमा के कारण चीज़ खोई जाने पर भी नुंकसान का डर बहुत कम हो जाता है। साथ ही उसके लेने वाले का सवारी का खर्च बचकर वही रुपया वह आसानी से किस्त की अदायगी में व्यय कर सकता है। इसके लिये उचित बांड आदि किसी वकील से लिखवा कर छपवा लेना चाहिये। इसमें एक शर्त यह भी होनी चाहिये कि यदि लेनेवाला कभी कोई किस्त निर्धारित रूप से न दे सके तो वह चीज़ तुरन्त लौटा दे और उसके अदा करने में असमर्थ होने पर उसका दाम उसके ज़ामिन से वसूल हो सके।

(७) अतिरिक्त चीज़ों में व्यापार—

कभी कभी एक दूकानदार को अपनी मुख्य लाईन की चीज़ों के अतिरिक्त कुछ विशेष आकर्षक चीज़ों की बिक्री भी करने की योजना मौके अनुसार करके लाभ उठाना चाहिये। जैसे मेले या पर्व के अवसर पर ऐसी चीज़ें जैसे बच्चों के लिए खिलौने या गृह सजावट का सामान या गृहस्थी में काम आने वाली छोटी छोटी अन्य आकर्षित चीज़ें अपने यहां बेचने की योजना करके लाभ उठाना चाहिये। ऐसा करने से लाभ के साथ साथ नये ग्राहक भी बनते हैं। केवल एक ही बात का ध्यान इस बारे में रखना बहुत जरूरी है। वह यह कि बिना बिका माल अधिक न बचे और जो बचे उसे जल्दी से जल्दी कम दाम में बेच कर अपना रुपया उसमें अधिक न फँसने दे।

गृह-कला तथा उद्योग की वस्तुओं का एक अलग विभाग खोलकर भी बहुत लाभ उठाया जा सकता है। इससे मध्यम वर्ग के लोगों की आय बढ़कर उनकी खरीदने की शक्ति बढ़ती है जिससे कि बिक्री पर अच्छा असर पड़ता है। साथ साथ उसमें लगने वाला माल भी अधिक बिकता है। इस प्रकार विक्रेता तथा उपभोक्ता दोनों का लाभ होता है और देश की आर्थिक दशा भी सुधरती है।

(८) पुरस्कार की योजना (Prize Scheme)—

जिस चीज़ की बिक्री बढ़ानी हो उसकी यदि एक ही

ग्राहक द्वारा विशेष बिक्री हो तो इसको पुरस्कृत करने की योजना अधिकांश सफल होती है। यह इस प्रकार किया जाय कि जिस चीज़ की बिक्री बढ़ानी हो इसके ग्राहकों को हर बिक्री के साथ एक ऐसा टिकट या कागज की चिट, जिसे Free Gift Coupon कह सकते है, दी जाया करे। जब कोई ग्राहक इस प्रकार मिले हुये टिकट या चिटों को निर्धारित संख्या में जमा कर ले तो उनको उससे वापस लेकर उनके बदले मे पुरस्कार के रूप मे कोई आकर्षक चीज़ दे। ऐसी चीजों की एक लिस्ट पहिले से बनी मौजूद होनी चाहिये जिसे देख कर वह अपने मन की चीज़ इसमे से छॉट कर माग सके। संग्रह किये टिकट या चिटें दूकानदार को वापस दी जावे या सीधी उस कारखाने को भेजी जावें जहाँ के माल पर कारखानेदार को पुरस्कार वितरण करना है। हर दशा मे पुरस्कार ग्राहक को वहीं से मिलना चाहिये जहाँ से पुरस्कार की योजना निकली हो।

इसी प्रकार बिक्रेताओं, जिनमें विक्रेता दूकानदार भी सम्मिलित हैं, को भी किसी विशेष माल को अधिक मात्रा या संख्या मे बेचने के लिये पुरस्कृत किया जा सकता है, यदि वह एक निर्धारित मात्रा या संख्या उस माल को एक निश्चित समय के अन्दर बेच दें। ऐसी योजना बनाते समय विक्रेताओं को पहले से बताया जाना चाहिये कि कितनी मुद्दत के अन्दर कितना माल बेच देने पर वह किसी निर्धारित पुरस्कार के भागी होते हैं। वह समय बीतने पर यदि किसी

विक्रेता ने निश्चित रूप से बिक्री की है तो उसको निर्धारित पुरस्कार तत्तकाल देना चाहिये। उदाहरण के तौर पर यदि किसी विक्रेता ने एक कारखाने अथवा दूकान का कोई माल यदि एक वर्ष के अन्दर ५०००) का बेचा हो और ऐसा करने के लिये पहले पुरस्कार रूप में कोई ऐसी चीज़ जैसे घड़ी, या टी-सैट आदि दिया जाने की योजना बनाई गई हो तो उसे उसकी इच्छानुसार घड़ी या टी-सैट तत्काल देनी चाहिये। इससे उसको प्रोत्साहन के साथ साथ अन्य विक्रेताओं में भी उत्साह पैदा होगा।

———

अध्याय ५

व्यापार में उन्नति किस प्रकार की जाय

(१) साधारण उपाय—

यह विषय प्रत्येक व्यापारी के लिये बड़े महत्व का है, क्योंकि चलता हुआ हरएक रोज़गार स्वाभाविक रूप से उन्नति करता रहता है, लेकिन उसकी उन्नति की बागडोर इस प्रकार से घुमाते रहना चाहिये जिससे कि उन्नति अच्छे ढंग पर होती रहे और ऐसा न हो कि आगे चलकर वह अपनी सामर्थ्य के बाहर हो जावे। अथवा वह इस प्रकार से हो कि मेहनत अधिक करनी पड़े, रुपया भी अधिक लग जावे लेकिन लाभ कम हो। इसलिए हर-एक व्यापारी को समय समय पर यह सोचते रहना चाहिये कि उन्नति किस प्रकार की जावे जो आगे चलकर उसका यथेष्ट लाभ प्राप्त हो सके। इसलिये यह बहुत सोच समझकर निर्णय करना चाहिये कि कौन सा काम किया जावे या न किया जावे, और जो किया जावे वह किस प्रकार किया जावे। यदि ऐसा नहीं किया गया और गलत रास्ते पर व्यापार बढ़ता गया तो आगे चलकर उसकी राह बदलना बहुत कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव हो जाता है। यदि एक फुटकर बिक्री करनेवाला अपने

यहाँ थोक बिक्री करने में लाभ समझता है और उसके लिये यथेष्ट धन का भी प्रबन्ध कर सकता है तो उसे अपने रोज़गार की बागडोर थोक बिक्री की ओर घुमा देना चाहिये। लेकिन यदि वह समझता है कि ऐसा करने की गुंजायश नहीं है या थोक काम करने में अधिक लाभ की सम्भावना नहीं है तो उसे विचारना चाहिये कि अपने यहाँ बढ़ते हुए कार्य में कौन कौन सी चीज़ें बढ़ानी चाहियें और कौन सी नहीं, ताकि अधिक लाभ वाली अथवा अधिक चलने वाली या जिस चीज़ में उन्नति की अधिक सम्भावना हो उसकी ओर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान दिया जाय, और अवसर अनुसार उसका एक अलग विभाग कर दिया जाय। ऐसा न करने से यदि व्यापार अनिश्चित रूप से बढ़ता है तो पूँजी तथा परिश्रम उसमें अधिक लगता जाता है लेकिन उससे पूरा पूरा लाभ नहीं होता।

कभी कभी अपने रोज़गार के किसी विभाग को घटाने या बिलकुल बन्द करके दूसरे विभाग की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इसलिये अपनी सामर्थ्य और समय अनुसार हरएक व्यापारी को चाहिये कि अपने कारोबार में परिवर्तन व उन्नति की ओर ध्यान देता रहे। किसी ओर घटाना और किसी ओर बढ़ाना यह क्रम सदा चलता ही रहना चाहिये इसी में उसकी उन्नति है।

(२) मालिक की देखभाल—

बड़े व्यापारों में जिनका काम व्यवस्थापकों द्वारा चलाया

जा रहा हो मालिक अथवा मुख्य व्यवस्थापक को उससे संबंधित चालू क्रियायों में अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करते रहना चाहिये। ऐसा करने से उसका बहुमूल्य समय नष्ट होकर व्यवस्थापकों का उत्साह भंग होता है और फिर वह जरा जरा सी मामूली बातें भी उससे पूछकर करने की चेष्टा करते हैं या छोटी छोटी बेकार की समस्यायें उसके लिये उपस्थित करते रहते हैं। इसके विपरीत यदि वह परामर्श करने, विचारने या निरीक्षण करने और बाहर घूमने मे अपना समय लगावे तो उसकी उपयोगिता कहीं अधिक हो सकती है। इस सम्बन्ध मे कुछ विस्तार पूर्वक सुझाव नीचे दिये जाते हैं, जिन्हें कार्यान्वित करके वह अपने व्यापार मे यथेष्ट उन्नति कर सकता है उसे देखना चाहिये कि—

१—इस वर्ष के बिक्री के आँकड़े पिछले वर्षों के उन्हीं महीनों के आँकड़ों से अधिक है या नहीं, यदि नहीं है तो इसके क्या कारण हैं और क्या उपाय किया जावे जो उन्नति हो।

२—बाहर के विक्रेता अपना कार्य अच्छा कर रहे हैं या नहीं, उनकी रिपोर्ट किस प्रकार की है। यदि कोई उन्नति या शिकायत सम्बन्धी रिपोर्ट है तो उस पर पूर्ण रूप से ध्यान दिया गया है या नहीं।

२ अ—विज्ञापन निकालते रहने पर पूरा ध्यान दिया जा

रहा है या नहीं, और जिसमे जितना ध्यान तथा द्रव्य व्यय हो रहा है उसके अनुकुल लाभ हो रहा है या नहीं।

३—कोई अधिक दिन से लेना तो बाकी नहीं है, यदि है तो उसकी वसूलयाबी के क्या उपाय किये जा रहे हैं।

४—कहीं कोई माल रुका हुआ तो नहीं है, यदि है तो क्यों और कब से, उसकी रक्षा का ठीक ठीक प्रबन्ध है य नहीं। यदि जल्दी काम में आने की सभावना न हो और उसे निकाल देने में ही भलाई है तो उसको निकालने की व्यवस्था करनी चाहिये।

५—माल खरीदने का कार्य किस आदमी के सुपुर्द है, और वह इस योग्य है भी या नहीं।

६—काम को बढ़ाने की नई योजना सोचना चाहिये और उस पर परामर्श करके उसे कार्यान्वित करना, या किसी विभाग में यदि घाटा हो तो घाटे के ठीक ठीक कारण मालूम कर उसको दूर करने का यथोचित उपाय करना चाहिये। यदि उसको जारी रखने की अपेक्षा किसी दूसरी नई चीज़ की या मौजूदा चालू चीज़ की ओर अधिक ध्यान दिया जाने में अधिक लाभ हो तो उसे कार्यान्वित करने के बारे मे परामर्श करना चाहिये। साथ ही साथ जिस विभाग को कम करना हो या बन्द करना हो, उसमें लगा धन भी जल्दी निकालने की फिक्र करनी चाहिये।

७—खर्चों में किस प्रकार किफ़ायत की जा सकती है। यदि

किसी विभाग का काम कम हो गया है तो उसके अनुरूप खर्चा भी कम हो गया है या नहीं।

८—किसी प्रकार से कोई सरकारी कर या चुंगी अनुचित रूप से तो नहीं दिया जा रहा है।

९—उसे देखना चाहिये कि माल वही अधिक लिया गया है अथवा बनवाया गया है जिसकी माँग अधिक हो।

१०—एक कारखानेदार को अधिक प्रकार की वस्तुएँ बनाने की अपेक्षा कम प्रकार की अधिक वस्तुओं के बनाने में अधिक लाभ और कम झंझट करना होता है। इसलिये ऐसा करने में अधिक ध्यान देना चाहिए। कम प्रकार की वस्तुएँ बनाने से उनके ऊपरी खर्चों (Overheads) में कमी होकर उनके बनाने में किफ़ायत होती है।

११—यदि बिक्री अथवा माल की निकासी कम हो रही हो तो कोई न कोई नयी योजना बनाकर उसको कार्यरूप में लाने में देर नहीं करना चाहिये। ऐसी दशा मे खर्चों को कम करना चाहिये और नये ग्राहक पैदा करने की चेष्टा करनी चाहिये।

१२—यदि व्यापार मे किसी कारण कुछ दिन के लिये शिथिलता पैदा हो गई हो तो ऐसे समय में विविध प्रकार की उन्नति, जैसे नये शो-केस लगाना, मकानियत में आवश्यक तोड़ फोड़ करवा कर उसे सुधरवाना, माल रखने की जगह परिवर्तन करना, आदि का काम करना चाहिये। या कारखाने की दशा

में नये नये प्रयोग किफ़ायत के अथवा माल के उन्नति के विचार कर कार्य रूप मे लाना चाहिये ।

१३—यदि कोई नुकसान हो गया हो तो उसकी रिपोर्ट बनवा कर जाँच करना चाहिये और यह पता लगाना चाहिये कि उसके क्या कारण हैं, और भविष्य में वह किस प्रकार रोका जा सकता है । हर नुकसान का व्योरा उसके कारणों और जिम्मेदार आदमी के नाम सहित एक रजिस्टर मे दर्ज करते रहना चाहिये।

१४—देनदारों के क़र्ज़ अधिक तो नहीं बढ़ गये हैं । और वे किसी ऐसी ओर तो नहीं लगे हैं जहाँ लगे रहने से व्याज से अधिक मुनाफ़ा नहीं हो रहा है। अथवा बहुत दिन से वे लौटाय न गये हों। उनमें से कौन से ऐसे हैं जिन पर अधिक व्याज दिया जा रहा है जो कि कम व्याज पर अन्य स्थान से रुपया लेकर लौटाये जा सकते है।

१५—कोई कार्यवाही सरकारी नियम अथवा नियन्त्रण के विरुद्ध तो नहीं हो रही।

१६—कोई मशीनरी ऐसी तो नहीं है जिसको उससे बढ़िया मशीन से बदलने मे अधिक लाभ होगा, या वह इतनी खराब हो गई है अथवा ओवरहालिंग (Overhauling) चाहती है जिसके न होने से उसकी उपयोगिता पूर्ण रूप से नहीं हो रही है।

१७—कोई काम हाथ से तो ऐसा नहीं हो रहा है जिसको

मशीन द्वारा कराने में अधिक अच्छा और किफ़ायत से हो सके। ऐसी दशा में यह भी विचारना जरूरी होगा कि काम इतना अधिक है जिसके लिये मशीन की आवश्यकता है या नहीं।

१८—बिजली आदि का खर्च यदि अधिक हो रहा है तो वह क्योंकर घटाया जा सकता है, कहीं लीकेज (Leakage) तो नहीं हो रहा है। लीकेज (Leakage) की जाँच कभी कभी करते कराते रहना जरूरी है।

१९—कहीं किसी प्रकार की गन्दगी देखते ही तुरन्त उसकी ओर ध्यान देना चाहिये। हर स्थान सदा स्वच्छ रहना चाहिये।

१९ अ—माल रखने के स्थान, स्टाक-रूम आदि, उस माल की सुरक्षा के अनुकूल हैं या नहीं।

२०—रुपया लेने देने अथवा भेजने में उचित रक्षा का प्रबन्ध है या नहीं। एक बार में अधिक रकम लानी या ले जानी ठीक नहीं।

२१—बड़े बड़े वैतनिक कर्मचारियों की संख्या अधिक तो नहीं है।

२२—हर एक मुस्तक़िल कर्मचारी के सुपुर्द किये कर्तव्यों और जिम्मेदारियों की सूची है या नहीं, और वह उन्हें जानता है या नहीं और उसके अनुसार कार्य करता है या नहीं।

२३—हर एक ज़िम्मेदारी के स्थान पर उसके अनुकूल कर्म-चारी अथवा अपना कोई विश्वासी तथा योग्य रिश्तेदार होना

चाहिये, और आवश्यकतानुसार उससे उचित ज़मानत भी लेनी चाहिये।

२४—कर्मचारियों अथवा श्रमजीवियों में किसी प्रकार का असंतोष तो नहीं है, और यदि है तो वह किस प्रकार दूर किया जा सकता है। उनके काम करने के स्थान साफ़ और सुविधा-जनक हैं या नहीं। किसी को काम करने में कोई असुविधा तो नहीं हो रही है तथा वह उसे ठीक प्रकार से कर रहा है या नहीं। जिस योग्य जो कर्मचारी अथवा श्रमजीवी है वह उस के योग्य काम पर हीलगा है या नहीं, यदि ऐसा नहीं है तो क्यों।

२५—यदि उनकी रहने की व्यवस्था की जिम्मेदारी अपने ऊपर है तो वहाँ भी उनके आराम और सफ़ाई की देख भाल करते रहना चाहिये, और उनके बाल बच्चों की पढ़ाई आदि का भी प्रबन्ध करना चाहिये। साथ ही कर्मचारियों की अथवा उनके आश्रितों की बीमारी की अवस्था में उनके इलाज का भी प्रबन्ध होना चाहिये।

२६—यथोचित रूप से सरकारी नियमानुकूल हिसाब किताब या हाज़िरी के रजिस्टर रखे जा रहे हैं या नहीं। वे गन्दे प्रकार से तो नहीं रखे जा रहे हैं। हर एक खर्च के समर्थन में उसका ब्योरे सहित सबूत (वाऊचर) लिया गया है या नहीं। और आय-व्यय के हिसाब की सब किताबें ठीक प्रकार से रोज़ लिखी जा रही हैं या नहीं ?

२७—जमा वा खर्च अथवा सब प्रकार के आय व्यय का हिसाब देखते रहना चाहिये ताकि वह पिछड़ने न पावे।

२८—कोई बिल पुराने अथवा अधिक दिन से तो देने के लिये नहीं पड़े हैं।

२९—हर चिट्ठी जो जवाब देने योग्य है उसका उत्तर तुरन्त चला गया है या नहीं। यदि नहीं गया है तो किस कारण? हरएक पत्र जो एक सप्ताह या अधिक से बिना उत्तर दिये बाकी हो उसकी रिपोर्ट उसके पास विशेष रूप से प्रति सप्ताह पहुँचती रहनी चाहिये।

(३) शिथिलता से बचो—

कुछ लोगों की प्रवृत्ति किसी प्रकार काम चलाने की हो जाती है, क्योंकि ऐसा करने से नया उपाय सोचने व करने का तत्कालीन परिश्रम और धन दोनों बचता रहता है। लेकिन साथ साथ उन्नति न होने से जो नुकसान होता रहता है उसकी ओर से वे ध्यान नहीं देते। थोड़े से परिश्रम या धन को बचाने में कभी कभी बहुत समय व धन बेकार नष्ट होता रहता है। जैसे, यदि पेटियों आदि पर पता छापना हो तो उसका स्टेन्सिल बनवाकर एक साथ पूरा पता छापा जा सकता है, जो कि सुन्दर होगा और कम समय में छप जावेगा, बजाय इसके कि वह हाथ से लिखा जावे अथवा एक एक हर्फ के अलग अलग स्टेन्सिल से लिखा जावे तो इससे काम करनेवाले का बेकार समय व परिश्रम नष्ट

होता रहता है। इसी प्रकार एक पुरानी मशीन को न बदलने से जो माल ठीक नहीं बनता या देर में बनता है वह नुकसान मशीन को ओवरहालिंग (Over hauling) कराने या बदल डालने से बचाया जा सकता है। व्यापार लाभ के लिये किया जाता है, इसलिये यदि कोई भी कार्य उसमें ऐसा हो रहा जिससे लाभ कम हो रहा हो तो उसे जल्दी ही समाप्त करके अधिक लाभ होने वाला काम करना चाहिये। जितनी देर की जावेगी उतना ही नुकसान होता रहेगा।

बहुत से व्यवसायी अपने व्यापार में उन्नति की ओर ध्यान तभी देते हैं जब कि वह गिरने की दशा में आ जाता है। यह उनकी बड़ी भूल है। उन्हें चाहिये कि वे सदा उसकी उन्नति के उपाय सोचते व करते रहें। ग्राहक संख्या व बिक्री धन हर बर्ष बढ़ता ही जाना चाहिये। ऐसा करने के लिये नये नये मार-केट और नये नये ग्राहकों को पकड़ने और पुरानों को थामे रहने का सदा यत्न करते रहना चाहिये। ऐसा वे विज्ञापन द्वारा, सूचीपत्र आदि निकालकर अथवा प्रतिनिधि भेजकर और खुद बाहर जाकर अथवा चिट्ठी पत्री द्वारा ग्राहकों को अपनाने की चेष्टा करके कर सकते हैं। फुटकर विक्रेता को सदा अपने बाहर के शो-केसों की ओर अथवा ग्राहकों के साथ अच्छा बर्ताव करने की ओर विशेष ध्यान देते रहना चाहिये। यदि उसके कारोबार में कई विभाग हों और उनमें किसी विभाग में शिथिलता आ गई हो तो उसके ठीक ठीक कारण जानने का

यत्न करना चाहिये और यदि जरूरत हो तो उसके व्यवस्थापक को बदलकर वहाँ का वातावरण बदल देना चाहिये।

कभी कभी अच्छे विक्रेता न होने के कारण भी दूकान में कम बिक्री होती रहती है। वे ग्राहकों को संतुष्ट नहीं कर सकते उनसे व्यवहार करने में लापरवाही करते हैं। या हँसमुख न होने के कारण उनसे रुखाई का बर्ताव करते हैं, जिससे कि यदि वह चीज़ से संतुष्ट भी हो जाता है पर व्यवहार से असन्तुष्ट होकर दुबारा वहाँ आने के लिये उत्साहित नहीं होता। ऐसी दशा को सुधारने के लिये ग्राहकों से व्यवहार करने के लिये अच्छे विक्रेताओं को आगे बढ़ना चाहिये, और बुरे बिक्रेताओं को सुधारने के लिये उन्हें उचित शिक्षा देना चाहिये और यदि वे नहीं सुधरते तो उन्हें बदल देना चाहिये।

पुराने ढंग से चलने वाली या ऐसी दूकान आदि जिसका व्यवस्थापक वृद्ध हो गया हो, उनमें भी उत्साह हीनता के कारण शिथिलता आ जाना अचम्भे की बात नहीं होती। कारण कि बिना उत्साह अथवा नयापन के कोई काम भी उन्नति करता या अच्छी प्रकार चलता बहुत कम दिखाई पड़ता है। यही हाल एक व्यवसायी के कार व बार का भी है। कार व बार में शिथिलता आना एक व्यवसायी के लिये मौत व जिन्दगी का सवाल है। अतः इससे बचने का उपाय करते रहना चाहिये, और इसके चिन्ह नजर आते ही उसके कारणों को भली प्रकार समझ कर उचित रीति से प्रबन्ध करने में देर नहीं करनी चाहिये।

(४) काम बढ़ाना

काम बढ़ाने की बाबत सोचना यह एक साधारण बात नहीं है। इसके लिये पूरा पूरा अनुभव और ज्ञान दोनों ही होने चाहियें। साथ ही पर्याप्त धन भी। जो बात सोची जावे उसके बारे में उसके अनुभवी लोगों से भी परामर्श करना चाहिये ताकि उनके साथ बात करने से उसके बारे में सब ऊँच नीच समझ में आ जावे। यदि लाभ की अधिक सम्भावना हो तो थोड़ी शंका होते हुये भी काम को कर डालने ही में भलाई है, क्योंकि व्यापार में जोखिम सदा लगी रहती है। आगे वही बढ़ते हैं जो जोखिम उठाने में समयानुसार झिझकते नहीं। लेकिन जो काम करे उसे दृढ़तापूर्वक करे।

विचार विनिमय करते समय केवल अपनी इच्छाओं से प्रभावित होकर कोई निर्णय न कर डाले। हर एक मामले में निष्पक्ष भाव से ही विचार विनिमय करना चाहिये। क्योंकि हर एक बात के दो दृष्टिकोण होते हैं, अच्छे व बुरे। दोनों ही के ऊपर अच्छी तरह से सोचना और मनन करना चाहिये। सत्य रूपी मोती पाने के लिए विचार सागर में गहरा गोता लगाना होता है। फिर भी यह देखना होता है कि जिसको हम मोती समझ रहे हैं वह केवल घोंघा तो नहीं है। ऊपरी विचार करने से धोखे की अधिक सम्भावना रहती है। हरएक नया विचार एक महत्व रखता है उसको हर प्रकार से तर्क वितर्क द्वारा तौलना और उसकी गहराई में जाना यह हर एक विचारवान और अनुभवी

पुरुष का काम है। ऐसे विचार को ग्रहण करने या पैदा करने के लिये उसे अपने व्यापार सम्बन्धी पत्र पत्रिकायें देखते रहना चाहिये। दैनिक समाचार पत्रों से इस प्रकार का लाभ बहुत कम होता है। नये विज्ञान अथवा नई कलाओं का ज्ञान अच्छी अच्छी मासिक व साप्ताहिक पत्र पत्रिकाओं से ही होता है। अथवा व्यापार सम्बन्धी पुस्तकों या प्रदर्शनियों से, या उस व्यापार सम्बन्धी संस्थाओं के अधिवेशनों में सम्मिलित होने से। एक व्यापारी को इस वैज्ञानिक समय और परिवर्तनशील संसार में सदा चौकन्ना होकर आगे आने वाले समय की ओर ध्यान देते रहना चाहिये। बजाय इसके कि वह अपने पिछले ज्ञान और अनुभवों पर ही आरूढ़ रह कर कूप मंडूक बना रहे, और नई नई कलाओं अथवा विज्ञान की ओर ध्यान ही न दे। बहुत सी नई जानकारी विदेशों में घूम कर या वहाँ से आये हुये व्यक्तियों से बातचीत कर के भी प्राप्त होती है। इस प्रकार ज्ञान प्राप्त कर के एक व्यापारी अपनी उन्नति का रास्ता आप ही सोच सकता है और उसको कार्यान्वित करके लाभ उठाता है जब कि उसके अन्य साथी सोचते ही रह जाते हैं।

(५) नये प्रकार का माल बढ़ाना—

दूकानदार को ग्राहकों अथवा एजन्टों द्वारा बहुत सी ऐसी वस्तुओं का ज्ञान होता रहता है जो उसकी दूकान में नहीं बिकतीं। इनको अपने यहाँ बेचने के लिये मँगवाने का निर्णय

करने से पहले उसे नीचे लिखी बातों पर विचार कर लेना चाहिये—

१—वह ऐसी वस्तु तो नहीं है जो अपने यहाँ की अन्य बिकने वाली चीज़ों से मिलती जुलती न हो।

२—उसकी माँग कितनी है और यदि वह किसी विशेष प्रकार के ग्राहकों की है तो उनकी संख्या कितनी है और दूसरे बेचने वाले उसके कितने हैं।

३—उसमें कितनी नई पूँजी लगाने की आवश्यकता है, और वह अन्य बिकने वाली चीज़ों के ऊपर कोई बुरा असर डाले बिना नये माल में लगाई जा सकती है या नहीं।

यदि कोई मौसिमी माल बढ़ाना हो तो उसे मौसम शुरू होने से पहले ही मँगवा कर उसकी घोषणा करनी चाहिये, और जहाँ तक हो सके उसके बिकने के मौसम समाप्त होने से पहले ही उसे बेच डालना चाहिये। क्योंकि अगर उसमें अधिक पूँजी फँसी रह गई तो वह बजाय फ़ायदे के नुक़सान का कारण हो सकता है। यदि कोई ऐसी चीज़ हो जिसमें पूँजी अधिक न लगे, लेकिन उसके कारण नये ग्राहक बनते हों और दूकान का नाम भी होता हो तो उसे बढ़ा लेने में संकोच नहीं करना चाहिये।

(६) थोक बिक्री—

फुटकर विक्रेताओं को अपने यहाँ थोक बिक्री बढ़ाने के

अवसर भी मिलते रहते हैं जिनसे कि उन्हें लाभ उठाना चाहिये यदि वे यथोचित रुपये का भी प्रबन्ध कर सकते हों, क्योंकि इस प्रकार से उनका व्यापार में लगा धन जल्दी जल्दी लौट फेर होता रहता है। ऐसा व्यापार उन स्थानों में विशेषकर चलता है जहाँ आस पास के ग्रामों आदि में बसने वाले दूकानदार आकर अपने यहाँ बिकने वाली वस्तुएँ शहरों से ले जाते हों। ऐसा करने से उनको अधिक दिन के लिये दूर मंडियों में उन चीज़ों को लेने के लिये नहीं जाना पड़ता और थोड़े ही में उनका काम चल जाता है। अथवा शहर की ही थोड़ो-थोड़ी चीजें रखने वाले उससे लेकर अपना काम चलाते रहते हैं। दूसरा लाभ इससे यह भी होता है कि फसल के ऊपर सस्ती चीज़ें लेकर फसल बीतने पर उसे अधिक मुनाफ़े से बेचकर लाभ उठाया जा सकता है। ऐसा करने के लिये बैंक में भी वह चीज़ गिरवी रखकर उसी की जमानत पर रुपया लिया जा सकता है।

इस प्रकार की बिक्री में लाभ की दर बहुत कम होती है, लेकिन उसकी मात्रा बहुत तेज़ी से बढ़ती रहती है। साथ साथ थोक बिक्री बढ़ने से आगे चलकर फुटकर बिक्री की अपेक्षा कम वस्तुओं को अधिक मात्रा मे बेचने के कारण झंझट कम होता जाता है। फुटकर बिक्री में अधिक ग्राहकों और अधिक प्रकार की चीज़ों की बिक्री के कारण परेशानी, छीजन और खर्च अधिक होता है और अपेक्षाकृत बिक्री धन की लौट फेर भी कम होती है, जिसके कारण मुनाफ़ा भी कम होता है। यह

जरूरी है कि थोक बिक्री उन्हीं वस्तुओं की की जाय जिनकी मांग अधिक हो।

केवल थोक बिक्री करने वाले को साथ साथ उसी भाव से फुटकर बिक्री नहीं करते जाना चाहिये, इससे वह अपनी उन्नति में बाधा डालता है। हाँ यदि फुटकर के भाव वही चीज़ उपभोक्ताओं में भी बेचता रहे तो कोई डर नहीं। ध्यान इस बात का रखना चाहिये कि उसके थोक ग्राहक को किसी बात की शिकायत न होने पावे। बेचने के लिये यदि कोई दूकानदार फुटकर रीति से भी कोई माल ले तो भी उसे थोक के दाम से ही देना चाहिये। इससे थोक दूकानदार का कोई नुकसान नहीं होता लेकिन फुटकर दूकानदार को वह अपना कृतज्ञ बनाकर उसकी सहानुभूति प्राप्त करता है जिससे कि उसका व्यवहार बढ़ता है।

बड़े नगरों मे फुटकर दूकाने अधिक होती हैं और वे अपने यहाँ बाहर से आया माल अनेक प्रकार का रखती हैं। लेकिन उन्हें इस में सुविधा नहीं होती कि वे अधिक माल हर प्रकार का अपने यहाँ मँगवा कर रखें, क्योंकि ऐसा करने में स्थान व रुपया दोनों ही अधिक फँसते हैं, और साथ साथ छीजन भी अधिक होती रहती है। इसलिए वे अधिक चलने वाला माल भी प्रायः स्थानीय थोक बिक्रेताओं द्वारा खरीद खरीद कर अपना काम चलाते हैं।

स्थानीय थोक अथवा फुटकर-थोक बिक्रेताओं को चाहिये

कि वे अपने यहाँ थोक बिकने वाली चीज़ों की मूल्यसहित सूची निकाल कर फुटकर बिक्रेताओं में वितरण करते रहें, और साथ साथ उनके यहाँ अपना आदमी माल के लिये आर्डर लेने अथवा माल भिजवाने और रुपया वसूल करने के लिये भेजते रहें। कोशिश यह होनी चाहिये कि हर मास कम से कम एक बार जरूर दूकान का आदमी हर एक फुटकर बिक्रेता के पास हो आवे। ऐसे थोक दूकानदारों को चाहिये कि जिस कारखाने आदि का माल वे मँगवा कर अपने यहाँ थोक रूप से बेचते हों उससे कम से कम अपने नगर की (Sole Agency) सोल-एजेन्सी जरूर ले लेवें ताकि अन्य व्यापारी वह माल मँगवाकर अपेक्षाकृत कम दामों में न बेच सकें।

(७) विभिन्न-विभागों की दूकान (Departmental or Chain Stores)—

जिस प्रकार से एक फुटकर विक्रेता धीरे धीरे अपने व्यवसाय को थोक व्यापार का रूप दे सकता है उसी प्रकार यदि वह चाहे और दूकान में जगह हो या पास की दूकान मिल सके तो अपने यहाँ के किसी विभाग को अलग रूप देकर और इस प्रकार उसकी ओर विशेष ध्यान देकर उसमें अधिक उन्नति कर सकता है। ऐसा करने के लिये उसे नीचे लिखी बातों पर विचार करना होगा :—

१—नया विभाग स्थापित करने के लिये यथेष्ट धन, स्थान और आदमी का प्रबन्ध है या नहीं।

२—जिस कर्मचारी अथवा रिश्तेदार के सुपुर्द वह नया विभाग करना है उसे उसका पूरा ज्ञान तथा अनुभव है या नहीं, यदि नहीं है तो उसकी पूर्ति का क्या प्रबन्ध हो सकता है।

३—जो विभाग नया कायम करना है वह अपने यहाँ निकलनेवाली अन्य वस्तुओं से मिलता जुलता है या नहीं। यदि नहीं है तो उसको चलाने में क्या क्या सुविधायें प्राप्त हैं।

४—नया विभाग कायम करने से अपने अन्य व्यापार में तो धक्का लगने की सम्भावना नहीं है।

५—नये विभाग का अलग हिसाब रखकर उसमें नफ़े नुकसान की जाँच बराबर हो सकती है या नहीं।

यदि उपरोक्त विचारों से नया विभाग जारी करना सफलता पूर्ण सिद्ध होता हो, तो उसे प्रारम्भ कर देने में देर नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उससे नीचे लिखे लाभ होते हैं :—

१—जो ग्राहक अपने यहाँ की चालू चीज़ें लेने आवेंगे वही अन्य चीज़ें भी नये विभाग की सुविधापूर्वक ले सकेंगे, तथा दूकानदार को उनको विक्रय करने के लिये नये ग्राहक बनाने की चिन्ता और परिश्रम नहीं करना पड़ेगा।

२—बहुत से सम्मिलित खर्चे—जैसे गोदाम भाड़ा, बिजली, चौकीदारी आदि के जो एक विभाग में पड़ते थे वह अन्य विभागों में बाँटे जाने से उनमें किफ़ायत हो जावेगी।

३—माल मँगवाने में सुविधा होकर उसके ऊपरी खर्चों में किफ़ायत होगी।

४—अलग विभाग हो जाने से उस चीज़ की ओर विशेष ध्यान दिया जा सकेगा और उसमें नफ़ा, नुकसान का ठीक ठीक अनुमान होता रहेगा।

५—काम बढ़ने से दूकान का नाम बढ़ेगा, जिसके कारण बिक्री आपसे आप बढ़ेगी।

उपरोक्त रूप से एक के पश्चात् दूसरे नये नये विभाग स्थापित किये जा सकते हैं। ज्यों ज्यों विभाग बढ़ते जावें त्यों त्यों मुख्य संचालक अथवा अन्य कर्मचारियों की उन्नति करते जाना चाहिये जिससे उनका उत्साह साथ साथ बढ़ता जावे, क्योंकि यह अनिवार्य रूप से सच है कि वही व्यवसायी अपने व्यवसाय में उन्नति करता है जिसके कर्मचारी संतुष्ट हों और उसके व्यवहार से प्रसन्न हों, तथा उसकी उन्नति में अपनी उन्नति समझते हों। ऐसे कर्मचारियों के भरोसे ही कार्य बढ़ाया जा सकता है। अच्छे व्यवहार से उन्हें पैदा किया जा सकता है, लेकिन इसके विपरीत कटु व्यवहार करने से अच्छे कर्मचारी ठहरते नहीं, जिससे कि उन्नति भी नहीं हो पाती। इसलिए हरएक व्यापारी अथवा कारखानेदार को चाहिये कि अपने यहाँ के योग्य कर्मचारियों को सदा उत्साहित करता रहे जिससे हर कार्य को वे मन लगाकर करें और स्वामी के नफ़ा नुकसान को अपना ही नफ़ा नुकसान समझे।

उपरोक्त प्रकार से व्यापार बढ़ाने के साधन ग्रामों में प्रायः सुलभ होते हैं, क्योंकि वहाँ स्थान की कमी न होने कारण दूकान

आदि को फैलाने में सुविधा होती है। इसके अतिरिक्त वहाँ पर एक ही प्रकार की अधिक दूकानें न होकर यदि भिन्न भिन्न विभाग कोई दूकानदार अपने यहाँ चालू कर देता है तो उसके मुख्य व्यापार के साथ साथ वह नया विभाग भी बड़ी आसानी से चल निकलता है। क्योंकि ग्राम के बाजारों में दूर दूर से कृषकगण अपनी उपज बेचने आते हैं और सभी प्रकार की चीज़ें एक ही समय पर खरीदना चाहते हैं। यदि वह एक ही दूकान पर उन्हें मिल जाती हैं तो उन्हें बड़ी सुविधा होती है। और यदि दूकानदार की सच्चाई तथा ईमानदारी की छाप उन पर पहले से पड़ी हो तो वह अपनी सब आवश्यकताओं को उसी की दूकान से पूरा करने मे प्रसन्न होते हैं।

बड़े नगरों में इस प्रकार की दूकानें बहुत कम देखने में आती हैं क्योंकि वहाँ पर एक चीज़ की अलग अलग बड़ी बड़ी दूकानें तथा बाज़ार तक होते है, और स्थान की भी बड़ी तंगी रहती है। ऐसे स्थानों में तो अपने यहाँ की अन्य बिकने वाली चीजों से मिलती जुलती और घरेलू काम की चीजें बढ़ा लेने में आसानी से काम चल जाता है। पर इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि जो चीज़ बिकने लगे और लाभ की हो उसके बिकने का क्रम टूटने न पावे, और बिक्री बढ़ने पर उसका अलग विभाग तत्काल कर दे।

(८) एक भाव की चीजों की दूकान—

इस प्रकार की दूकानें प्रायः बड़े बड़े नगरों अथवा नुमा-

यशों में जहाँ यात्री अथवा दर्शक लोग अधिक संख्या में आते हों, नजर आती हैं। इनमें अधिकांश ऐसी छोटी छोटी चीजें बिकती हैं जिनके मूल्य अधिक नहीं होते, परन्तु वे गृहस्थी के काम की हुआ करती हैं, और इनकी ओर एक पथिक अथवा दर्शक इस दृष्टि से निगाह डालना चाहता है कि देशी अथवा विदेशी कौन कौन सी नई वस्तुओं का निर्माण हुआ है जो कि बच्चों के अथवा गृहस्थी के मतलब की हों ताकि वह उन्हें सौगात के तौर पर ले सके। ऐसी दूकानें वहीं चल सकती हैं जहाँ यात्री अथवा दर्शक अधिक आते हों। बड़ी बड़ी अन्य प्रकार की दूकानों में भी जहाँ बच्चे तथा स्त्रियाँ अधिक आती हों इस प्रकार की चीजों का एक विभाग खोला जा सकता है ताकि अन्य चीजों को लेते समय वे इनकी ओर भी आकर्षित हों, और कम दाम की तथा उपयोगी होने के कारण पहले से उनको लेने का विचार न होते हुये भी उन्हें ले लें। साथ साथ ऐसी चीजें ग्राहकों को आकर्षक व बच्चों को आनन्दमयी प्रतीत होती हैं जिसके कारण दूकान उनके लिये एक मनोरंजन का स्थान हो जाती है।

इस प्रकार की चीजों की दूकान के लिये यह जरूरी नहीं है कि वह उनसे मिलती जुलती अन्य बहुमूल्य चीजें बिल्कुल न रखे, क्योंकि आकर्षण के कारण ग्राहक जब कुछ खरीदने के लिये उत्सुक होता है तो उसके लिये स्वाभाविक है कि वह अपनी इच्छानुसार अधिक मूल्य की भी चीजें ले। इस बात का ध्यान

रखना भी जरूरी है कि जो चीजें अधिक बिकती हों उन्हें बराबर मंगाता जावे और नये नये प्रकार की उसी दाम में बिकने वाली आकर्षक चीजें बढ़ाता जावे। यदि कोई चीज बहुत दिनों से नहीं बिक रही है या कम बिक रही है तो उसका विक्रय मूल्य घटाकर उसकी प्रदर्शनी अलग रूप से करता रहे जिससे किसी चीज मे रुपया फँसा न रह कर उसका लौट फेर शीघ्र होता रहे।

(६) नई ब्राँच या कारखाना स्थापित करना—

इसकी आवश्यकता निम्न हालतों में पैदा हो सकती है:—

१—यदि अपनी दूकान की बिक्री इतनी बढ़ गई हो कि एक दूकान से ग्राहकों को सुविधापूर्वक निपटाने में देर लगती हो, और अपने पास अनुभवी कर्मचारी और धन तथा व्यवस्थापक नयी दूकान दूसरे स्थान पर जहाँ बिक्री अधिक होने की सम्भावना है खोलने के लिये काफ़ी हों।

२—यदि कहीं नई आबादी अथवा नगर बड़े पैमाने पर बस रहा हो और वहाँ काम करने वाले अथवा रहने वाले काफ़ी संख्या में हो गये हों।

३—यदि अपने यहाँ के ग्राहक अधिक संख्या में किसी विशेष कारण से दूसरे नगर में जा बसे हों अथवा वहाँ जलवायु सेवन के लिये हर वर्ष जाते हों।

४—यदि अपने किसी सम्बन्धी आदि को नई दूकान खोल कर स्थापित करना हो।

५—यदि अपने यहाँ बिकनेवाली चीज़ें कहीं से अधिक आती हों अथवा उन्हें वहाँ पर ही बनवाने में किफ़ायत होती हो तो उस स्थान पर डिपो अथवा ब्राँच खोल देना सुविधा-जनक हो सकता है।

६—यदि ब्राँच अथवा डिपो किसी स्थान पर खोलने से अपने यहाँ का बना माल इतना बिकने की सम्भावना हो कि उसके सम्पूर्ण खर्चे निकालकर लाभ अधिक हो।

ब्राँच अथवा डिपो खोलने का निर्णय करने के पहले नीचे लिखी बातों पर पूर्ण रूप से विचार कर लेना चाहिये :—

१—जिस स्थान पर ब्राँच अथवा डिपो खोलना हो वहाँ की आबादी कितनी है, और उसमें से कितनी ऐसी है जो अपने यहाँ से व्यवहार करने के योग्य है, और कहाँ तक उन पर निर्भर होकर ब्राँच आदि वहाँ खोलना ठीक होगा, अथवा कितने दिनों में वहाँ की आबादी इतनी हो जाने की सम्भावना है कि वहाँ ब्राँच स्थापित करने में लाभ होगा।

२—जिस स्थान पर ब्रांच आदि स्थापित करने का विचार है वह उसके अनुकूल है या नहीं। तथा वहाँ पर उस प्रकार की और कोई दूकान है या नहीं, यदि हैं तो कैसी चलती है।

३—वहाँ के खर्चे इतने तो नहीं हैं कि लाभ से अधिक हो जावें।

४—उसको चलाने के लिये पर्याप्त धन अथवा व्यवस्थापक और अन्य अनुभवी कर्मचारी आदि का प्रबन्ध है या नहीं।

४—वहाँ बिजली, पानी, टेलीफ़ोन आदि की सुविधा तथा पुलिस का प्रबन्ध ठीक है या नहीं।

प्रारम्भ में मुख्य व्यवस्थापक अथवा मालिक को उसको स्थापित करने में स्वयं भाग लेना चाहिए जिससे नौकरों में नया उत्साह पैदा हो कर उनकी कठिनाइयों का उचित प्रबन्ध तत्काल हो सके, और उसे देख कर पुराने ग्राहक आदि दूकान पर आने लगें। यदि ब्रांच का संचालक वैतनिक कर्मचारी हो तो उसका उत्साह सदा जारी रखने के लिये वहाँ के कुल बिक्री धन पर कमीशन अथवा निखर्चे मुनाफ़े में से कुछ भाग नियत कर देना चाहिये। आवश्यकतानुसार उसके इकरारनामे (Agreement) में एक शर्त यह भी होनी चाहिये कि किसी विशेष कारण से उसको वहाँ से अलग किए जाने पर वह अपना काम उसी प्रकार का वहीं या उसके आस पास में स्थापित करने की एक निश्चित समय तक स्वातन्त्रता नहीं होगी।

ब्राँच खोलने से निम्नलिखित लाभ होते हैं :—

१—अपने यहाँ के ग्राहक अन्य स्थानों पर चले जाने पर भी विचलित नहीं होते, बल्कि उनके सहारे और नये ग्राहक बनते हैं।

२—कार्य बढ़ने के साथ दूकान या कारखाने का नाम भी बढ़ता है, जिससे व्यापार बढ़ता है और खर्च बढ़ने की अपेक्षा लाभ की मात्रा अधिक बढ़ती है। साथ ही अनुभवी कर्मचारियों की तरक्की के साथ साथ उनसे लाभ भी अधिक होता है।

३—कारखाने के बने माल को बेचने में बड़ी सुविधा होती है और जो कमीशन उसके बेचने के लिये स्थानीय एजन्ट को दिया जाता था वह बचता है।

ब्राँच उसी अवस्था में खोलनी चाहिये जब कि यह निर्विवाद सिद्ध हो सके कि उसके खोलने से अभी नहीं तो निकट भविष्य में अवश्य लाभ होगा, और उसके कारण उसके मुख्य व्यापार में कोई हानि नहीं होगी, बल्कि न खोलने से हानि की सम्भावना है। काम बढ़ाने के सुअवसर कम ही मिला करते हैं, अड़चनें सदा अपना विकराल रूप धारण किये उपस्थित रहती ही हैं, उनकी परवाह न करके जहाँ तक हो सके अपनी उन्नति के सुअवसर को बिना उनसे लाभ उठाये खोना नहीं चाहिये।

यदि कारखाने के रूप में किसी दूसरे स्थान पर नया काम स्थापित करना हो तो मुख्यतः उन्हीं विचारों को काम में लाना चाहिये जो कि एक नया कारखाना स्थापित करने में लाये जाते हैं। लेकिन यदि वह अच्छे प्रकार से इस कारण नहीं चल रहा है कि वह कच्चा माल मिलने अथवा उसके बने माल की बिक्री के ठिकाने से दूर है तो उसे नये ठिकाने में जहाँ इन बातों की सुविधा हो, ले जाने में देर नहीं करनी चाहिये। बशर्ते कि ऐसा करने में जो खर्चा हो वह इतना न हो कि बाद में कारखाना चलाने के लिये धन कम पड़ जाय। यत्न इस प्रकार होना चाहिये कि अपना चालू कारखाना तब तक न बन्द किया जाय जब तक

नया कारखाना जारी न हो जावे, और उसका माल बिकने न लगे। साथ ही साथ यह भी यत्न होना चाहिये कि जब तक नये ठिकाने माल बनकर सपलाई (supply) न होने लगे, पुराने ठिकाने का बना माल बराबर सपलाई (supply) होता रहे।

(१०) कारखाने की उन्नति सम्बन्धी विचार—

नीचे लिखे कुछ विचार मुख्यतः कारखानों की उन्नति के सम्बन्ध में प्रकट किये जाते हैं :—

किसी कारखाने की उन्नति मुख्यतः उसके अच्छा माल बनाने पर निर्भर है। अच्छा माल बनाने वाले कारखाने केवल अपनी ही उन्नति नहीं करते बल्कि उनके कारण उस स्थान तथा देश का नाम भी हो जाता है जहाँ पर वे स्थित हैं। दस्तकारी में हमारा देश बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ की बनी बहुत सी चीजें बाहर लाखों रुपये की बिकने जाती हैं, जैसे मिर्जापुर के कालीन, बनारस की साड़ियाँ, फर्रुखाबाद का छपाई का काम, लखनऊ की कढ़ाई व चिकन आदि का काम, अलीगढ़ व मुरादाबाद की धातु की बनी चीजें, मैसूर व सहारनपुर की लकड़ी की बनी चीजें, तथा आगरा और कानपुर की चमड़े की बनी चीजें। इसी प्रकार यदि और भी वस्तुओं में यहाँ के कारीगर तथा वैज्ञानिक उन्नति करें तो यहाँ की आर्थिक दशा सुधरकर लोगों की खरीदने की शक्ति बढ़े। लेकिन यह बहुत कुछ हमारे कारखानेवालों और मजदूरों की रुचि पर निर्भर है। यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया और सस्ता माल बना कर ही बाजार में किसी न

किसी प्रकार खपाने की चेष्टा होती रही तो न कारखानों की स्थायी उन्नति हो सकती है और न देश की ही। वास्तविक उन्नति तभी सम्भव है जब कि जो भी माल बने वह भरसक अच्छा और मजबूत बने और उसमें किसी प्रकार का धोखा न हो और वह बाजार में तभी बिकने के लिए भेजा जावे जब कि वह पूर्ण रूप से अच्छा हो और अच्छी प्रकार से बन्द (pack) किया गया हो। हमारी औद्योगिक उन्नति इस बात पर भी निर्भर है कि उपभोक्ताओं में देश की ही बनी चीजों को व्यवहार में लाने की, और विक्रेताओं को उन्हें बेचने की लगन हो, यदि ऐसा करने में उन्हें कुछ असुविधा भी हो तो भी उसे वे प्रसन्नतापूर्वक कुछ दिन सहें जब तक कि वे पूर्ण रूप से उन्नति के शिखर में न पहुँच जावें। साथ साथ यह भी यत्न होना चाहिये कि जहाँ से भी देश का बना अच्छा माल मिल सके वहीं से उसे मंगवा कर बेचना चाहिये। सोचने की बात है कि जब विदेशी शासन काल में हमारे देश ने इतनी उन्नति कला कौशल में करली है, और यहां हर प्रकार का कच्चा माल मिल सकता है तो फिर उसके स्वतन्त्र होने पर इस वैज्ञानिक काल में जितनी उन्नति हो जावे कम है। लेकिन यह कार्य यहाँ के वैज्ञानिकों, कारीगरों, उद्योगपतियों, दूकानदारों तथा उपभोक्ताओं सब ही के सहयोग से हो सकता है। यहां के उच्च श्रेणी के उपभोक्ताओं पर इसका विशेष दायित्व है, क्योंकि उन्हें देशी चीजों को व्यवहार में लाते देखकर अन्य श्रेणी के लोग

भी उनका अनुसरण करते हैं। यदि देश की बनी वस्तुओं में कोई त्रुटि हो अथवा उनमें उन्नति की गुंजायश हो तो उपभोक्ताओं तथा दूकानदारों को चाहिये कि उसके बनाने वाले कारखानों को इसकी सूचना दें। जो नई नई चीजें आविष्कार में आवें उनकी ओर दूकानदारों को विशेष ध्यान देना चाहिये क्योंकि ऐसा माल यदि उपयोगी हुआ तो शीघ्र ही प्रयोग में आकर उसकी बिक्री बढ़ जाती है और उसमें लाभ भी अधिक होता है। ऐसी चीजों का ज्ञान प्रायः प्रदर्शनियों में आसानी से होता रहता है।

देश के उद्योग धन्धों को बढ़ाने में सरकार की भी बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। उसे चाहिये कि वह नये नये उद्योग धन्धों को विशेष रूप से प्रोत्साहन देती रहे और उनमें लगे हुए कारखाने वालों की समस्याओं को सुलझाती रहे जिससे प्रारम्भिक कठिनाइयों के कारण हताश होकर वे उन्हें छोड़ न दें, और उनके सफल होने पर दूसरे लोगों को भी प्रोत्साहन मिले। आजकल हर एक बड़े नगर में सरकार की ओर से उद्योग विभाग के इन्सपेक्टर नियत हैं उनसे अपनी कठिनाइयों के बारे में परामर्श करते रहना चाहिये, और विशेष जानकारी के लिये प्रान्तीय अधिकारियों से पत्र व्यवहार करके या मिलकर अपनी कठिनाइयों का निवारण कराना चाहिये।

भली प्रकार से चलते हुए कारखानेवालों को अपने माल से संबन्धित दूकानदारों की कठिनाइयों का ज्ञान प्राप्त करके उन्हें

निवारण करते रहना चाहिये। पर ऐसा करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि वे अपनी निजी खातिर की अपेक्षा ऐसी रियायत का अधिक स्वागत करेंगे जिससे उनका माल अधिक बिके, ताकि उन्हें मुनाफ़ा अधिक हो। ऐसा करने के लिये कम खर्च की उपयोगी चीजें, जैसे हाथ के पंखे, झोले, रूमाल, चाकू, पैंसिल, कलेन्डर आदि ग्राहकों मे बाँटने के लिए उन्हे देना चाहिये। इन पर कारखानों या उनकी बनी चीज़ों का नाम तथा चित्र आदि अंकित होना आवश्यक है।

देश के बाहर यदि व्यापार करना हो तो इस सम्बन्ध में हर प्रकार की जानकारी नीचे लिखे सरकारी विभाग से पत्र-व्यवहार करके अथवा मिलकर प्राप्त करनी चाहिये :—

Director General of Commercial Intelligence and Statistics, India.

1, Council House, Calcutta.

इसके अतिरिक्त इस देश मे अन्य देशों के अथवा अन्य देशों मे यहाँ के Embassy अथवा Consulate General से भी सम्पर्क करके मौके व सुविधानुसार अपना काम बढ़ाने की व्यवस्था की जा सकती है। बाहर माल भेजने की योजना उसी अवस्था मे बनानी चाहिये जब कि काम अच्छे प्रकार का और बहुसंख्या मे बनाकर भेजा जा सके।

(११) बढ़ते हुए व्यापार का प्रबन्ध—

अधिकांश देखने मे आता है कि काम बढ़ने के साथ साथ

व्यापारी उसके अनुरूप प्रबन्ध करने या उसे बदलने में बड़ी ढील करते हैं। काम के बढ़ने के साथ साथ वे कर्मचारियों में जिम्मेदारी की भावना नहीं उत्पन्न करते, जिसके कारण वे स्वयं अपने लिये इतना काम बढ़ा लेते हैं कि जिसकी सीमा नहीं रहती। जिस कर्मचारी को देखो वह उससे सीधा व्यवहार कर के अपनी जरा जरा सी अड़चने उपस्थित करता रहता है और जहाँ वह स्वयं नहीं देख पाता वहाँ का काम बिगड़ता रहता है, जिसके कारण क्षण क्षण पर उसका ध्यान उचाट होता रहता है, और वह शान्तिपूर्वक कोई काम नहीं करने पाता, या उन्नति की बात नहीं सोच सकता। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि जैसे जैसे काम बढ़ता जावे उसके अनुरूप उसका प्रबन्ध करता जावे या आवश्यकतानुसार नये नये विभाग बना कर एक मुख्य कर्मचारी नियत करता जावे, ताकि ज्यों ज्यों वह बढ़ता जावे और उसके लिये नये सहायक कर्मचारी नियत होते जावें, त्यों त्यों उस विभाग के मुख्य कर्मचारी की ही जिम्मेदारी बढ़ती जावे, और उसके सहायक कर्मचारी असमंजस तथा अटकाव की बातें उससे ही बता कर उसके निर्णय अनुसार काम करते जावें। मालिक को यदि कोई बात उस विभाग के सम्बन्ध में करनी हो तो उसके मुख्य कर्मचारी द्वारा ही करे। ऐसा करने से काम सुविधा और शीघ्रता से चलेगा और हर एक विभाग का मुख्य कर्मचारी अपनी पूरी जिम्मेदारी तथा दिलचस्पी से उसमें काम करेगा, क्योंकि यदि उसमें कोई बात

खराबी की होगी तो उसके लिये वही उत्तरदायी होगा। लेकिन साथ साथ इस बात का ध्यान रखना भी जरूरी है कि किस विभाग का मुख्य कर्मचारी कितनी योग्यता रखता है, उसी के अनुसार उस विभाग की जिम्मेदारी उस पर छोड़ना चाहिये, और उसकी योग्यतानुसार ही उसको किसी विभाग का जिम्मेदार संचालक बनाना चाहिये। उसके सहायक अथवा नीचे काम करने वाले कर्मचारी भी ऐसे होने चाहियें जो उसके प्रतिकूल न हों, क्योंकि जितनी अच्छी तरह मिल जुल कर काम चला करता है वह एक दूसरे के विपरीत होकर नहीं चल सकता। मालिक को सदा हर विभाग में उन्नति की ओर ध्यान रखना चाहिये और उसी के अनुकूल वातावरण भी पैदा करते रहना चाहिये। उन्नति सदा अनुकूलता पर ही निर्भर है न किं प्रतिकूलता या विरोध पर। हाँ, इस बात की आवश्यकता भी माननी पड़ेगी कि कर्मचारियों की यदि कोई गुप्त भावना अपने व्यापार के प्रतिकूल हो तो उसको भी ज्ञात होते रहना चाहिये, जिससे कि किसी प्रकार का धोखा न होने पाये। उनमें किसी प्रकार की बद्‌गुमानी अथवा बिगाड़ की बात पैदा होने ही नहीं देना चाहिये, और यदि हो जावे तो उसको तुरन्त पता लगा कर निवारण कर देना चाहिये। ऐसा न करने से कभी कभी मामूली बातें गम्भीर रूप धारण कर लेती हैं, और उनका पता तभी चलता है जब कि वह अपने विकराल रूप में उपस्थित होती हैं, फिर उनका निवारण करना एक समस्या हो जाती है।

किसी भी व्यापार का संचालन करना आसान काम नहीं है। इसमें बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिये जब भी कोई त्रुटि मालिक या मुख्य व्यवस्थापक को नज़र आये अथवा उसकी सम्भावना मालूम पड़े तो तत्काल ही उसे उस विभाग के संचालक से प्रेमपूर्वक परामर्श कर उसकी सहानुभूति के साथ उसे निवारण करने का प्रयत्न करना चाहिये। यदि बिक्री कम होती है या माल कम बनता है तो उसके ठीक ठीक कारणों को जान कर उसको बढ़ाने के उपायों पर विचार विनिमय कर के जो राय क़ायम हो उसके अनुसार तत्काल काम करना चाहिये।

(१२) सुअवसरों से लाभ उठाना—

कारोबारी संसार में जितने उन्नति के अवसर मिलते हैं उतने दूसरे व्यवसायों में प्रायः नहीं मिलते। यही कारण है कि इस व्यवसाय में लगा हुआ मामूली समझ और ज्ञान वाला आदमी भी अवसर मिलते ही धनवान होकर प्रतिष्ठित बन जाता है। इस देश में व्यापारियों की अधिक संख्या मामूली लिखे पढ़े लोगों की होने के कारण उसमें उन्नति ठीक ढंग से नहीं हो रही है। जरा से प्रलोभन में पड़कर वे सच्चाई और ईमानदारी के पथ से डिगकर अपने व्यापार और कीर्ति को धक्का पहुँचाते रहते हैं और वास्तविक उन्नति नहीं कर पाते।

हर एक व्यापारी अपने व्यवसाय में अवसर प्राप्त होने पर विशेष उन्नति कर सकता है यदि वह दूरदर्शिता, अनुभव और

ज्ञान से काम ले। ऐसा करने के लिये इस व्यवसाय में पूर्ण रूप से शिक्षितों की विशेष आवश्यकता है। जितनी सुविधा पूर्वक वे अपना ज्ञान तथा अनुभव बढ़ा कर कार्य करके सफलता प्राप्त कर सकते हैं उतनी सुविधा पूर्वक और अच्छी प्रकार से कम शिक्षित या अशिक्षित व्यापारी अपना काम नहीं बढ़ा सकते। हर एक सुअवसर का पूर्ण उपयोग करना एक व्यापारी अथवा कारखाने वाले के लिये मृत्यु और जीवन का सवाल है। एक लैटिन लेखक ने लिखा है कि "अवसर के चेहरे पर बाल रहते हैं, पीछे की ओर वह गंजा होता है। यदि तुम सामने के उसके बाल पकड़ लो तो उसे पकड़े रह सकते हो यदि ऐसा न कर सकोगे तो उसे देवता भी नहीं पकड़ पावेंगे।"

अवसर को पहचानना भी एक आसान काम नहीं है। उसे पहचानने के लिये और उससे लाभ उठाने के लिये उसके अनुकूल ज्ञान पहले से होना चाहिये, नहीं तो अच्छे से अच्छे अवसर आकर यों ही निकल जायेंगे और फिर पछताते ही रह जाना होगा। यदि आप में इच्छा शक्ति है और काम करने का उचित अनुभव और ज्ञान है तो फिर अपने बल और पौरुष के भरोसे अवसर को पकड़ लीजिये, फिर परमात्मा की सहायता का भरोसा करके कार्य में जुट जाइये। एक बार उसमें सफलता न हो न सही, नुकसान हो जावे कुछ परवाह नहीं, हतोत्साह न हो। हानि हतोत्साह होने में है, कार्य करने में नहीं। जो अनुभव आपने प्राप्त कर लिया है उससे आगे लाभ अवश्य होगा।

परिश्रम का फल अवश्य मिलेगा, अभी नहीं आगे मिलने वाले अवसर पर मिलेगा। यदि आपकी भावना अच्छी है और वीरता और दृढ़ता से काम में लगे रहना जानते हैं तो आपको सफलता तथा उन्नति प्राप्त हो कर रहेगी। व्यापार एक संग्राम है उसमें हार जीत, लाभ, हानि भाग्य अनुसार होते रहते हैं। विचार केवल इस बात का रखना चाहिये कि कोई ऐसा काम न कर बैठे जो अपनी शक्ति से बाहर हो। अवसर मिलने पर जोखिम का काम करते झिझकना नहीं चाहिये, यदि उसके सम्बन्ध में अनुभव और ज्ञान है तो फिर डर किस बात का? यदि अधिक लाभ पर थोड़ी हानि की सम्भावना हो तो काम कर डालना ही अच्छा होता है, न करने से आगे के लिये भी साहस जाता रहता है, और अवसर आ आकर यों ही निकल जाते हैं। सतर्कता से अवसर की ताक में रहना, कौशल और साहस से उसे पकड़ना, शान्ति और दृढ़ता के साथ उससे लाभ उठाना निश्चय ही सफलता देने वाले प्रधान गुण हैं।

कुल व्यापारी वर्ग को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, एक तो वे जो खतरे का काम कर के अपना रुपया फंसाना नहीं चाहते, दूसरे वे जो कुछ जोखिम का काम भी करते रहते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि बिना थोड़ी बहुत जोखिम के विशेष लाभ नहीं हो सकता। वे अपने रुपये को सदा चक्कर देते रहते हैं। उन्हें रुपया इतना प्यारा नहीं होता कि वे उसे तिजोरी की कैद से निकालें ही नहीं। यह माना कि कभी कभी वह जाकर

फँस भी जाता है और पूरा पूरा नहीं लौट पाता। लेकिन यदि यही सोचा जावे तो व्यापार सम्बन्धी कोई जोखिम का काम कभी किया ही न जाय। इसका फल यह होता है कि पहली श्रेणी के व्यापारी बहुत कम उन्नति कर पाते हैं और दूसरी श्रेणी के व्यापारी यदि कभी हानि हो भी जावे तो वे उसे दूसरे अवसर से लाभ उठा कर पूरा कर लेते हैं, और इस प्रकार उन्नति कर जाते हैं। बहुत से व्यापारी भाग्य के ही सहारे रह जाते हैं, उद्योग अथवा साहस करना जानते ही नहीं। ऐसे लोगों से लक्ष्मी दूर से ही प्रणाम करके अन्य उद्योगी तथा साहसी पुरुषों से अपना सम्बन्ध स्थापित करती है। जोखिम का काम करते समय यदि दूरदर्शिता और समझदारी से, न कि आवेश में आकर, काम किया जावे तो हानि की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। यदि किसी चीज़ का भाव किसी समय कम है और कुछ दिन बाद उसके महँगे होने पर कम मिलने की सम्भावना है तो उसको अधिक मात्रा में लेकर या बनवाकर लाभ उठाने में चूकना नहीं चाहिये। यदि किसी विशेष कारण से उसका भाव आगे चलकर गिर जाता है और उसमें लाभ होने की आशा नहीं रहती तो उसमें जो नुकसान होगा वह सहर्ष सहकर फिर दूसरे अवसर पर उससे लाभ उठाने की चेष्टा करना चाहिये, लेकिन नुकसान से हतोत्साह किसी प्रकार नहीं होना चाहिये। एक व्यवसायी को यह भी ध्यान रखना चाहिये कि संसार में केवल भाग्य के बल पर उन्नति करने वाले बहुत कम व्यापारी

होते है, लेकिन पुरुषार्थ से बढ़े हुए असंख्य हैं।इसलिये उसे सदा पुरुषार्थ का ही अवलम्बन करना चाहिये। पुरुषार्थ से ही भाग्य बनता है। विधिपूर्वक पुरुषार्थ करते रहने से कभी न कभी उसका फल अवश्य मिलता है, वही उसके लिये उन्नति का कारण बनता है और सुअवसर भी पैदा करता है।

———

अध्याय ६

दाम और मुनाफ़ा

(१) दाम नियत करना—

किस वस्तु के क्या दाम उसकी बिक्री के लिये नियत किये जावें, यह विषय एक व्यापारी के लिये बड़े महत्व का है। इसी पर उसकी जीविका तथा दूकान या कारखाने के कुल व्यय निर्भर रहते हैं। ये व्यय मुख्यतः इस प्रकार हैं:—

१—व्यापार मे लगी पूँजी अथवा उधार की रकम पर ब्याज।

२—दूकान का किराया, मरम्मत, सजावट आदि के खर्चे और यदि दूकान अपनी हो तो उसकी वार्षिक छीजन तथा उसमें लगी पूँजी पर ब्याज।

३—व्यवस्थापक तथा अन्य कर्मचारियों के वेतन आदि के खर्चे।

४—एजन्ट आदि का कमीशन, बोनस, डिसकाउन्ट (discount) आदि।

५—बिजली (रोशनी, पंखा, पावर power) आदि।

६—फ़र्निचर की रद्द व बदल, मरम्मत, छीजन आदि।

७—मशीनरी की रद्द व बदल, छीजन, मरम्मत आदि।

८—विज्ञापन, छपाई आदि के खर्चे।

९—स्टेशनरी, डाक व्यय आदि।

१०—पैकिंग, ढुलाई आदि।

११—हिसाब किताब तथा उसकी जाँच के खर्चे।

१२—सरकारी बिक्री-कर तथा आय-कर, चुङ्गी आदि।

१३—माल की छीजन, कमी आदि।

१४—चन्दे, दान आदि।

१५—अन्य फुटकर खर्चे।

उपरोक्त खर्चों के अतिरिक्त एक व्यापारी को अपने परिश्रम तथा उपयोगिता का मूल्य भी मुनाफ़े के रूप मे लेना होता है, जिससे उसके निजी खर्चे चलते हैं, तथा व्यापार में उन्नति का साधन प्राप्त होता है।

यह कहना कि उपरोक्त खर्चे तथा मुनाफ़ा किस माल पर कितने की दर से लगाया जाना चाहिये बहुत कठिन है। परन्तु कुल वर्ष भर के खर्चे कुल वर्ष की बिक्री के अनुसार ही नियत होने चाहिये, और यदि वे एक निर्धारित अंश से बढ़ जाते हैं तो या तो बिक्री बढ़ाने के उपाय करने चाहियें, अथवा उन्हें कम करना चाहिये। लेकिन यदि कुल खर्चे निर्धारित संख्या या अंश से अधिक नहीं हुए हैं, और बिक्री भी कम नहीं हुई है पर लाभ कम हुआ है, तो इसके कारणों को जाँच करनी चाहिये क्योंकि यह इस बात का सूचक है कि या तो व्यापार ऐसी वस्तुओं का अधिकांश किया गया है जिनमे लाभ कम हुआ अथवा दूकान

में माल की चोरी हो रही है, या वह खराब हो रहा है जिसके कारण उसमें पूरा लाभ नहीं हुआ।

हरएक माल पर एक सा मुनाफ़ा नहीं रखा जा सकता। जो चीज़ कम या कभी कभी बिकती है उस पर अधिक और जो अधिक बिकती है उस पर कम मुनाफ़ा रखना यह एक व्यापारिक सिद्धान्त है, क्योंकि इसमें लगा धन शीघ्र लौट फेर होकर उस पर वर्ष में कई बार मुनाफ़ा होता रहता है। अन्य विचार जो मुनाफ़े की दर नियत करने में काम में लाये जाने चाहियें वे निम्नलिखित हैं:—

१—यदि कोई मौसिमी माल है तो इस बात का विचार करना चाहिये कि उसको मँगाकर रखने में कितना धन, कितने समय तक लगा रहेगा, और मौसिम के बाद कितना माल बच जाने की आशंका है, और उस माल की कुल बिक्री का वह कौन सा अंश होगा।

२—रखा रहने से कितने दिन तक माल खराब नहीं होगा। आगे चलकर उसके दाम गिर जाने की तो सम्भावना नहीं है?

३—उसके ऊपर सरकारी बिक्री कर, चुंगी आदि किस दर से लगती है।

४—यदि वह एजन्ट द्वारा बिकने की चीज़ है तो एजन्ट को कितना कमीशन आदि उस पर देना होगा।

५—यदि उस पर किराया रेल, बारदाना आदि पड़ेगा तो उसकी क्या दर होगी।

६—यदि वह आसानी से टूटने वाली, शीशे आदि की वस्तु है तो उसकी टूट-फूट भी मुनाफ़े की दर में शामिल करना चाहिये।

खर्च तथा मुनाफ़ा लगाकर यह भी देखना चाहिये कि वह चीज़ अधिक से अधिक कितने में बिक सकेगी, और यदि दूसरे बिक्रेता उसे बेच रहे हैं तो उनके क्या रेट हैं। साधारणतः किसी चीज़ के खरीदने के खर्चों और मुनाफ़े को मिलाकर प्रति रुपया तीन आने से अधिक उसकी बिक्री के मूल्य में वृद्धि नहीं होनी चाहिये। यदि वह अपने यहाँ कारखाने आदि में बना हो तो उस पर कच्चे माल तथा श्रम के व ऊपरी खर्चे जोड़ कर सवाय से ड्योढ़े तक रखना उचित होगा, क्योंकि उसको बेचने के कई खर्चे, जैसे एजन्ट का कमीशन, रेल-भाड़ा आदि उस के बिक्री धन में से प्रायः घटाने पड़ते हैं।

ऐसी चीजें जो अधिक मात्रा में निकलती हों, जैसे खाद्य पदार्थ, और जो शीघ्र बिगड़ने वाली भी न हों उन पर बिक्रेता को एक आने से दो आने रुपया, और बनाने वाले को तीन चार आने रुपया तक मुनाफ़ा लेकर बेचना चाहिये। लेकिन यदि वह शौकीनी माल है, या शीघ्र बिगड़ने वाला है तो उस पर मुनाफ़े की दर और भी बढ़ाई जानी चाहिये। थोक बिक्री करने वालों को कम से कम मुनाफा रखना चाहिये। यदि किसी विशेष कारण से किसी चीज़ का बाजार भाव बढ़ गया हो तो उसे बढ़े भाव से बेचकर अधिक मुनाफ़ा लेना व्यापारिक दृष्टि से

बिलकुल उचित है। हाँ यदि किसी विशेष कारणों वश, जैसे मूल्य वृद्धि को रोकने के लिये सरकारी योजना इस प्रकार की वृद्धि के विरुद्ध हो तो उसके विपरीत कभी न करना चाहिये।

हर दशा मे एक दूकानदार को इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि वह किसी वस्तु का मनमाना दाम नहीं ले सकता। यदि वह ऐसा करेगा तो उसकी बिक्री गिर जावेगी। उसे सदा इस बात की चेष्टा करनी चाहिये कि वह जहाँ तक हो सके ऐसा माल ला लाकर अपने यहाँ बेचे जो दूसरे विक्रेताओं के पास न हों। साथ ही साथ ऐसा माल भी हो जो अधिक बिकने वाला हो चाहे, उसमें मुनाफ़ा कम ही मिले। किसी चीज़ को जो दूसरे दूकानदारों के यहाँ भी बिकती हो उनसे कम दाम मे बेचने की चेष्टा हरगिज़ न करे, इससे बेकार का नुकसान होता है और दूसरे दूकानदारों से बुराई पैदा होती है। बेचने की अपनी योग्यता तथा ग्राहकों के साथ सदाचार अथवा नम्रता का बर्ताव और माल का मेल बनाये रखने से और हर एक ग्राहक के साथ उसकी मनोवृत्ति के अनुसार व्यवहार करने से अधिक बिक्री और लाभ होता है, न कि माल को दूसरे दूकानदारों से कम दाम में बेचने से।

मौसिमी अर्थात् ऋतु सम्बन्धी माल, अथवा ऐसी चीजें जो प्रारम्भ में छाँट छाँट कर बिकने वाली हों उनका दाम इस प्रकार से रखना चाहिये कि बाद में बचे हुए माल को यदि दाम कम करके बेचना पड़े तो उसमें घाटा न हो। यदि अपने कारखाने

आदि में बना माल बेचने के लिये दूकान में मंगवाकर अथवा उसे कमीशन एजन्ट द्वारा बेचना हो तो उस पर बेचने के सब खर्चे उसी रूप से जोड़ने चाहियें जैसे अन्य बिकनेवाले माल पर, ताकि उसको बेचने के खर्चे, नुकसान आदि उसको बनाने के खर्चे, नुकसान आदि से अलग रहें।

एक व्यापारी को अपने कुल खर्चों को अपने मुनाफ़े के एक निश्चित अंश से अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिये। निखर्चे मुनाफ़े की कुल मात्रा इतनी जरूर होनी चाहिये कि न केवल उसके निजी खर्चे उससे चलते रहें, बल्कि व्यापार की उन्नति के लिये कुछ धन भी शेष बचता रहे। इसका यह अर्थ नहीं है कि वह अपने निजी खर्चे इतने बढ़ा ले कि सब मुनाफ़ा उन्हीं में खप जावे, या उनका निखर्चे मुनाफ़े से पूरा पड़ना कठिन हो जावे। उन्नति किफ़ायत से चलने और अधिक से अधिक बिक्री करने पर निर्भर रहती है, न कि अधिक मुनाफ़ा लेने पर। मुनाफ़े की दर बढ़ाकर व्यापार करना व्यापारी के बस की बात नहीं होती, कभी कभी अवसर मिलने की बात दूसरी है। इसलिये उस पर निर्भर होकर अपने स्थाई खर्चों को, चाहे वे दूकान के हों अथवा घर के, नहीं बढ़ाना चाहिये।

एक दूकानदार अथवा कारखानेदार को सदा बिक्री के अनुसार अपने व्यापार सम्बन्धी चालू खर्चों को बढ़ाते घटाते रहना चाहिये, क्योंकि बिक्री पर ही वे कायम रखे जा सकते हैं। यदि खर्चे पर्याप्त रूप से कम नहीं हो सकते तो जिस तरह हो सके

बिक्री बढ़ाने का यत्न करना चाहिये। अथवा कोई अन्य प्रकार का कार्य साथ साथ करके अपनी आमदनी बढ़ानी चाहिये। यदि ऐसा न किया गया तो घाटा अनिवार्य हो जावेगा। कर्मचारियों के सम्बन्ध में एक नियम यह भी होना चाहिये कि उनसे सम्बन्धित सभी खर्चे कुल बिक्री धन के एक निश्चित अंश से अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिये, और यह अंश जहाँ तक हो सके हर एक विभाग का अलग अलग नियत करना चाहिये, जैसे हिसाब किताब सम्बन्धी कर्मचारियों का कुल व्यय कुल बिक्री का $\frac{१}{२}$ प्रतिशत, बिक्रेताओं का कुल व्यय $१\frac{१}{२}$ प्रतिशत, अन्य कर्मचारियों का $\frac{१}{२}$ से १ प्रतिशत, किराया दूकान १ प्रतिशत, बिजली आदि का खर्च $\frac{१}{२}$ प्रतिशत। अन्य खर्चे $१\frac{३}{४}$ से $२\frac{१}{४}$ प्रतिशत। इस प्रकार दूकान के सब खर्चे $६\frac{१}{४}$ प्रतिशत से अधिक नहीं होने चाहियें। ये अंश इस बात को ध्यान में रखते हुए सुझाये गये हैं कि बिक्री के मूलधन पर औसतन १० प्रतिशत से अधिक मुनाफ़ा नहीं रखा जा सकता। यदि कुल बिक्री पर इतना लाभ नहीं होता तो उपरोक्त अंशों की मात्रा और भी कम कर देनी चाहिये।

(२) वार्षिक आय व्यय के नक़्शों की जाँच—

वार्षिक आय व्यय के नक़्शे देखते समय हर वर्ष के आँकड़े इस प्रकार जाँचने चाहियें कि उनसे यह मालूम हो सके कि व्यापार में लगी पूँजी की अपेक्षा कुल बिक्री कितनी हुई, और उस पर कुल मुनाफ़ा तथा निखर्चा मुनाफ़ा कितने अंश में हुआ।

यदि कुल मुनाफ़ा अधिक है पर निखर्चा मुनाफ़ा पर्याप्त रूप से नहीं है तो यह इस बात का सूचक है कि दूकान के खर्चे बढ़े हुये हैं जो कि कम करने चाहियें। इसके विपरीत यदि कुल मुनाफ़ा कम है लेकिन निखर्चा मुनाफ़ा काफ़ी है तो वे बढ़ाये जा सकते हैं। यदि नुकसान हो रहा है या निखर्चा मुनाफ़ा कम हो रहा है, तो कुछ ही अंश में मुनाफ़ा बढ़ जाने से निखर्चा मुनाफ़ा अधिक अंश में बढ़ जावेगा। ऐसा या तो अधिक माल बेचकर या किसी ऐसे माल पर जिसमें गुंजायश हो मुनाफ़े का अंश बढ़ाकर हो सकता है। यदि कोई ऐसा माल हो जिससे लाभ कम होता है और उसके न बेचने से दूसरे माल की बिक्री पर कोई विशेष फ़रक नहीं पड़ेगा तो उसका बेचना बन्द कर देना चाहिये। उसके बजाय दूसरा अधिक बिकनेवाला अथवा अधिक मुनाफ़े वाला माल मँगाकर बेचना चाहिये। ऐसा करने से बिक्री भी बढ़ेगी तथा कुल पूँजी पर मुनाफ़े का अंश भी। यदि बिक्री के आँकड़े अधिक हों और खर्चे भी कम हों, पर निखर्चा मुनाफ़ा अधिक न हो तो यह इस बात का सूचक है कि कहीं नुकसान हुआ है जिसका कि पता लगाना चाहिये।

(३) खर्चे कम करना—

खर्चों में यदि किफ़ायत करने की आवश्यकता प्रतीत हो, इस कारण कि बिक्री नहीं बढ़ाई जा सकती, तो नीचे लिखे विचारों पर ध्यान देना चाहिये :—

१—कौन कौन से खर्चे लगातार अथवा अधिकांश होते

रहते हैं जिनको कम किया जा सकता है। ऐसा करने के लिए इस प्रकार के सब खर्चों की अथवा कर्मचारियों की सूची बनाकर एक एक विचार करना चाहिये कि वे किस प्रकार से बन्द अथवा कम किये जा सकते हैं। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि यथासम्भव कोई खर्चा ऐसा न कम किया जावे जिससे कि बिक्री पर बुरा असर पड़े।

२—यदि माल पहुँचाने अथवा पैक करने मे किफ़ायत की जा सकती हो या बिजली का खर्चा कम किया जा सकता हो, तो उसे तत्काल कम कर देना चाहिये। किन्तु साथ ही साथ दूकान की शोभा अथवा माल की सजावट अथवा ग्राहकों की सुविधा में किसी प्रकार की कसर नहीं होनी चाहिये।

३—यदि कर्मचारियों को कम करना हो तो उसी कर्मचारी को अलग करे जिसके हटाये जाने से बिक्री के ऊपर कोई कुप्रभाव न पड़ेगा। लेकिन यदि कोई कर्मचारी अत्यन्त महँगा हो जिसको रखने से उसके वेतन का पूरा डालना एक समस्या हो रही हो या निकट भविष्य में हो जाने का डर हो तो उसे जब तक कि व्यापार मे इतनी उन्नति न हो जावे कि उसकी पूर्ति हो सके जारी रखना बुद्धिमानी नहीं हो सकती। हाँ, यदि वह कर्मचारी बहुत निपुण हो तथा अधिक दिन से काम करता हो तो उसे किसी ऐसे काम पर लगाने का यत्न करना चाहिये जिससे उसका वेतन निकाला जा सके। यदि ऐसा नहीं हो

सकता तो उसे सम्मानपूर्वक अलग कर देना ही उचित है, क्योंकि व्यापार से अधिक उसका मूल्य नहीं हो सकता।

(४) दाम घटाकर बिक्री बढ़ाना—

दाम घटाकर बिक्री बढ़ाने की चेष्टा बिना विशेष कारणों के ठीक नहीं। दाम उसी दशा में कम किये जाने चाहियें जब कि उसी प्रकार की अन्य चीज़ उससे कम दामों में मिलने लगी हो। यदि कोई चीज नहीं बिक रही है या कम बिक रही है तो उसके प्रचार में अधिक ध्यान देकर अथवा खर्च करके उसकी बिक्री बढ़ाने का उपाय करना चाहिये न कि उसके दाम कम करके बेकार के लिये उस पर घाटा सहा जावे, क्योंकि यदि कोई चीज़ नहीं चल रही है तो उसका न बिकने का कारण उसका दाम ही नहीं किन्तु और भी कारण होते हैं, जो कि बगैर दाम कम किये दूर किये जा सकते हैं। हाँ यदि कोई ऐसा ग्राहक मिल जावे जो उसका पूरा स्टाक कुछ कम दाम कम कर ले लेता है तो दूसरी बात है।

किसी चीज़ के दाम यदि प्रतियोगिता (Competition) के कारण कम हो जाते हैं तो फिर बाद में उनका बढ़ाना बहुत कठिन हो जाता है। यदि उस पर मुनाफ़ा कम होता हो तो उसके बनाने अथवा पैक (pack) करने के खर्चे में कमी करनी चाहियें, लेकिन यदि ऐसा नहीं किया जा सकता तो उसमें कोई विशेषता उत्पन्न कर के अथवा उस पर कमीशन अधिक देकर या उसके प्रचार में अधिक खर्च करके उसकी माँग बढ़ानी

चाहिये। ऐसा करने से उसका रेट सदा के लिये नहीं गिर जायेगा और उसकी खपत भी बढ़ेगी। प्रतियोगिता के कारण यदि दाम घटाने ही पड़ें तो उसी प्रकार की दूसरी सस्ते दाम की चीज़ बनाकर या लाकर बेचना अधिक हितकर होगा बजाय इसके कि अपनी चीज़ की क्वालिटी या मूल्य गिरा कर उसकी प्रतिष्ठा कम की जावे।

(५) मँहगी—

गत महायुद्ध (सन् १९३९) के बाद से सभी वस्तुओं के मूल्यों में जितनी वृद्धि हुई है उतनी लोगों की आमदनी में वृद्धि नहीं हुई। विशेषतः मध्यम वर्ग के लोगों पर इस महँगी का असर और भी बुरा पड़ा है, जिसके कारण उनकी खरीदने की शक्ति बहुत क्षीण हो गई है, यहाँ तक कि अधिकाँश की सारी आय पेट पालने और तन ढकने के लिए भी काफ़ी नहीं होती, तो फिर और चीज़ों का व्यवहार कैसे बढ़े। प्रत्येक वस्तु का मूल्य दो कारणों से घटा करता है, एक तो यह कि वह पैदा अधिक हो दूसरे उसका प्रयोग बढ़े। यदि ऐसा न हुआ और वह प्रयोग में कम लाई गई तो उसकी पैदावार घट जावेगी, और उसकी लौट फेर कम होने से उसके ऊपर लगा धन अधिक दिनों तक फसा रहने के कारण तथा कम बिक्री पर अधिक खर्चे वितरण होने से बेचने वाले का खर्च अधिक होने के कारण उसका मूल्य बढ़ जावेगा।

जिन लोगों की इस काल मे आमदनियाँ बढ़ी हैं—जैसे मजदूर व कृषि विभाग के लोग, उनका जीवन बहुत सादा होने

के कारण अधिकाँश वस्तुओं की खपत उसमें नहीं बढ़ी। साथ ही साथ देश में अनाज की कमी होने के कारण उसका भाव बराबर बढ़ता ही गया क्योंकि इसकी खपत घटने की कोई सम्भावना नहीं थी वरन् आबादी बढ़ने के कारण वह और भी बढ़ गई। फलस्वरूप मजदूरी भी बढ़ती गई जिसके कारण चीज़ों को पैदा करने या बनाने की लागत बढ़ती गई।

सरकारी आँकड़ों से विदित होता है कि इस देश की व्यक्तिगत आमदनी सन् १९३९-४० में अनुमानतः रु० ७२) वार्षिक थी। १९४९-५० में यह २१४) रुपये हुई, लेकिन इसके विपरीत उसी समय में चीज़ों के भाव में ४१२ प्रतिशत की वृद्धि हुई और यह बराबर बढ़ती ही जा रही है यहाँ तक कि आजकल (सन् १९५२) में यह लगभग ४५० प्रतिशत हो गई है लेकिन औसतन आमदनी बेकारी बढ़ने के कारण बजाय बढ़ने के घटती ही जा रही है, जिसके कारण लोगों की खरीदने की शक्ति का दिन प्रतिदिन ह्रास होता जाता है, और खाद्यान्नों के अतिरिक्त सब चीज़ों की बिक्री घटती ही जा रही है। साथ साथ उनके बनाने के खर्चों में वृद्धि होने के कारण उनका भाव बढ़ता जा रहा है। ऐसी दशा में अधिकांश चीज़ों की खपत रुक कर उनका लौट फेर घट गया है। इसलिये वस्तुओं के मूल्य को घटाने का एक मात्र उपाय यही है कि उनकी पैदावार और खपत दोनों के साधन पैदा किये जावें और यहाँ का माल विदेशों में जाकर बिके जहाँ कि खरीदने की शक्ति की कमी नहीं है।

एक विक्रेता को चाहिये कि यदि किसी वस्तु का जिसमें वह व्यापार करता है दाम असाधारण रूप से बढ़ गया हो तो उसका ठीक ठीक कारण मालूम करके उसे अपने ग्राहकों को बतलाकर उनको सन्तुष्ट करे, और यदि सरकार के अत्यधिक नियंत्रणों, करों, रेलभाड़े अथवा चुंगी के कारण वस्तुओं का मूल्य बढ़ गया हो तो उनका यथोचित रूप से विरोध करे जिससे कि वह कम हों। सभी करों का बोझ केवल ग्राहकों पर ही लादते रहना अनुचित है, और इस प्रकार उनकी खरीदने की शक्ति को दिन प्रति दिन कम करने में सहायक होने से व्यापारियों को भी बड़ी हानि होती है। इस कार्य में उपभोक्ताओं की सहानुभूति और सहायता की भी बहुत आवश्यकता है, जो कि उसको मँहगी के ठीक ठीक कारण बता कर प्राप्त की जा सकती है।

(६) नियंत्रण और चोर बाजारी—

गत महायुद्ध के समय लगाये सरकारी नियंत्रणों के कारण अथवा कुछ वस्तुओं की कमी के कारण उनके भावों में असाधारण वृद्धि हो जाने से उनके कुछ विक्रेताओं में माल को रोककर अथवा छिपाकर बेचने की एक कुटेव सी पड़ गई थी, क्योंकि ऐसा करने से उन्हें उन चीजों को गायब करके, उनके ऊपर अनुचित लाभ उठाने का अवसर मिला था। यह बात एक ईमानदार और सच्चे व्यापारी के लिये अच्छी नहीं थी।

इससे देश व समाज में भ्रष्टाचार बहुत बढ़ गया था और वस्तुओं की झूठी तथा व्यर्थ की कमी पैदा हो गई थी।

हरएक व्यापारी को अपनी नीति सदा कम मुनाफ़ा, और अधिक बिक्री की ही रखनी चाहिये। यही नीति संसार के बड़े बड़े व्यवसायियों की होती है, और इसी से वे बढ़े हैं तथा अन्य देशों के व्यवसाइयों से मुकाबला किया है। इस नीति का केवल उसी दशा में उल्लंघन सम्भव हो सकता है जब कि दूसरा कोई और उस माल को बेचने या बनानेवाला न हो, या उसके बेचने वाले उसका एकाधिकार प्राप्त करके व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से उसका व्यापार करें। अवसर पाकर व्यक्तिगत रूप से ऐसा करना उचित नहीं, इससे व्यापारी की साख में धक्का लगता है, और फलस्वरूप उसकी दूकानदारी पर आगे चल कर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। मामूली से कुछ अधिक मुनाफ़ा केवल उन्हीं वस्तुओं पर लिया जा सकता है जो कम या कभी कभी बिकने वाली हों। खुले बाजार में नियन्त्रित चीज़ों के न मिलने के कारण उन पर अनुचित मुनाफ़ा लेकर और छिपाकर बेचने की जो बुरी प्रथा कुछ दूकानदारों की पड़ गई थी वह उनके लिये बहुत घातक सिद्ध हुई है।

ऐसा करने वाला व्यापारी आचरण से गिर जाता है और उसकी समाज में प्रतिष्ठा कम हो जाती है, जिससे कि उसकी साख में धब्बा लगकर उसकी आगे की बिक्री मारी जाती है। उसे सरकार के कानूनी शिकंजे में फँस कर जेल की यात्रा भी

करनी पड़ती है, जिसके कारण उसके नाम पर धब्बा लगता है। इस प्रकार के घृणित कार्य से उसे स्वयं सुख के बजाय दुःख ही मिलता है, क्योंकि ईश्वरीय नियम यह कदापि नहीं है कि मनुष्य पथभ्रष्ट होकर अपना जीविकोपार्जन करे, अथवा अपने बाल-बच्चों को पाले। एक व्यापारी के लिये उसकी साख ही उसका सबसे बड़ा धन है। इसी पर उसकी वास्तविक और स्थायी उन्नति निर्भर है। इसको उसे किसी दशा में भी कम नहीं होने देना चाहिये।

अध्याय ७

माल खरीदने में सावधानी

(१) माल खरीदते या आर्डर देते समय ध्यान में रखने योग्य बातें—

१—किसी माल का अच्छा होना या सुन्दर प्रतीत होना ही इस बात का सूचक नहीं है कि वह आसानी से या शीघ्र बिक जावेगा। दूकानदार को सदा इस बात को ध्यान में रखकर माल खरीदना चाहिये कि वह उसे अपने प्रयोग के लिये नहीं ले रहा है। उसे तो उस माल को ग्राहकों के हाथ मुनाफ़ा लेकर बेचना है। इसलिये उसे उनकी रुचि और मांग तथा दाम का विचार करके ही लेना चाहिये। यदि वह अधिक चलने वाली चीज़ नहीं है तो उसको विशेष मात्रा में कम दामों से मिलने पर भी नहीं लेना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से पूँजी की रकम अधिक समय के लिये उसमें फँस जाती है, जिसके कारण उसके उलट फेर में बाधा पड़ती है, और नुकसान होता है। कोई घटिया चीज़ अधिक नहीं लेनी चाहिये चाहे वह कितनी भी सस्ती क्यों न हो, क्योंकि ग्राहक ऐसी चीज़ों को लेकर खुश नहीं होता है, और कभी कभी इसके कारण दूकान की साख में भी फ़रक पड़ता है। हाँ मेल के लिये यदि कुछ ऐसी चीज़ें भी रहें ताकि

सस्ता माल चाहने वाले ग्राहकों को उससे सन्तुष्ट किया जा सके तो बेजा न होगा।

२—हरएक चीज़ का दाम व खर्च जोड़कर यह देखना चाहिये कि उस पर दूकान तक आने में कितनी लागत पड़ेगी और वह उस पर खर्च तथा मुनाफ़ा जोड़कर कितने तक में बिक सकेगी।

३—यदि वह अधिक चलने वाली चीज़ नहीं है, या जिस कारखाने या एजन्ट से उसे लेना है उसका पहले से पूरा परिचय या अनुभव नहीं है, तो प्रारम्भ में केवल आज़मायशी आर्डर देना चाहिये। अधिक चलने वाली चीज़ में भी उसी दशा में अधिक रुपया लगाना चाहिये यदि उसकी निकट भविष्य में न मिलने या तेज हो जाने की सम्भावना हो, क्योंकि यह बहुत आवश्यक है कि व्यापार में लगे हुए रुपये का लौट फेर जल्दी जल्दी होता रहे।

४—जो माल बराबर बिक रहा हो उसको खतम होने से पहले ही मँगवाते रहना चाहिये, ताकि ग्राहकों को उसके लिये अन्य स्थान में जाने की नौबत न आवे।

५—यदि कोई मौसिमी माल है तो उसको जल्दी से मँगवाकर उसकी घोषणा तथा प्रदर्शनी शुरू कर देना चाहिये। इस बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि माल नया और बढ़िया हो। यदि कपड़े की किस्म से है तो वह अच्छे अच्छे तथा नये डिज़ाइन (design) का हो।

६—जहाँ तक हो दूकान का मुख्य कार्यकर्ता ही माल का आर्डर दे। यदि बाहर से माल लेने जाना हो तो वह ऐसा आदमी हो जिसको कि स्टाक (Stock) तथा जरूरत का पूरा ज्ञान हो। बिना आवश्यकता के माल में रुपया कभी न फँसाये।

७—अधिकाँश वही माल लेना चाहिये जो चालू या विख्यात ब्रान्ड का हो। यदि बाहर जाकर माल लेना हो तो पहले उसकी अच्छी प्रकार से छानबीन कर ले तब उसे लेना शुरू करे ताकि उसके सम्बन्ध में बाजार का पूरा ज्ञान हो जावे, और इस प्रकार चीज़ अच्छी और ठीक भाव से मिले।

८—एक प्रकार का अधिक माल अथवा नक़द दाम देकर माल लेते समय विशेष रियायत के लिये प्रयत्न करना चाहिये।

९—बेमेल माल नहीं लेना चाहिये, वरना उसका निकलना कठिन हो जाता है और उसमें रुपया फँस जाता है। यदि कोई नई लाइन अपने यहाँ जारी करना हो तो उसका यथोचित प्रबन्ध करके उसे प्रारम्भ करना चाहिये, और उसका पूरा मेल रखना चाहिये क्योंकि स्वभावतः ग्राहक एक ही प्रकार की चीज़ देखकर सन्तुष्ट नहीं होता है।

१०—यदि नमूना या लेबिल देखकर माल का आर्डर देना हो तो जब तक उसके बनाने वाले कारखाने या बेंचने वाले से भलीभाँति परिचित न हो, पहले बहुत कम माल का आर्डर देना चाहिये, और इस बात की यथासम्भव शर्त कर लेनी चाहिये कि

यदि माल नमूने के अनुसार न हुआ तो उसको वह वापस करके अपना रुपया लौटा सकेगा। ऐसी दशा में यह भी देख लेना चाहिये कि यदि अन्य दूकानदारों के यहाँ वह माल बिकता है तो उनकी उस माल के बारे में क्या राय है। यदि कभी अधिक माल मंगवाना हो तो जहाँ तक हो सके उसे स्वयं देखकर और भाव में कमी कराकर लाने की चेष्टा करनी चाहिये, सिवाय ऐसी दशा के जब कि माल विख्यात ब्रांड का हो और उसे बेचनेवाला भी जाना बूझा प्रतिष्ठित व्यक्ति हो। बोगस यानी जाली कारखानों या बेचनेवालों या एजेन्टों से सदा सावधान रहना चाहिये। बिना अच्छी प्रकार समझे माल या उसकी बिल्टी का भुगतान नहीं कर देना चाहिये। यदि नये कारखाने या कमीशन एजन्ट से व्यवहार करना हो तो उसकी अच्छी प्रकार जांच कर के या माल ठीक ठीक आ जाने पर ही उसका भुगतान करना चाहिये।

११—जब तक पहले से परिचय न हो तथा किसी हानि का डर न हो तब तक आर्डर के साथ पेशगी (advance) केवल उसी दशा में देना चाहिये जब कि उसके बेचने या बनाने वाली कम्पनी आदि का यह दस्तूर हो कि बिना पेशगी के माल वह रवाना ही नहीं करेगी अथवा बनावेगी ही नहीं। ऐसी दशा में पेशगी की रकम क्रास चिक (crossed cheque) द्वारा ही कम्पनी के नाम से देना या भेजना चाहिये। विज्ञापन द्वारा आकर्षित होकर प्रलोभनों में कभी नहीं पड़ना चाहिये।

१२—यदि किसी कारखाने का बना माल मंगवाना हो तो उससे सम्बन्धित विज्ञापन सामग्री अवश्य साथ साथ मंगवानी चाहिये, जिससे उसकी सहायता से उस माल को बेचने में सुगमता हो।

१३—आर्डर देते समय उससे सम्बन्धित सभी शर्तें, जो विशेष रूप से तै हुई हों, तथा चीज़ क ापूरा व्यौरा व दर आर्डर फार्म पर नोट कर देना चाहिये।

नीचे लिखी बातें उस पर साफ़ साफ़ लिख देना चाहियें:—

(अ) माल सवारी गाड़ी से भेजा जावे अथवा मालगाड़ी या डाक अथवा ट्रक से।

(आ) बिल्टी आदि किस प्रकार भेजी जावे—बेंक द्वारा, वी. पी. से, या सीधी।

(इ) माल के किराये, पैकिंग, रास्ते की टूट फूट का उत्तरदायी कौन होगा?

(ई) यदि कुछ पेशगी (advance) दिया है तो उस पर उसका ज़िक्र और पानेवाले के हस्ताक्षर होने चाहिये।

(उ) अन्य विशेष शर्त या शर्तें जो तै हुई हों या जिनका पालन माल भेजने वाले कारखाने या दूकानदार को करना हो।

हर हालत में एक नकल आर्डर की हस्ताक्षर सहित अपने पास रखनी चाहिये। उस पर हर चीज़ का जो मँगवाई गई हो पूरा नाम, ब्रान्ड, साईज़, मात्रा, भाव तथा दामों का जोड़ भी साफ़ साफ़ दर्ज होना चाहिये।

१४—आर्डर देते समय यह भी विचार कर लेना चाहिये कि यदि वही माल स्थानीय विक्रेता द्वारा मिल रहा हो तो उससे लेने या उसके द्वारा मँगवाने में क्या सुविधा या लाभ होगा।

जैसे जैसे माल बिकता जावे दूकानदार को चाहिये कि इस बात की निगाह रखे कि कौन माल अधिक बिक रहा है और कौन कम। अधिक बिकने वाले माल को उसके खतम होने से पहले ही और मँगवा लेना चाहिये, और यदि वह मौसिमी है तो यह यत्न होना जरूरी है कि वह उसके मौसम समाप्त होने से पहले ही आकर बिक जावे। किसी चीज़ के बिकने का सिलसिला टूटना नहीं चाहिये, इससे फिर उसके ग्राहक नये सिरे से पैदा करने पड़ते हैं, जिससे कि दूकानदारी मे बहुत धक्का पहुँचता है, सिवाय ऐसी चीजों के जो विख्यात ब्राण्ड की हैं।

(२) सुअवसरों से लाभ उठाना—

प्रायः देखने में आता है कि व्यापार की उन्नति का अवसर बार बार नहीं आता है, तथा बढ़ने के सुअवसर कभी कभी ही मिला करते हैं। ऐसे अवसरों का असर अधिकाँश स्थाई हुआ करता है क्योंकि जो ग्राहक किसी विशेष चीज के कारण बन जाते हैं वे सदा ही के लिये अपना आना जाना अथवा माल का मँगवाना जारी रखते हैं। इसलिए हरएक दूकानदार को सचेत रहना चाहिये कि यदि कोई विशेष रूप से अच्छी चीज उसको मिलती है और वह अधिक बिकने लगी है तो तत्काल उसे और

मँगवाकर उसे अधिक से अधिक बेचकर उससे स्थाई लाभ उठावे। हानि का डर सदा घटिया माल को अधिक लेने में होता है। बढ़िया और किफ़ायत दाम का माल यदि वह विख्यात ब्रान्ड का न भी हो तो कुछ अधिक परिश्रम से खूब बिक कर उसमें लाभ अधिक होता है, और उसके कारण दूकान की ख्याति भी होती है।

(३) कारखानेदारों की उन्नति का भेद और उनका दूकानदारों के साथ व्यवहार—

एक कारखानेदार को उन्नति के अवसर अधिक नहीं मिलते। उसकी उन्नति का भेद तो यही है कि जब तक वह खूब प्रकार से अच्छा माल न बना सके और उसे अच्छे और सुन्दर प्रकार से पैक (pack) न कर सके तब तक उसे बाजार में अपने नाम से बिकने के लिये देना ही नहीं चाहिये, क्योंकि यदि उसकी शुरू से ही धाक न जमी तो बाद में फिर जमना बहुत कठिन हो जाता है, और उसे अच्छे प्रकार से बने और पैक हुए माल बाजार से धकेल देते हैं। परन्तु यदि एक बार उसकी अच्छी होने की कीर्ति हो जाती है तो उसे विज्ञापन द्वारा विख्यात करके स्थायी रखना और बढ़ाना सहज हो जाता है। फिर भी कारखानेदार को सदा दूसरे अच्छे और नये निकले हुए ब्रान्डों से सचेत रहना चाहिये, और यदि किसी दूकानदार के यहाँ उसका माल नहीं चल रहा है और वह उसे बदलना या लौटाना चाहता है तो उसे प्रसन्नतापूर्वक लौटा लेना या बदल-

देना चाहिये, ताकि उसकी सहानुभूति और दिलचस्पी कारखाने के साथ जारी रहे। यदि ऐसा न किया गया तो वह आगे का व्यवहार उस कारखाने से तोड़ देता है, और उसकी साख में धब्बा लगता है, क्योंकि किसी कारखाने की कीर्ति बढ़ाने और उसका माल उपभोक्ताओं तक पहुँचाने में दूकानदार का बहुत बड़ा हाथ होता है। इसलिये उसको सन्तुष्ट रखना कारखानेदार का आवश्यक कर्तव्य है।

कभी कभी यह भी देखने में आता है कि कारखानेदार की उपरोक्त उदारता का दूकानदार अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा करते हैं, जैसे कि मौसिमी माल को उसके मौसम खतम हो जाने पर वापस करना या उसका आर्डर देकर फिर न लेना। ऐसी दशा में वह कारखानेदार की अपने प्रति सहानुभूति खो देते हैं, और आगे के लिये अपनी साख खोकर अपने लिये ही अवनति का बीज बोते हैं। इसलिये उन्हें चाहिये कि यदि अपना एक बार दिया हुआ आर्डर बदलना या रद्द करना हो तो माल रवाना होने के पहले ही उसकी सूचना कारखानेदार को दें ताकि वह उसके अनुसार ही भेज सके या न भेजे। बिल्टी आ जाने पर तो उसे छुड़ा लेने ही में उसकी कीर्ति व भलाई है। सिवाय ऐसी दशा के जब कि उसे माल के नमूने के अनुसार न होने का भय हो।

कभी कभी दूकानदारों के पास से माल कम पहुँचने की शिकायत आती है। ऐसी अवस्था में माल भेजनेवाले को देखना

चाहिये कि वह शिकायत कहाँ तक ठीक हो सकती है। यह रेल की बिल्टी में लिखे हुए वज़न के अनुसार माल के होने या न होने से जाँचा जा सकता है। यदि बिल्टी में लिखा हुआ वज़न माल के वज़न के अनुरूप है तो उसको जताते हुये दूकानदार को लिख सकता है कि माल रास्ते में कम हुआ है जिसके लिये वह जिम्मेदार नहीं हो सकता, रास्ते में माल कम हो जाने का क्लेम (claim) रेल से ही करना चाहिये। साथ ही साथ भेजनेवाले कारखानेदार को भी इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि दूकानदार न तो उसकी उदारता का अनुचित लाभ उठावे और न थोड़े नुकसान आदि के लिये उसे अप्रसन्न ही करे, क्योंकि यदि वह अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा करता भी है तो वह ऐसा अधिक समय तक नहीं कर सकता, लेकिन यदि नुकसान होने के कारण वह कारखाने से सम्बन्ध कम कर देता है या उसका माल बेचना बन्द कर देता है तो यह कारखाने के लिये वास्तविक नुकसान होगा।

(४) मशीनरी (Machinery) **मँगवाना—**

मशीनरी का आर्डर देते समय नीचे लिखी बातें ध्यान में रखना चाहियेः—

१—मशीनरी उत्तम प्रकार की, मजबूत, नये से नये ढंग की और सुगमता से चलने वाली हो। प्रायः देखने में आया है कि अन्य देशों से ब्रिटेन की बनी मशीनें अधिक अच्छी सिद्ध हुई हैं।

१०

२—यदि कोई मशीन खरीदनी हो तो उसको खरीदने से पहले जहाँ वह चल रही हो वहाँ देखकर उसके बरतने वाले से उसकी पूरी जानकारी प्राप्त करनी चाहिये। यदि पता न मालूम हो तो उसके बेचनेवालों से पूछा जा सकता है। उसके बेचने वाले के पते नगर के अन्य मशीनरी (Machinery) बेचनेवालों अथवा इस सम्बन्ध की जानकार कम्पनियों या प्रान्तीय Director of Industries से पूँछे जा सकते हैं, अथवा विज्ञापनों द्वारा मालूम किये जा सकते हैं।

३—यदि अपने ही देश में बनी मशीनरी मिलती हो तो उसकी भी खोज कर लेनी चाहिये क्योंकि यह विदेशी मशीनों से बहुत कम दाम में मिल सकेंगी, लेकिन यदि उसमें उपरोक्त गुण न हों तो उन्हें लेने में विशेष सावधानी रखनी चाहिये।

४—जहाँ तक हो सके जो मशीनरी ली जावे उसकी जाँच अच्छी प्रकार से अपने सामने चलवाकर कर लेनी चाहिये।

५—यदि ऐसा न हो सके तो उसका दाम तभी चुकता देना चाहिये जब कि वह आ जावे और जाँच में ठीक उतरे अथवा उसके अच्छे न होने पर बदले जाने की गारंटी ले ली जावे। यह समझौता मशीनरी (Machinery) आने के एक निश्चित समय के अन्दर पूरा हो जाना चाहिये। बड़े बड़े सौदों में मशीनरी विक्रेता अपना इंजीनियर आदि भेजकर उसे चालू रूप में देने के लिये बाध्य किये जा सकते हैं।

६—यदि विदेशी मशीनरी इसी देश में मिलती हो या उसके

कारखाने के प्रतिनिधि वहाँ हों तो बाहर से उसे सीधा मंगवाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये। सिवाय ऐसी दशाओं में जबकि उसका पहले से अच्छा अनुभव हो और यह इतमीनान हो कि वह ठीक ठीक आ जावेगी। बिना उसके सम्बन्धित अनुभव के उसको मंगवाने में कठिनाइयों के साथ ही साथ धोखे या नुकसान का भी डर रहता है जिससे कि बचना चाहिये।

७—आर्डर देने से पहले दाम ठीक ठीक तै कर लेना चाहिये, और यदि कई बेचनेवाले हों या कई तरह की अथवा कई बनानेवालों की वैसी मशीन हो तो जहाँ तक हो सके सबसे उसकी पूछ ताछ करके उसका आर्डर देना चाहिये। यदि वह विदेश से आती है तो उसके सम्बन्धित आयात अनुमति (Import permit) के लिये Chief Controller of Imports, नई दिल्ली, से पत्र-व्यवहार करना चहिये।

८—रेल द्वारा मशीनरी मंगवाने में उसका बीमा कराकर मंगवाना चाहिये और छुटाते समय देख लेना चाहिये कि वह रास्ते में टूट फूट या कम तो नहीं हो गई।

९—यदि कोई ऐसी मशीनरी हो जिसके चलानेवाले अपने पास न हों तो उसको चलाना अथवा मरम्मत या सफ़ाई करना सीखने के लिये अपना आदमी उसको बेचनेवाले के पास उसको चलाने व ठीक रखना सीखने के लिये भेजना चाहिये।

१०—यदि कोई मशीन यादि बाहर किसी कारणवश, जैसे मरम्मत आदि के लिये भेजना हो तो उसकी वापसी का पर्चा

चुंगी के दफ़्तर से प्राप्त कर लेना चाहिये। नहीं तो उसके लौटकर आने में उसपर बेकार की चुंगी लग जावेगी।

(५) रेल द्वारा माल मँगवाने में सावधानी—

रेल द्वारा माल मंगवाने में नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना आवश्यक है:—

१—भेजनेवाले कारखाने या दूकानदार द्वारा माल रवाना करने की सूचना पाते ही इस बात का पता लगाते रहना चाहिये कि माल आ गया या नहीं। जैसे ही वह आ जावे उसे छुड़ाने का प्रबन्ध करना चाहिये ताकि अधिक समय तक माल गोदाम या पारसलघर में न पड़ा रहे। ऐसा होने से डैम्रेज के अतिरिक्त वहाँ पड़ा रहने से माल का नुकसान होने का भी डर है।

२—माल छुटाते समय हर एक पारसल की अच्छे प्रकार से जाँच कर लेना चाहिये कि वह बदल तो नहीं गया, या रास्ते में उसमें किसी प्रकार की गड़बड़ी तो नहीं हुई। यदि ज़रा भी शक हो या उसका वज़न हलका मालूम पड़े तो उसे तुलवाकर बिल्टी के वज़न से मिलाना चाहिये अथवा उसे वहीं खुलवाकर बीजक से मिलान करना चाहिये। यदि किसी प्रकार की कमी या टूट फूट हो तो उसका नोट पाने के हस्ताक्षर करते समय रजिस्टर तथा बिल्टी पर कर देना चाहिये और उसके संबन्ध में रेलवे बाबू से कमी या टूट फूट का प्रमाणपत्र (certificate) भी ले लेना चाहिये ताकि उसके आधार पर रेलवे अथवा भेजनेवाले व्यापारी से नुकसान का claim किया जा सके।

यदि माल आगया हो पर उसकी बिल्टी न आई हो और वह पानेवाले के नाम से भेजा गया हो तो बिना बिल्टी का इन्तजार किये ही उसे Indemnity Bond पर छुटाया जा सकता है।

३—किराये के साथ यदि डैम्रेज या कम लगा किराया (Under-charge) देना पड़े तो उसकी रसीद ले लेनी चाहिये, ताकि भेजनेवाले से वह वसूल किया जा सके।

४—जहाँ तक हो सके माल की चुंगी उसके बीजक के अनुसार उसे छुटाने से पहले ही देकर उसका रवन्ना कटा लेना चाहिये। यदि बीजक न हो तो उसके दाम की सूचना लिखकर चुंगी के अधिकारियों का समाधान करके उसकी चुंगी दे देनी चाहिये।

नोट—कभी कभी ऐसा होता है कि अपना ही भेजा माल वापस मँगवाना होता है, ऐसी दशा में उसकी चुंगी उसी दशा में नहीं ली जाती जबकि बाहर भेजते समय उसकी सूचना चुंगी के अधिकारियों को देकर उन से तत्सम्बन्धित प्रमाण पत्र ले लिया जाता है।

५—यदि माल की पेटियाँ आदि वापस करनी हों तो इन्हें निश्चित समय के अन्दर वापस करने से रेल का रियायती किराया लगता है।

६—यदि कन्ट्रोल का माल आया हो तो स्थानीय सप्लाई अफ़सर की जानकारी में लाकर उसे छुटाना चाहिये।

७—यदि मालगाड़ी से माल आया हो तो स्थानीय गुडस इन्सपेक्टर (Goods Inspector) से, वरना स्टेशन मास्टर से, उसके बारे में पूछताछ या लिखा पढ़ी करनी चाहिये। लेकिन यदि किसी प्रकार का क्लेम (claim) करना हो तो उसके सम्बन्ध में उस रेल के Chief Commercial Manager से पत्र व्यवहार करना चाहिये। यदि नुकसान अधिक हुआ हो तो किसी क्लेम विशेषज्ञ से परामर्श करके कार्यवाही करनी चाहिये।

(६) माल मंगवाने के पतों की आवश्यकता—

कौन माल कहाँ से अच्छा और किफ़ायत से मिलता है यह जानना एक व्यापारी के लिये बहुत जरूरी है। बिना इसके वह भटकता है और नुकसान उठाता है। इसलिये उसे जिस प्रकार भी हो सके अपने यहाँ बिकने या खर्च होने वाली सभी चीज़ों के पतों तथा स्थान का पता लगाते रहना चाहिये, और सुविधानुसार उन्हें एक रजिस्टर मे ब्योरे सहित दर्ज करते जाना चाहिये, जिससे कि समय पर उनका उपयोग किया जा सके।

(७) प्रतिनिधि के प्रति वर्ताव—

कभी कभी दूकानदार प्रतिनिधियों अथवा एजेन्टों की उपयोगिता समझने मे भूल करते हैं। वे प्रायः उसकी दूकान पर बिकने वाली चीज़ों के कारखानों की ओर से या अपनी कोई नई चीज का आर्डर लेने उसके पास दूर दूर से घूमते हुये आते

हैं। उन्हें बहुत दूकानदारों तथा कारखानों के मालों की जानकारी होती है जो कि एक स्थान पर बैठे हुये या कभी कभी बाहर जाने वाले दूकानदार के लिये असाध्य है। इसलिये उनसे मुलाकात करते समय उनसे सुविधा पूर्वक बातचीत करनी चाहिये, या उनसे ऐसे समय आने की प्रार्थना करनी चाहिये जबकि उनसे सुविधा पूर्वक बातचीत की जा सके। पर इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि वह अपना माल बेचने के प्रयास में किसी प्रकार की गलत खबर या सुझाव तो नहीं दे रहे। उनके कहने या सुझाने मात्र से ही किसी माल का आर्डर नहीं दे देना चाहिये। अन्य कारखाने के बने माल तथा उसके भाव और मिलने की सुविधा पर भी बिचार करना चाहिये। साथ साथ उस माल की अपने यहाँ कितनी बिक्री या खपत हो सकती है और कितने मुनाफ़े से वह बेचा जा सकता है, इन बातों का भी ध्यान रखना चाहिये। इस प्रकार विचार विनिमय करके ही किसी माल का आर्डर देना अथवा अपनी असमर्थता प्रकट करनी चाहिये। लेकिन जहाँ तक तो सके उसका या अपना समय बेकार की बातों में नष्ट नहीं करना चाहिये।

(८) समाचार पत्र आदि पढ़ने की आवश्यकता--

हर एक व्यापारी को दैनिक तथा अपने व्यापार सम्बन्धी साप्ताहिक या मासिक पत्र या पत्रिकायें जरूर पढ़ते रहना चाहिये। उनसे उसे बहुत सी बाते ऐसी मालूम होती रहेंगी जिनके ऊपर उसको व्यापारिक उन्नति तथा हानि और लाभ

निर्भर रहते हैं। उनसे उसे मालूम होता रहेगा कि बाजार में तेजी या मंदी किस चीज में कैसी हो रही है या होने की संभावना है। उसी के अनुसार उसे अपने यहाँ बिकनेवाले माल को बेचते तथा बढ़ाते घटाते रहना चाहिये या उसके मूल्यों में परिवर्तन करते रहना चाहिये। साथ साथ मुख्य मुख्य मंडियों में भी जाकर वहाँ का हाल मालूम करते रहना चाहिये। यदि उसे कोई नये पते या नयी जानने योग्य ऐसी बात मालूम पड़े जिससे उसका सम्बन्ध हो तो उसे अपनी डायरी अथवा अन्य रजिस्टर में नोट करते जाना चाहिये जिससे कि समय पर उनसे काम लिया जा सके, क्योंकि एक सफल व्यापारी वही है जो अपने कार्य में हर प्रकार से निपुण और सचेत हो। ऐसा होने के लिये उसे हर प्रकार की जानकारी होना और उसके अनुसार काम करना अत्यन्त आवश्यक है।

अध्याय ८

एजन्सी का काम

(१) किस किस प्रकार से एजन्सी का काम किया जाता है :—

एजन्सी का काम कई प्रकार से किया जाता है जैसा कि नीचे लिखा है :—

१—थोक की रीति से केवल आढ़त पर माल बेचना। इसमें दूकानदार को माल के ऊपर अपना धन या तो बिल्कुल नहीं लगाना पड़ता या खरीदने अथवा बेचने वाले को उधार के रूप में ब्याज लेकर देना होता है। ऐसा करना अपनी इच्छा, सामर्थ्य और विश्वास पर निर्भर होता है। माल बिकने पर अपनी आढ़त, ब्याज, भाड़ा आदि लेकर उसका भुगतान माल मालिक को करना होता है।

२—फुटकर या थोक बिक्री के साथ साथ किसी चीज़ की एजन्सी लेकर उसे फुटकर या थोक रूप से बेचना और उस पर अपना कमीशन लेना, साथ साथ उसका प्रचार भी करना और मालिक माल से उसका खर्चा भी, यदि तै हो जाय तो, लेना। माल के दाम या तो माल आते ही तुरन्त अथवा उसके बिकने पर देना होता है। कभी कभी माल के छुटाने में तथा उसके

ऊपर चुंगी आदि में जो खर्च होता है वह भी मालिक माल से ले लिया जाता है। लेकिन ऐसा उसी दशा में होता है जब कि सीधा माल खरीदने वालों को भी इस प्रकार का लाभ दिया जाता हो।

३—माल Consignment basis (बेचकर दाम देने) पर भी उसके बेचने वाले से लेकर अपने यहाँ रखा जाता है। इसमें माल के ऊपर जितने खर्चे पड़ें तथा अपना कमीशन जो तै हो जाय काट कर उसे उसके बिकने पर सब दाम दे दिये जाते हैं।

४—माल थोक भाव से मँगवा कर उसी समय उसका पूरा दाम दे दिया जाता है। फिर बनाने वाली कम्पनी या मालिक के निश्चय किये हुए अथवा कम्पनी के मूल्य-सूची के अनुसार खचा लगा कर या बाज़ार भाव, जैसा तै हो जाय, उसे बेचकर लाभ उठाया जाता है। यदि कुछ मुद्दत के अन्दर वह माल न बिके तो उसको लौटा देना होता है।

५—किसी कारखाने, अथवा कई कारखानों का माल उनके नमूने अथवा लेबिल आदि दिखा कर उसके आर्डर लेना, और माल सपलाई और उसका भुगतान हो जाने पर अपना कमीशन लेना।

(२) नमूने आदि दिखाकर अथवा बिना दिखाये माल के आर्डर लेना—

उपरोक्त वर्णित प्रकार के एजन्सी के कामों में हम यहाँ

केवल अन्त में कहे एजन्सी के काम पर ही विस्तार पूर्वक लिखना पर्याप्त समझते हैं:—

१—बिना अच्छी तरह से माल तथा उसके बनाने वाले कारखाने आदि से परिचित हुये और उससे हर प्रकार से संतुष्ट हुये किसी माल की एजन्सी का काम न लेना चाहिये।

२—जहाँ तक हो सके उसी माल का काम करना चाहिये जो अधिक चलता हो और जिसका विज्ञापन अधिक होता हो। यदि उसका विज्ञापन नहीं हो रहा है तो ऐसा कराने की चेष्टा करनी चाहिये। मुख्य आशय यह होना चाहिये कि माल की माँग पैदा की जाय, न कि केवल दूकानदारों की सहानुभूति पर निर्भर होकर काम चलाया जाय। यह आशा करना कि दूकानदार ही उसकी माँग भी पैदा करे, बिल्कुल निरर्थक है। विज्ञापन और दूकानदारों द्वारा माल की प्रदर्शनी दोनों कार्य साथ साथ चलने चाहियें।

३—जहाँ आर्डर लेने जाना हो वहाँ के दूकानदारों को पहले ही मूल्य-सूची और कुछ विज्ञापन सामग्री कारखाने से भिजवा देना चाहिये, और यदि सम्भव हो तो मूल्य-सूची के साथ साथ वहाँ प्रतिनिधि के पहुँचने की अनुमानित तारीख भी लिख भेजनी चाहिये। ऐसा करने से दूकानदार आर्डर देने के लिये पहले से कुछ तैयार हो जाता है और एजेन्ट की बाट जोहने लगता है जिसका परिणाम बहुत अच्छा होता है।

४—केवल माल के नमूने या लेबिल आदि तथा मूल्य सूची

व आर्डरबुक ही साथ मे लेना काफ़ी नहीं होता। एजेन्ट को सप्लाई की विशेष शर्तों और रियायतों की भी जानकारी होना बहुत जरूरी है। रेल द्वारा माल भेजने और किराये का भी ज्ञान होना चाहिये। यदि किसी दूकानदार के यहाँ माल या दाम का कुछ झगड़ा पड़ा हो या उसका कुछ बाकी हो तो उसकी भी पूरी जानकारी तथा उसके सम्बन्धित कागज़ात साथ में ले लेने चाहिये। क्योंकि वह केवल माल के आर्डर ही लेने नहीं जाता वह माल बेचने वाले का प्रतिनिधि होकर जाता है, उसे माल लेने अथवा बेचने वाले के बीच की बातों का अथवा उनके आपस की गुत्थियों का पूरा ज्ञान होना चाहिये, तभी वह अपने उद्देश्य में सफल हो सकता है। उसे माल बेचने सम्बन्धी विज्ञापन सामग्री भी अपने साथ यथेष्ट मात्रा में ले लेनी चाहिये।

५—जहाँ माल का आर्डर लेने जाना हो वहाँ जाते ही उसे आर्डर के लिये प्रार्थना नहीं कर देनी चाहिये। बल्कि मालिक दूकान से मिलकर अपना परिचय देकर अथवा मित्रभाव प्रकट करके उसकी रुचि अनुरूप बात करनी चाहिये। मिलने के लिये यदि उसके पास अवकाश न हो तो फिर मिलने के लिए प्रार्थना करके अथवा समय नियत करके उसके पास दुबारा जाना चाहिये। यदि कोई नई जगह हो जहाँ वह पहले पहल जा रहा हो तो अपने साथ वहाँ के अपने माल के बिक्रेताओं के पते, और यदि हो सके तो उनके पिछली बार माल मंगवाने की तिथि और

व्योरे की जानकारी सहित वहाँ जाना चाहिये ताकि वह बिल्कुल अपरिचित व्यक्ति की भांति उनसे न मिले।

६—यदि कोई ऐसा दूकानदार हो जिसके पास पहले कभी माल न गया हो या उसके पास माल है पर उसके सम्बन्धित विज्ञापन सामग्री नहीं है तो उसके आर्डर पर इस प्रकार की सामग्री (शो-कार्ड, कलेन्डर, मीमो-बुक आदि) माल के साथ भेजने के लिये अवश्य लिखना चाहिये, और दूकानदार से भी प्रार्थना करनी चाहिये कि वह विज्ञापन सामग्री आने पर उसका वितरण अथवा प्रदर्शनी यथायोग्य करे।

७—यदि दूकानदार पहले से परिचित है तो उस से स्थानीय बाजार का हाल भी मालूम करना चाहिये और जहाँ तक हो सके पहले ऐसे ही दूकानदारों के यहाँ से अपना काम शुरू करना चाहिये। यदि अपने माल के सम्बन्ध में उसकी कुछ कठिनाइयाँ अथवा सुझाव हों तो उनको भी अपनी राय सहित मालिक अथवा व्यवस्थापक करखाने को जरूर सूचित करना चाहिये। आर्डर मिलने पर उसके सम्बन्ध की सब बातें उसके ऊपर ही दर्ज कर देनी चाहियें ताकि माल भेजते समय उनका पालन सुविधापूर्वक हो सके।

८—यदि कोई ऐसा माल हो जो दूकानदार वापस करना चाहता है अथवा उसके पास खराब हो गया है तो उसके कारण सहित उसकी रिपोर्ट कारखाने को करनी चाहिये साथ साथ

अपनी राय भी उसके सम्बन्ध में लिख देना चाहिये। यह रिपोर्ट यदि उचित समझे तो अलग से करनी चाहिए।

९—जिस स्थान पर आर्डर लेने जाय उसके सम्बन्ध में एक खुलासा रिपोर्ट कारखाने को रोज भेजना चाहिये। इस रिपोर्ट में अपने उस दिन की कार्यवाही, सफलता का व्योरा अथवा असफलता के कारण, वहाँ के बाजार का अपने तथा उसी प्रकार के और कारखाने के माल की माँग का हाल, मुख्य मुख्य दूकानदारों के बारे में रिपोर्ट, किस श्रेणी के वह दूकानदार हैं जिन्होंने आर्डर दिया है अथवा अपने से सहानुभूति प्रकट की है या जिन से आगे किसी कठिनाई के समय सहानुभूति (co-operation) की आशा की जा सकती है, भी लिखना चाहिये। ऐसा करने के लिए डाक व्यय, स्टेशनरी आदि का खर्च मालिक कारखाने से लेना चाहिए। इस प्रकार की रिपोर्ट से कारखाने को आर्डर का माल भेजने तथा आगे व्यवहार करने में बड़ी सहायता मिलती है। यदि किराया रेल, होटल, बस आदि के खर्चे उससे लेने हों तो तारीख़ सहित हिसाब रखना चाहिए, और उसी आधार पर उससे अपनी माँग स्थापित करनी चाहिये।

१०—मुख्य मुख्य दूकानदारों की एक सूची हर स्थान की अलग अलग अपने पास भी रखनी चाहिये, इसमे नीचे लिखा व्योरा दर्ज हो:—

(अ) नाम दूकान व पूरा पता, (आ) नाम मालिक व मुख्य व्यवस्थापक, उसके स्वभाव सहित (इ) वह दूकान तथा व्यवस्था-

पक कब से है (ई) उसकी शाखायें तथा विभाग, (उ) किस प्रकार की चीजों में उसके यहाँ व्यापार अधिक होता है (ऊ) थोक बिक्री होती है या नहीं (ए) अन्य विषय—माल का आर्डर कब दिया और कितना, इत्यादि।

११—माल का आर्डर लेने में अधिक आग्रह नहीं करना चाहिये। बल्कि यत्न यह होना चाहिये कि जितने की उसकी माँग हो उससे कम ही उसका आर्डर बुक किया जाय, ताकि उसकी माँग बनी रहे और कारखाने की साख भी बढ़े।

विशेष आग्रह से लिये हुए आर्डर का आगे चलकर निष्फल हो जाने या रद्द किये जाने का भय रहता है जिससे कि कोई लाभ न होकर हानि होती है।

१२—एक एजन्ट को सदा अपना तथा अपने कारखाने के भाविक (भविष्य में होने वाले) अर्थों को ध्यान में रखकर ही काम करना चाहिये। उसे कोई व्यवहार ऐसा नहीं करना चाहिये जिससे उसकी खुद की अथवा कारखाने की साख में धब्बा लगे या, जिसकी सत्यता में उसे शक हो। उसे अपने को दूकानदार की अथवा मालिक कारखाने की निगाह में विश्वास पात्र बनाये रखने की चेष्टा करनी चाहिये। दूकानदार के लाभ का उसे उतना ही ख्याल होना चाहिये जितना कि मालिक कारखाने का, ऐसा आचरण बर्तने से उसकी साख तथा सम्मान दिन प्रति-दिन बढ़ते जायेंगे जिससे कि उसका काम, जो कि आसान नहीं है, सरल होकर उसकी आमदनी तथा ख्याति दोनों बढ़ते

जायेंगे, जिससे कि उसका काम बढ़ता जायेगा और एक दिन वह आयेगा जब कि वह केवल अपने प्रतिनिधि भेज कर ही काम कर सकेगा।

(३) एजेन्सी के स्थाई दफ़्तर द्वारा काम करना—

बड़े बड़े शहरों में जहाँ माल की खपत अधिक होती है, एजेन्सी का स्थाई दफ़्तर खोल कर अच्छा काम किया जा सकता है। इस प्रकार के दफ़्तरों का एक विशेष लाभ यह होता है कि आर्डर देने वाले को किसी प्रकार के अविश्वास की धारणा नहीं होती, क्योंकि यदि माल में किसी प्रकार की खराबी होने का डर होता है तो वह उसका सौदा एजेन्सी द्वारा करके अपने को हर प्रकार से सुरक्षित कर सकता है और माल आने पर यदि कोई नुकसान होता है तो वह उसके द्वारा उसका निपटारा सुविधापूर्वक करा सकता है। छोटे छोटे आर्डरों का पूरा डालने के लिये ऐसे दफ़्तर अपने पास कुछ स्टाक भी रखते हैं जिससे कि उनकी पूर्ति में देर नहीं लगती और माल लेने वालों को भी बड़ी सुविधा तथा इतमीनान होता है।

इस प्रकार के दफ़्तरों को अपने यहाँ से मासिक रूप से मूल्य-सूचियाँ निकालते रहना चाहिये। यह सूचियाँ या तो छपी हुई होनी चाहियें या साईक्लोस्टाइल की हुई। सूची ठीक समय पर निकालते रहना चाहिये और उसके निकलते ही अपने प्रतिनिधि, दूकानदारों के पास आर्डर लेने के लिये भेजना चाहिये। यह कार्य मास के तीसरे अथवा चौथे सप्ताह में ज़रूर हो जाना

चाहिये ताकि अगले मास के शुरू होने से पहले ही दूकानदारों को माल पहुँचाया जा सके। दूर दूर की फुटकर दूकानों पर जहाँ हर मास प्रतिनिधि न भेजा जा सके वहाँ भी कभी कभी अथवा खाली दिनों में उसे भेजते रहना चाहिये।

इस प्रकार के दफ़्तर कायम होने से कारखानेदारों को भी बड़ी सुविधा होती है क्योंकि फिर उन्हें वहाँ अपना दफ़्तर या डिपो कायम नहीं करना पड़ता और यदि किसी माल को छुटाये जाने में उसका मँगवाने वाला कठिनाई डालता है तो उसका निपटारा भी आसानी से किया जा सकता है। ऐसे दफ़्तरों को अपने अस्तित्व अथवा काम करने के नियमों की सूचना दूर दूर कारखानों आदि को भेजते रहना चाहिये ताकि उनके यहाँ से पूछताछ के पत्र आदि आते रहें।

अध्याय ९

उधार देना व लेना

(१) उधार देने की हानियाँ—

उधार देने की प्रथा को जहाँ तक हो सके बचाना चाहिये क्योंकि इससे नीचे लिखी हानियाँ होती हैं जो कि उसके लाभ से कहीं बढ़कर हैः—

१—इससे व्यापार में लगी पूंजी कम हो जाती है और जितना धन उधार में फँसा रहता है उसका लौट फेर बन्द होकर उस पर मुनाफ़ा नहीं होता।

२—उधार में फँसे धन पर महाजन या बेंक का व्याज बराबर चढ़ता रहता है जिससे व्याज का खर्च बढ़ता है।

३—उधार में लगी रकम का हिसाब रखने और उसकी वसूलयाबी मे जो खर्च पड़ता है वह मुनाफ़े को कम करता है।

४—यदि किसी कारण उधार ले जाने वाला रुपया अदा नहीं कर सकता तो वह अपना व्यवहार भी उस दूकान से बन्द कर देता है जिससे कि दुगना नुकसान होता है, यानी मूलधन के साथ साथ ग्राहक भी हाथ से जाता है, और यदि वह मित्र हुआ तो साथ साथ मित्रता में भी बाधा पड़ती है।

५—यदि एक ग्राहक को उधार दिया जाता है तो दूसरों को भी उधार देने की प्रथा बढ़ती है।

केवल उसी दशा में उधार देना ठीक समझना चाहिये जब कि ग्राहक को सुविधा देने का ख्याल हो, और न देने से बेमुरौवती मालूम हो कर उससे मित्रता व प्रीति में कमी आने का भय हो, लेकिन उधार का रुपया मिलने में कोई शंका न हो।

(२) उधार देने के रक्षार्थ यत्न--

ग्राहकों को खरीदारी में सुविधा पहुँचाने के सिवाय उधार देने के लाभ कुछ नहीं। लेकिन यह सुविधा केवल उन्हीं ग्राहकों को देनी चाहिये जिनके बारे में यह विश्वास हो कि वे केवल सुविधा के लिये ही ऐसा कर रहे हैं, तथा उन्हें उधार न देने से उन ग्राहकों को कायम रखना असम्भव है। फिर भी ऐसा करते समय ग्राहक को उधार देने को एक सीमा नियत कर देनी चाहिये ताकि उसकी ओर उधार की रकम अपनी सामर्थ्य से न बढ़ जावे।

हर एक दूकानदार जो बहुधा उधार देता हो उसे इस बात का यत्न करना चाहिये कि वह नकद बिक्री पर कुछ रियायत करे, वरना नकद ग्राहक यह समझेंगे कि उनकी नक़द और उधार खरीदारी में कोई भेद नहीं है, और जो अतिरिक्त खर्च या घाटे उधार बिक्री में होते हैं उनके भी वे बिना किसी प्रकार का लाभ उठाये भागी बनते हैं। इस विचार के कारण वह उस दूकान से नक़द बिक्री करने के लिये उत्साहित नहीं होते, जिसका कि

परिणाम यह होता है कि यदि उन्हें नक़द खरीद करना होता है तो वह दूसरी दूकान से जहाँ उन्हें कम दाम में माल मिलने की आशा हो अपने रुपये का अधिक से अधिक मूल्य प्राप्त करने की चेष्टा करने के लिये उत्साहित होते हैं। इस प्रकार की वासना को दूर करने के लिये यह जरूरी है कि दूकानदार अपने नक़द व उधार बिक्री में कुछ भेद रखे, जो कि या तो नक़द रुपया देने वाले को कैश-डिस्काऊन्ट (नक़द बट्टा) काटकर अथवा उधार लेने वाले से उधार खर्च बढ़ा कर दाम लेने से कर सकता है। इस बट्टे अथवा खर्चे की दर अवस्थानुसार निश्चय करनी चाहिये, जैसे एक या दो सप्ताह के अन्दर माल का दाम मिल जाने पर कुछ खर्चा न लगाया जावे, इसके उपरान्त देने पर एक पैसा रुपया हर मास के हिसाब से उधार की रकम पर ब्याज तथा खर्चों का चार्ज किया जावे। यह शर्त उधार लिये हुये मीमो पर छपी रहनी चाहिये, जिस पर कि उसके माल लेते समय हस्ताक्षर हो जाने चाहिये।

हर हालत मे यत्न यही होना चाहिये कि बिके हुये माल का रुपया तत्काल मिले, और यदि उधार बिक्री की प्रथा भी साथ साथ चलानी जरूरी हो तो नक़द और उधार बिक्री करने के मूल्य में कुछ भेद रहे। यह भेद एक रुपये से अधिक माल की नक़द बिक्री पर Cash discount के रूप में खरीदार को कुछ कटौती देकर भी किया जा सकता है।

आजकल महँगी के कारण बहुत सी बहूमूल्य चीजें जैसे

बाइसिकिल, आदि जो गरीब आदमियों के बड़े काम की सवारी है, इसलिये नहीं बिकने पातीं कि लेने वाले के पास उन्हें लेने के लिये उपयुक्त धन नहीं हो पाता। यदि उनके कुछ अधिक दाम नियत करके दूकानदार उन्हें किस्तबन्दी से बेचने लगें, जिस प्रकार कि सिंगर की सिलाई की मशीनें अथवा रेडियो बिकते हैं तो बेचनेवाले तथा उपभोक्ता दोनों को लाभ हो। अपनी रकम सुरक्षित करने के लिये आवश्यकतानुसार ऐसी चीजों का बीमा भी करा देना चाहिये।

विवाह आदि के अवसरों पर या मौसिमी माल, जैसे गरम बहुमूल्य कपड़ों आदि की बिक्री में भी, उधार देकर किस्तबन्दी के रूप में वसूल किया जाने की व्यवस्था की जा सकती है। लेकिन खाने पीने की वस्तुओं में या अन्य ऐसी चीजें भी जो प्रयोग में लाकर शीघ्र खतम हो जाने वाली हैं उनके उधार देने की प्रथा सिवाय विशेष अवसरों पर या मासिक रूप से उनका हिसाब करने की रीति के कारण और कभी भी नहीं होनी चाहिये। यदि ग्राहक की सुविधा के लिये कभी उसे उधार दिया जाता हो तो उससे उसका उधार का पर्चा (credit memo) उचित रूप में जरूर ले लेना चाहिये। यह पर्चा रुपया मिलने पर उसे लौटा देना चाहिये।

यह भी अत्यन्त आवश्यक है कि हरएक ग्राहक को उधार देने की एक निश्चित सीमा नियत कर दी जावे और उसका विशेष कारणों के अतिरिक्त उल्लंघन न किया जावे। कुल

रकम जो उधार में लगी हो वह दूकान में लगी कुल पूँजी जो माल में लगी हो उसके एक निश्चित अंश (५वें भाग) से अधिक न होने देना चाहिये। छोटे दूकानदारों को जिनकी कुल पूँजी माल में लगी हुई पाँच हजार से अधिक न हो उन्हें जहाँ तक हो सके उधार बिलकुल ही न देना चाहिये। कम मुनाफ़े पर जल्दी से जल्दी नक़द बिक्री करके अपने रुपये का लौट फेर करने मे ही उनकी सफलता और भलाई है।

(३) उधार की रक़मों की वसूलयाबी—

उधार देकर उसको वसूल करने में बड़ो तत्परता और सतर्कता की जरूरत है। रुपया वसूल करने के लिये जो आदमी नियत किया जावे वह मुसतैद, सभ्य और बुद्धिमान होना चाहिये। उसे इस बान का ज्ञान होना चाहिये कि जिस ग्राहक से उसे रुपया वसूल करना है वह किस स्थिति और स्वभाव का है, उसके मिलने का क्या समय है, यदि उसके पास तक उसकी पहुँच नहीं हो सकती और रुपया भी नहीं वसूल हो रहा है तो उसे किस प्रकार से उससे मिलकर अपने आने की सूचना देने तथा उसका जवाब पाने का यत्न करना चाहिये, अथवा मालिक दूकान से पत्र लिखवाकर उसके पास पहुँचाना चाहिये। हर हालत में उसे समझना चाहिये कि उधार के रुपये का वसूल करना बहुत समझदारी का और किसी किसी दशा में एक कठिन और अप्रिय कार्य है जिसे उसको ग्राहक तथा मालिक दोनों को प्रसन्न रखकर निवाहना है। ग्राहक भी खुश रहे और मालिक का

रुपया भी जल्दी वसूल हो जावे, इस प्रकार उसे सदा व्यवहार करना चाहिये। वायदे पर उसे ठीक समय पर पहुँचना चाहिये, यदि वह ऐसा न करेगा तो अपने आपको बड़ी उलझन में डाल देगा, क्योंकि जो रुपया देनदार ने उसे देने के लिए प्रबन्ध किया होगा वह उसके न पहुँचने पर अन्य काम में खर्च हो सकता है। हर दशा में यह जरूरी है कि वह ग्राहक से बहुत सभ्यता का बर्ताव करे।

मालिक को चाहिये कि जितनी कर्ज की रकमें हों उन सबकी सूची बनवाकर सदा अपनी निगाह में रखे, और कम से कम सप्ताह में एक दिन उनकी जाँच करके इस कार्य के उत्तरदायी कर्मचारी को रुपया वसूल करने या कराते रहने के लिए जनाता रहे। एक मास या अधिक पुरानी रकमों के बारे में उसे विशेष सतर्कता के साथ काम लेना चाहिये और तत्परता के साथ याद दहानी करते रहना चाहिये जिससे कि वह अधिक पुरानी न पड़ने पावे। क्योंकि अधिकाँश पुरानी पड़कर ही रकमें खतरे में पड़ जाया करती हैं। यदि आवश्यकता समझे तो रजिस्ट्री द्वारा पत्र व्यवहार करने या नोटिस भेजने में भी देर न करे।

ग्राहक को जो भी पत्र रकम की वसूलयाबी के सम्बन्ध में लिखे जावें वे बहुत नम्रतापूर्ण तथा आदरभाव लिये होने चाहियें। उनमें किसी प्रकार की कठोरता या रोष प्रकट नहीं होना चाहिये। ऐसे पत्रों की भाषा प्रायः ऐसी होनी चाहिये जिससे कि प्रतीत हो कि अन्य जरूरी कामों के कारण देनदार

को अदायगी की ओर यथोचित ध्यान देने का अवसर नहीं मिला। उससे प्रार्थना की जावे कि वह जल्दी से जल्दी रकम को अदा कर दे अथवा अपने आदमी द्वारा एक नियत समय के अन्दर भिजवा दे, अथवा उसके देने की तारीख नियत कर दे ताकि निश्चित समय पर आदमी दुबारा भेजा जा सके क्योंकि बार बार उसके लिये लिखने या आदमी भेजने में संकोच होता है, और उसमें बेकार का समय नष्ट होकर देर मे रुपया मिलने से ब्याज आदि का बेजा खर्च पड़ता है, या और कोई कारण, जैसे वार्षिक हिसाब बन्द करने का समय नजदीक आता जाता है इत्यादि, लिखकर रुपया सरलता पूर्वक वसूल करने की चेष्टा करनी चाहिये। लेकिन यदि सरलता पूर्वक रुपया वसूल होने की आशा न हो तो अदालती कार्यवाही व नोटिस आदि देने में देर नहीं करनी चाहिये। पर ऐसा करने के पहले एक पत्र ग्राहक या दूकानदार के नाम निजी तौर पर भी लिखकर उसका ध्यान इस ओर विशेष रूप से आकर्षित करना चाहिये।

रकमें अधिकांश वही फँसा या डूबा करती हैं जिनके बारे में अधिक दिन से याद दहानी न की गई हो, अथवा कोई ग्राहक धोखा देकर माल उधार ले जावे या माल ले जाने के बाद अपना व्यवहार बन्द कर दे। कभी कभी नौकर अपने मालिक के जाली पर्चे बना कर भी उसके नाम से माल ले जाकर उसको तथा दूकानदार दोनों को धोखा देते देखे गये हैं। इसलिये नौकर द्वारा

उधार देने में विशेष सावधानी की जरूरत है। ऐसी अव-स्थाओं को भी जिसमें ग्राहक उधार की रकम अधिक बढ़ा लेता है सदा बचाते रहना चाहिये। उसके प्रति सीमित उधार की रकम से कभी उधार की रकम नहीं बढ़ने देना चाहिये। महीने में कम से कम एक बार जरूर खाते आदि की सब उधार की बकाया रकमों को ध्यान से देखना चाहिये कि कोई रकम ऐसी तो उसमें दर्ज नहीं है जिसको वसूल करने की उचित कार्य-वाही नहीं की गई है। ऐसा न करने से कभी कभी कोई रकम बिलकुल ध्यान से उतरकर वसूल होने से रह जाती है और वह वर्ष के अंत में नजर आती है जबकि उसका वसूल करना देर के कारण बहुत कठिन या असंभव हो जाता है। हर हालत में यह भी जरूरी है कि जितनी रकमें बकाया हों उनकी याद दहानी देनदारों को हर मास किसी न किसी रूप से होती रहे।

(४) कर्ज लेने व लौटाने में सावधानी—

जिस प्रकार उधार की रकमों को वसूल करने में तत्परता की जरूरत है उसी प्रकार देनेवाली रकमों को भी सदा ध्यान में रखना चाहिये ताकि वह जल्दी से जल्दी निपटाई जा सकें और कर्ज की कुल रकम बढ़ने न पावे। कर्ज लेने तथा उसको चुकाने में नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना जरूरी है:—

१—उधार लेने से जहाँ तक हो बचना चाहिये। केवल मौसिमी माल अथवा किसी विशेष माल पर या ठेके के लिये ही उसे कम से कम मात्रा में लेकर काम होते, ही तुरन्त लौटाने की

योजना करनी चाहिये। अधिक समय के लिये पूंजी बढ़ाने की दृष्टि से उधार लेना ठीक नहीं, क्योंकि फिर उसका निपटाना कठिन हो जाता है, और उस पर ब्याज की रकम बराबर चढ़ती रह कर व्यापारी के लिये वह एक समस्या हो जाती है। ऐसा माल जिसके चलने मे जरा भी शंका हो उधार लेकर कभी नहीं खरीदना या बनवाना चाहिये। ना ही कोई ऐसा माल उधार लेना चाहिये जिसके दाम गिरने की संभावना हो क्योंकि ऐसा माल बेचने वाला अच्छी आसामी देखकर उसे उधार लेने का प्रलोभन देता है। उधार लेकर माल बेचने में बड़ी सावधानी की जरूरत है क्योंकि यदि वह न चल सका या उसके आगे चलकर दाम गिर गये तो उसमे बड़ा घाटा होता है।

२—यदि व्यापार बढ़ाने के लिये कर्ज लेना हो तो केवल उसी पूंजी की जमानत पर ले जिसका लौट फेर न हो रहा हो, जैसे मशीनरी आदि पर, और वह कम से कम ब्याज पर ही बेंक आदि से लेना चाहिये। महाजन या साहूकार से तभी ले जब किसी बेंक से न मिल सके, और उसके बिना काम न चल सके। इस बात का भी ध्यान रखे कि किसी एक महाजन या अन्य व्यक्ति से अधिक उधार न बढ़ाये, क्योंकि यदि उसका किसी कारण चित्त बदल गया तो वह अपनी कुल रकम एक साथ और जल्दी ही माँगकर लेनदार को उलझन में डाल सकता है। इस बात की भी जरूरत है कि इस प्रकार से ली हुई रकम को जल्दी से जल्दी लौटा दे। एक वर्ष से अधिक कर्ज की रकमों

को तो विशेष ध्यान में रखे। यदि किसी विशेष माल या ठेके के लिये रकम उधार ली हो तो उसका जैसे जैसे रुपया उतरता जावे उससे कर्जे की रकम को निपटाते जाना चाहिये।

३—यदि कोई देनदार अपनी रकम न मांगता हो या भूल गया हो तो ऋणी व्यक्ति का कर्तव्य है कि उसको जिस तरह से हो पता लगा कर दे दे। ऐसा न करने से वह दोषी होगा तथा उसकी कीर्ति में फ़रक पड़ेगा। किसी कर्जे की रकम का अधिक दिन न देना भी कीर्ति में फ़रक डालता है। और उससे व्यापार को धक्का पहुँचने का डर रहता है।

४—कर्जे की रकम को जब देना हो तो उसके लेनदार के नाम से ही चिक (cheque) द्वारा देना चाहिये। इस चिक को क्रास भी कर देना चाहिये या आर आर्डर (or order) देना चाहिये, ताकि उसका रुपया केवल उस ही को मिल सके और कर्ज लौटाने का प्रमाण भी निश्चित रूप से रहे। किसी दूसरे से मिला हुआ चिक (Cheque) कर्जे की अदायगी में देने से यह लाभ नहीं होता।

अध्याय १०

कर्मचारियों से बर्ताव और उनकी शिक्षा

(१) अच्छे और बुरे कर्मचारी—

व्यापार की सफलता में जितना भाग उसमें लगे कर्मचारियों तथा श्रमजीवियों का होता है उसकी कद्र व्यापारी कम ही कर पाते हैं। वे समझते हैं कि केवल उन्हीं के परिश्रम, धन और बुद्धि पर उनकी व्यापारिक सफलता निर्भर है, तथा कर्मचारियों से जिस प्रकार कि वे चाहें काम ले सकते हैं। वे यह नहीं समझते कि यदि एक भी कर्मचारी उनके यहाँ असन्तुष्ट है या काम में लापरवाही करता है तो उसके व्यापार में उसके कारण कितनी हानि होती है। ऐसा कर्मचारी जो काम करता है वह मन से न करने के कारण अच्छी प्रकार नहीं करता या, उसके करने में लापरवाही करता है। यदि वह ग्राहकों के साथ व्यवहार करने में लापरवाही करता है तो उससे असन्तुष्ट ग्राहक दूकान पर आना बन्द कर देते हैं, और दूसरों से भी बुराई करके उनके मन को उस दूकान के प्रति दूषित कर देते हैं, जिससे कि दूकान बदनाम हो कर उसमें घाटा होने लगता है। असन्तुष्ट कर्मचारी दूकान के मालिक की भी बुराई करके उसकी कीर्ति में बाधा डालता है।

कई कारणों से, जिनमें वर्तमान महँगी मुख्य है, आजकल ऐसी परिस्थिति हो रही है कि शुभचिंतक कर्मचारियों का मिलना बहुत कठिन हो गया है। जिसको देखो वह अपने ही स्वार्थ में तल्लीन है। वह यह नहीं सोचता कि मालिक के भले में ही उसका भला है, और यदि वह अच्छे प्रकार से मन लगा कर काम करेगा तो इसमें मालिक की भलाई के साथ साथ उसकी भी भलाई होती है। यदि किसी कारण मालिक उसके अच्छे काम की कदर नहीं करता तो इसकी उसे परवाह नहीं होनी चाहिये, क्योंकि अच्छे काम का कभी न कभी अच्छा फल जरूर मिलेगा, और मन लगाकर सदा काम करने से उसकी कभी कदर न घटेगी। लेकिन यदि ऐसा न करके वह किसी कारण काम में लापरवाही करने लगेगा तो सदा के लिये उसकी आदत और कदर घट जाने में शक नहीं है। ऐसे कर्मचारी न स्वयं प्रसन्न रह सकते हैं, न मालिक को ही सन्तुष्ट और प्रसन्न रख सकते हैं जिसके कारण उनकी उन्नति नहीं हो सकती।

साथ साथ मालिक अथवा मुख्य व्यवस्थापक को भी चाहिये कि कर्मचारियों से सदा प्रेम का बर्ताव करे और उनकी भलाई तथा सुख में ही अपनी भलाई तथा उन्नति समझे। एक भी असन्तुष्ट कर्मचारी उसकी कीर्ति तथा व्यापार में बाधा डाल सकता है।

(२) कर्मचारियों से बर्ताव—

कर्मचारी भिन्न भिन्न स्वभाव और प्रकृति के होते हैं, यह

उनकी शिक्षा, आयु, रहने और पालन पोषण के वातावरण आदि पर निर्भर है, जो कि बदले नहीं जा सकते। स्वभाव अनुसार उन्हें तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम श्रेणी के वे कर्मचारी होते हैं जो एक बार काम बता देने से उसे वचनानुसार यथासम्भव कर देते हैं। इसके अतिरिक्त और भी काम जो उनके करने योग्य हो वह बिना कहे करते रहते हैं। ऐसे कर्मचारी बड़े उपयोगी होते हैं, क्योंकि बहुत से काम ऐसे होते हैं जिनको मालिक कह नहीं पाता लेकिन उनके न होने से उसका नुक़सान हो जाता है। इसलिये एक सुयोग्य कर्मचारी, जो मन लगाकर काम करता है, उसे ऐसे काम के बारे में याद दिलाकर अथवा उसके बिना कहे ही उसे करके अपनी होशियारी अथवा कर्तव्य-परायणता का परिचय देता है जिसके कारण वह मालिक का प्रिय बनकर उन्नति करता है।

तीसरे प्रकार के कर्मचारी वह होते हैं जो कि बताए हुये काम में से भी कुछ करते हैं कुछ छोड़ देते हैं। या उसे मन लगाकर न करने के कारण उलटा सीधा बेगार की भाँति कर देते हैं, और कोई कोई काम तो वह तभी करते हैं जब कि उनसे उसके लिये कई बार कहा जाय। ऐसे कर्मचारियों के बारे में मालिक को उनसे किसी काम के लिये कह कर भी उसके हो जाने के बारे में निश्चिंतता नहीं होती।

मालिक को चाहिये कि एक कर्मचारी को उसकी बुद्धि, अनुभव तथा शिक्षा और शक्ति के अनुसार ही काम में लगाये

तभी वह उसे अच्छी प्रकार से कर सकेगा। किसी नये कर्मचारी को काम में लगाने से पहले उसके गत अनुभव तथा आदतों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये। जहाँ तक हो सके इन ही के अनुकूल उसे काम सौंपे। यदि उसकी रुचि अन्य कार्य की ओर भी जान पड़े तो उसे उसको भी करने का मौका दे। इस प्रकार वह बहुत से कामों में निपुण होकर विशेष उपयोगी बनाया जा सकता है। यदि उसे किसी ऐसे काम में लगाना हो जिसे वह जानता न हो तो उसे ऐसे कर्मचारी के सुपुर्द करना चाहिये जो उसे अच्छी प्रकार से जानता हो और उसे सिखा सके। साथ साथ उसे ऐसी पुस्तकें देने का भी प्रबन्ध करना चाहिये जिनकी सहायता से वह उस काम को भली प्रकार से करना सीख सके। इस प्रकार से सिखाया हुआ कर्मचारी मालिक के बहुत लाभ का होकर उसकी एक पूँजी के समान हो जाता है।

हरएक मालिक या व्यवस्थापकों को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि प्रायः सब कर्मचारियों की मनोवृत्ति उसके स्वयं के आचरण, स्वभाव तथा व्यवहार पर भी बहुत कुछ निर्भर होती है। यदि वह अपना आचरण भिन्न प्रकार का करे और कर्मचारियों से अन्य प्रकार के आचरण की आशा करे तो यह एक दूसरे के प्रतिकूल और असम्भव बात है। इसलिये उसे अपने व्यवहार तथा आदतों पर बराबर दृष्टि डालते रहना चाहिये, तथा जैसा वह उन्हें बनाना चाहता है वैसा स्वयं भी करते तथा वर्तते रहना चाहिये।

कर्मचारियों से सदा इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिये कि उनमें उत्तरदायित्व के साथ कार्य करने की भावना और उत्साह आपसे आप पैदा होते रहें, तथा हर एक अपने करने योग्य कार्य को बिना कहे ही कर दिया करें, या यदि वह कुछ कर्मचारियों का मुखिया है तो उनसे करा दिया करे। उनसे छोटे छोटे साधारण कामों के लिये, जिन पर सफ़ाई, प्रबन्ध, अथवा नफ़ा नुकसान निर्भर है, कहने की आवश्यता नहीं पड़नी चाहिये। जिस काम के लिये उन्हें आज्ञा देनी हो वह साफ़ साफ़ और दृढ़तापूर्ण दी जावे, उसमें किसी प्रकार की द्विविधा न हो, और यदि कोई ऐसा कार्य हो जिसके बारे में करने को कहते समय पूरी तौर पर निर्णय न हो सके, तो उसके लिये जहाँ तक हो सके ऐसा आदमी नियुक्त करना चाहिये जो कि उसके बारे में पहले से कुछ अनुभव रखता हो, तथा अवस्थानुसार उसे सफलता पूर्वक कर सके। लेकिन जो आज्ञा दे उसके सम्बन्ध में किसी प्रकार के सन्देह की गुंजायश नहीं रहनी चाहिये। यदि सन्देह हो भी तो उस काम को करने वाले के लिये उसे नहीं छोड़ना चाहिये। ऐसा न हो सके तो परिस्थिति अनुसार उसको बर्तने के लिये आज्ञा दे देनी चाहिये। सन्देह पूर्ण आज्ञा देने से काम या तो होगा ही नहीं, यदि होगा तो नियुक्त किये हुये कर्मचारी की समझ अनुसार भला या बुरा होगा। कभी कभी ऐसा भी होता है कि आज्ञा देने के बाद उसमें परिवर्तन की आवश्यकता प्रतीत होती है। ऐसा करने

से कर्मचारियों में अपने प्रति काम लेने में अविश्वास की भावना पैदा हो जाती है, और वह फिर आज्ञा की कद्र कम करने लगते हैं जिससे कि प्रबन्ध में बहुत बाधा पड़ती है। इसलिये जो आज्ञा दी जावे उस पर दृढ़ता से आरूढ़ रहना, चाहिये चाहे वह ठीक न भी प्रतीत होती हो। जो काम तत्क्षण कराना हो उसे उसी समय करने के लिये दृढ़ता पूर्वक फुर्ती से करने को कहना चाहिये। पर इस बात का ध्यान रखे कि ऐसे कर्मचारी से दूसरे कार्य के लिये तब तक न कहा जावे जब तक कि जिस काम में वह लगा हुआ है पूरा न हो जावे।

(३) बर्ताव सम्बन्धी अन्य आवश्यकीय विचार--

१—सब कर्मचारी एक सी प्रकृति या स्वभाव के नहीं होते। इसलिये, जैसा कि ऊपर कहा गया है, जहाँ तक हो सके उन्हें उनके स्वभाव, आयु, अनुभव तथा शिक्षा के अनुसार ही काम पर लगाना चाहिये, तथा उसी के अनुसार उनसे बर्ताव भी करना चाहिये। यदि कोई प्रशंसा से काम ठीक करता है तो उसकी प्रशंसा करके उससे कार्य लेना चाहिये, लेकिन यदि कोई कड़ाई से व्यवहार करने से ही ठीककरता है तो उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये, लेकिन उसके स्वाभिमान का हमेशा ध्यान रखना चाहिये। सबके साथ प्रेम और आदर का ही व्यवहार वर्तना चाहिये। क्रोधपूर्ण व्यवहार करने से अपने मन और बुद्धि को भी अशान्ति होती है जिससे कि अन्य काम बिगड़ता है।

२—छुट्टी के मामले में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं बर्तना चाहिये। तरक्की के मामले में भी प्रायः ऐसा ही करना चाहिये, लेकिन यदि कोई कर्मचारी विशेष योग्यता का परिचय देता है तो उसको विशेष तरक्की का अवसर देना चाहिये और जहाँ तक हो उसका उत्साह बढ़ाना चाहिये। यदि कर्मचारियों का मासिक वेतन बढ़ाना हो, जैसा कि हर वर्ष नहीं तो दूसरे या तीसरे वर्ष अवश्य करते रहना चाहिये, अथवा उनकी संख्या बढ़ानी हो तो ऐसा इस प्रकार से करना चाहिये कि व्यापार पर असह्य बोझ न पड़ने लगे। यदि गुंजायश कम हो तो वेतन का खर्च इस प्रकार से बढ़ाये कि अधिक काम के दिनों का अधिक या अतिरिक्त वेतन और शेष दिनों का साधारण वेतन उन्हीं लोगों को जो अधिक काम अथवा कुछ दिनों के लिए विशेष काम संभालते हों देना चाहिये। ऐसा करने से सदा के लिए वेतन खर्च की वृद्धि न होकर उसी सीमा तक यह वृद्धि होगी जिसको उसका व्यापार संभाल सके, और वर्ष के निखर्चे मुनाफ़े पर उसका कोई अनुचित प्रभाव न पड़े। अधिक लाभ होने पर सभी कर्मचारियों को बोनस आदि के रूप में अधिक से अधिक देना चाहिये क्योंकि इसमें उनका भी भाग्य और हाथ रहा है। हाँ, जिसकी जितने दिन की उस वर्ष में नौकरी रही हो और जो जिस स्थान पर नियुक्त रहा हो उसको उसी के अनुसार कम या अधिक देना चहिये। यदि किसी विभाग में अधिक मुनाफ़ा हुआ हो और शेष में साधारण, तो केवल उसी विभाग के कर्मचारियों को पुरस्कृत करना आवश्यक होगा।

३—यदि कोई कर्मचारी काम बिगाड़ता है अथवा कोई अन्य नुकसान लापरवाही के कारण कर देता है या काम ठीक नहीं करता तो उसे ठीक रास्ते पर लाने के लिये समझाना अथवा ताड़ना चाहिये। ऐसा करने से अन्य कर्मचारियों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है, और न करने से वे भी बिगड़ते हैं। क्योंकि बिना दण्डित अपराध अन्य अपराधों को पैदा करता है (Every unpunished delinquency has a family of delinquencies)। परन्तु आकस्मिक हानि के लिये कोई दण्ड नहीं देना चाहिये, केवल उसका कारण जानकर भविष्य में उससे बचने का उपाय करना चाहिये। यदि कोई कर्मचारी साधारण डाँट अथवा समझाने से नहीं सुधरता तो उसकी आदत या कुटेव सुधारने के लिये उसे कुछ ऐसा दण्ड देना चाहिये जिसका प्रभाव अधिक दिन तक रहे, जैसे उसका स्थान बदल देना या कुछ दिन के लिये उसका वेतन कम कर देना या विना वेतन अथवा अर्ध वेतन पर कुछ दिन के लिये छुट्टी दे देना इत्यादि। लिखकर अथवा मौखिक रूप से उसको ऐसे ही दोषों को दूर करने के लिये समझाना या कहना चाहिये जिनको वह सुधार सकता है। लेकिन यदि उसका स्वभाव ही दूषित है तो समझाने से कोई लाभ न होगा। ऊपरी तौर पर कड़ाई का व्यवहार जारी रखने से सब कर्मचारियों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है, और किसी को दण्ड देने की नौबत नहीं आती। लेकिन दशा और समय अनुसार ही काम लेना चाहिये। यदि कोई कर्मचारी बीमार, बूढ़ा या बच्चा है तो उसके साथ रियायत का बर्ताव बर्तना चाहिये। बीमारी की

अथवा भूखा होने की दशा में काम न लेना चाहिये। अधिकाँश लापरवाही से काम करनेवाले की लापरवाही और उसके कारण नुकसान का व्योरा एक अलग चिट्ठे में तारीख सहित दर्ज करते जाना चाहिये।

४—यदि हर प्रकार से समझाने अथवा ताड़ित करने या मामूली दण्ड से भी किसी कर्मचारी के सुधरने की आशा न हो तो उसे अधिक दिन तक न अज़माकर शीघ्र ही जिस प्रकार हो सके अलग कर देना चाहिये। यदि कोई पुराना कर्मचारी हो और किसी कारण से उसकी भी आदतें बिगड़ गई हों, जो सुधर न सकें, तो उसके साथ भी इसी प्रकार का व्यवहार करना चाहिये। लेकिन हर दशा में जब किसी कर्मचारी को अलग किया जावे तो उसको उचित वेतन से कुछ अधिक देकर प्रसन्नता पूर्वक ही विदा करना चाहिये, और दी हुई रकम की रसीद उसी समय ले लेनी चाहिये। कभी ऐसे कर्मचारी का हिसाब करने में देर नहीं करना चाहिये और न ही अलग किये हुये कर्मचारी को बार बार किसी कारण से आने जाने का अवसर देना चाहिये, सिवाय इसके कि जब कुछ दिन बाद यह जान पड़े कि उसकी आदतें सुधर गई हैं और वह अब ठीक रास्ते पर आ गया है। यही व्यवहार ऐसे कर्मचारी के साथ भी करना चाहिये जिसको काम कम हो जाने अथवा निबट जाने पर अलग किया गया हो।

यदि कोई कर्मचारी ऐसा हो जिसको किसी कारण विशेष से अलग करना उचित प्रतीत न होता हो लेकिन

समझाने से वह सुधरता भी न हो, तो या तो उसे पदच्युत कर देना चाहिये अथवा दूसरे योग्य कर्मचारी को उसके मुकाबले में अच्छे प्रकार से काम करने का अवसर देना चाहिए। इस प्रकार का व्यवहार करने से वह लज्जित होकर स्वयं सुधरने का यत्न करेगा।

५—कर्मचारी के बीमार पड़ने पर उसको हर प्रकार की सुविधा, इलाज आदि की, देनी चाहिये और उससे काम नहीं लेना चाहिये। इसके अतिरिक्त सामर्थ्य व आवश्यकता अनुसार उसकी सहायता भी करनी चाहिये।

६—अच्छे कर्मचारियों की खातिर अथवा तरक्की का विशेष ध्यान रखना चाहिये, तथा अवसर मिलते ही उनके पद में भी उन्नति करते रहना चाहिये। ऐसा करने से अन्य कर्मचारियों का भी उत्साह बढ़ता है।

७—सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कोई कर्मचारी अथवा अन्य आदमी ऐसा कार्य या व्यवहार न करे जिससे अन्य कर्मचारियों में वैमनस्य फैले।

८—मौसिमी काम के लिये यदि अधिक कर्मचारी बढ़ाने हों तो उनको रोज़ाना वेतन की दर से ही नियुक्त करना चाहिये। यदि काम की मात्रा के अनुसार उनका वेतन नियुक्त हो सकता हो तो और भी अच्छा फल होगा। ऐसा करते समय इस बात का प्रबन्ध विशेष रूप से करना चाहिये कि काम अच्छे ही प्रकार का हो तथा माल की छीजन कम हो। यदि इस प्रकार से मात्रानुसार काम कराने का वेतन प्रारम्भ में नियत न किया जा सके तो कुछ दिन रोजाना वेतन पर वही काम करा कर

उसकी मात्रानुसार मजदूरी नियत की जा सकती है। इस प्रकार काम कराने से काम अधिक और किफ़ायत से होता है और उसे करनेवालों की आमदनी भी अधिक होती है। यथा सम्भव मासिक वैतनिक कर्मचारियों की संख्या कम से कम रखनी चाहिये। ऐसा करने से बेकार की या मामूली मामूली बातों के लिये उनमें गैरहाजिरी की आदत नहीं पड़ने पाती। यदि कोई वैतनिक कर्मचारी इस प्रकार का व्यवहार करता हो तो उसका भी वेतन रोजाना की दर से स्थित कर के उसकी भी आदत सुधारी जा सकती है। लेकिन अनिश्चित कार्य के लिये विशेषतः मासिक रूप से ही वैतनिक कर्मचारी रखना उचित होता है।

९—यदि किसी कर्मचारी को बाहर काम के लिये कुछ दिन को भेजना है तो उसको वहाँ के कार्य सम्बन्धी अन्य शिक्षाओं के अतिरिक्त इस बात की भी ताकीद कर देनी चाहिये कि वहाँ के काम का व्योरा नित्य लिखकर भेजता रहे। यदि उसका काम ही बाहर घूम कर करने का है तो वह एक डायरी में सब काम का व्योरा अथवा उससे सम्बन्धित अन्य आवश्यक बातें नित्य लिखता रहे और उसकी एक नकल मालिक अथवा मुख्य व्यवस्थापक को रोज भेजता रहे।

१०—एक व्यापारी को अपने कर्मचारियों के सन्तुष्ट और प्रसन्न रहने में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिये। सन्तुष्ट रहने से वे उसकी प्रशंसा फैलाते हैं और काम दिल से करते हैं, अन्यथा उसकी हानि की परवाह न करके उसकी अवहेलना

करते हैं। इसलिये उसे चाहिये कि उनसे ऐसा व्यवहार करे कि यदि उनमें से कोई अलग भी कर दिया जावे तब भी वह उसकी प्रशंसा ही करे।

(४) नया कर्मचारी रखना—

नये कर्मचारी रखने से पहले उसके बारे में अच्छी प्रकार से जाँच कर लेनी चाहिये कि वह कैसे आचरण तथा घराने का है। जब तक उसके आचरण तथा सम्बन्धियों का ठीक ठीक पूरे तौर से पता न लग जावे उसे नौकर नहीं रखना चाहिये। युवा स्त्री को नौकर रखने में तो विशेष सावधानी की जरूरत है। यदि किसी ऐसी स्त्री का रखना जरूरी ही हो तो उसे अन्य प्रौढ़ स्त्रियों के साथ ही काम करने के लिये नियुक्त करे और हर दशा में उनके द्वारा चोरी आदि होने से सचेत रहे।

यदि धन अथवा माल की रक्षा या लाने ले जाने के लिये किसी की नियुक्ति करनी हो तो उसकी उचित जमानत ले लेनी चाहिये। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि एक समय में उसकी जिम्मेदारी पर उसके पास अधिक धन या माल अधिक समय तक न रहे। कर्मचारियों का जल्दी जल्दी बदला जाना एक अच्छी निशानी नहीं है। इसलिये यदि किसी विशेष अपराध बिना अलग किया हुआ पुराना आदमी दुबारा नौकरी चाहे तो उसे जहाँ तक सम्भव हो दुबारा काम पर रखकर उसे अपनी योग्यता का पुनः परिचय देने का अवसर देना चाहिये। इससे वह कृतज्ञ होकर अपना काम अच्छी प्रकार से करता है तथा अनुभवी होने के कारण उससे काम लेने में भी सुविधा होती है

तथा मालिक और सेवक में आपस का प्रेम और विश्वास दृढ़ होता है।

नये कर्मचारी का वेतन तत्काल नियत नहीं कर देना चाहिये सिवाय ऐसी दशा के कि वह पहले कभी काम कर चुका हो। कुछ दिन उसका काम देखकर, और यदि वह बिलकुल अनभिज्ञ हो तो काम सीखने पर, उसका वेतन नियत करना चाहिये। यदि कारखाने आदि में काम लेना हो तो शुरू में रोजनदारी पर ही उसकी नियुक्ति करनी चाहिये या काम की मात्रा के अनुसार उसके काम का मूल्य नियत करना चाहिये।

(५) कर्मचारियों की शिक्षा—

यदि कर्मचारियों की संख्या कम हो तो प्रबन्ध ऐसा होना चाहिए कि उनमे से हर कोई सब प्रकार का काम करने के योग्य बने। यदि उनकी (मुख्यतः बिक्रेताओं की) संख्या अधिक हो तो मालिक को चाहिये कि उनकी जानकारी के लिये उनमें से हर एक के कर्तव्यों की सूची तथा व्यवहार के नियम एक पुस्तिका के रूप मे बनवाकर अथवा छपवा कर हर एक कर्मचारी को देवे, जिससे वह उसी के अनुसार अपना कार्य तथा व्यवहार करे। यह पुस्तिका मुख्य कार्यकर्ता स्वयं ही हर एक कर्मचारी को दे, और देते समय उसे उसकी उपयोगिता तथा उसके अनुसार कार्य करने के लाभ समझा देवे। उसमें लिखे नियमों के अनुसार काम न करने पर यदि वह दन्ड का भागी हो तो इस प्रकार का नियम भी उसमें लिखा होना चाहिये। एक रजिस्टर मे एक कर्मचारी के अच्छे या बुरे व्यवहार और कामों का

ब्योरा भी दर्ज करते जाना चाहिये, ताकि उसके आधार पर उसकी तरक्क़ी या बोनस आदि उसे दिया जा सके, अथवा काम ठीक न होने पर उसे दण्ड दिया जा सके। विक्रेताओं के लिये ग्राहकों से बर्ताव सम्बन्धी निम्नलिखित नियम उपरोक्त पुस्तिका में लिखा रहना चाहिये :—

"किसी ग्राहक में इस बात का विचार न पैदा होने दो कि उसकी ओर तुम्हारा ध्यान नहीं है। यदि तुम या अन्य विक्रेता जो तुम्हारे निकट है, लेकिन उसकी माँग पर ध्यान नहीं दे सकता हो अथवा उसके दूकान पर आते ही उससे बातचीत शुरू न कर सकता हो, तो उससे कृतज्ञता पूर्ण भाव से कुछ समय ठहरने अथवा रिक्त स्थान को बतलाते हुए वहाँ बैठने की प्रार्थन करो। उसके साथ सदभावना का व्यवहार जारी रखो तथा उसकी बात का उत्तर तुरन्त दो।

"यह ज़रूरी नहीं है कि वह आप से माल लेकर ही जावे लेकिन यह अत्यन्त जरूरी है कि वह आपके व्यवहार से प्रसन्न होकर जावे। तुम्हारा मुख्य ध्येय केवल माल बेचना ही नहीं होना चाहिये, बल्कि यह भी होना चाहिये कि ग्राहक दूकान पर बार बार आया करे और सदा सन्तुष्ट और प्रसन्न होकर जाया करे। आते ही उसका प्रसन्न चित्त से स्वागत करना, उसकी क्या सेवा की जाय अथवा क्या माल दिखाया जाय, इस प्रकार की बात करना, तथा माँगे हुए माल को आदर पूर्वक दिखाना, यदि हो सके तो उसकी प्रशंसा करना और दाम पूछने पर युक्ति सहित दाम बतलाना चाहिये। यदि कोई सस्ती चीज़ है तो उसका दाम बिना पूछे हुए

भी उसकी अन्य प्रशंसा के साथ साथ बता देना चाहिये, परन्तु यदि वह महँगी हो तो उसकी विशेषता का वर्णन करते हुए ही उसका दाम बताना चाहिये, जिससे वह उस पर विशेष रूप से आकर्षित हो सके। यदि वह किसी चीज़ को लेने के लिये आरूढ़ होता है और तुम भी उसे उसके अनुकूल समझते हो तो उस पर ही उसे जमने में सहायता दो, न कि उसके अतिरिक्त और चीजें दिखाकर उसका मन विचलित कर दो, क्योंकि यदि वह एक भी सौदा आपसे पक्का कर लेता है, तो फिर अन्य सौदे सरलता पूर्वक हो जाते हैं।

"ग्राहक की वेश-भूषा पर ध्यान न देकर उसकी मनोवृत्ति पर विचार करो तथा उसी की भाँति उससे व्यवहार करो। सभी ग्राहकों से आदर-सत्कार का व्यवहार करो। माल देकर उसका दाम तत्काल वसूल कर अथवा उसके नाम लिखवाकर चलते समय अवस्थानुसार उसकी अथवा उसके लिये हुये माल की प्रशंसा करके कृतज्ञता पूर्ण भाव से उसे विदा करो।"

कर्मचारी चाहे काम सीखा हुआ हो अथवा उससे अनभिज्ञ हो, उसे नियुक्त करते समय ही मौखिक रूप से अथवा लिखकर बता देना चाहिये कि उसका क्या क्या कर्तव्य होगा तथा उसे किस प्रकार का आचरण बर्तना होगा, अथवा किस प्रकार का व्यवहार उसे नहीं करना होगा। उसके काम पर आने तथा जाने का समय क्या होगा तथा स्थाई रूप से नियुक्त होने तक उसका क्या वेतन अथवा श्रम मूल्य होगा, इत्यादि।

इसी प्रकार यदि अपने पुराने अथवा अनुभवी कर्मचारी को नये प्रकार के काम में लगाना हो तो उसे भी उसके बारे में पूर्ण

रूप से शिक्षा दीजिये। यदि उसे नये स्थान भेजना है तो वहाँ के बारे में उसे सब हाल बतला देना चाहिये, वरना उसे वहाँ जाकर करने में सुविधा या जानकारी न होकर वह काम को अच्छी प्रकार से न कर सकेगा। यह भी सम्भव है कि वह उसे कर ही न सके और वहाँ जाने आने का श्रम तथा खर्चा बेकार सिद्ध हो, क्योंकि हर नये स्थान से जाकर वहाँ के बारे में पूर्ण जानकारी स्वयं प्राप्त करने में समय लगना है और जब तक वह उसे प्राप्त नहीं कर लेता कार्य ठीक नहीं हो पाता।

(६) समय की पाबन्दी——

हर एक कर्मचारी का काम पर आने और छुट्टी का समय नियत होना चाहिये। यदि वह ठीक समय पर आता है तो उसे छुट्टी का समय होते ही छुट्टी भी दे देनी चाहिये। यदि कोई कर्मचारी ठीक समय पर नहीं आता तो उसके आने में छूट का समय व्यतीत होते ही या तो उस दिन का वेतन घटा देना चाहिये, अथवा अधिक देर से आने पर लौट जाने के लिये वाध्य करना चाहिये। क्योंकि हर एक कर्मचारी को यह समझना चाहिये कि काम का समय उसका नहीं है वह उस मालिक का है जिसके लिये उसे वेतन मिलता है और जिसके ऊपर उसका नफा नुकसान निर्भर है। यदि वह उसे उसके लिये खोकर काम पर उपस्थित होता है तो दूसरे कर्मचारियों का भी, जो उसके सहयोगी हैं, हर्ज करता है, नहीं तो कम से कम उनके लिये एक बुरा उदाहरण बनता है और इस प्रकार प्रबन्ध में भी गड़बड़ी डालता है।

यदि किसी कर्मचारी को उसके काम करने का समय व्यतीत हो जाने के बाद अधिक या अन्य काम के लिये रोकना हो तो जहाँ तक हो सके ऐसा करने की उसको सूचना पहले से दे दो ताकि उसके लिये वह पहले से तैयार हो जावे और आवश्यकतानुसार कुछ जलपान करके उसे करने के लिये अपने मे ताज़गी भी पैदा कर ले। यदि वह स्वय इसका प्रबन्ध न कर सके तो मालिक अथवा व्यवस्थापक को चाहिये कि उसके लिये वह अपने पास से प्रबन्ध कर दे, क्योंकि थका हुआ कर्मचारी न तो ठीक काम कर ही सकता है न उससे, उसके स्वास्थ्य की दृष्टि से समय हो जाने के बाद काम लेना ही चाहिये। ऐसा करने से कभी कभी कोई दुर्घटना या बड़ा नुकसान भी हो जाया करता है। यदि मास मे कई बार ऐसा किसी कर्मचारी के साथ करना पड़े तो उसे यथायोग्य कुछ अतिरिक्त वेतन भी देना चाहिये। हर हालत मे अतिरिक्त काम का अतिरिक्त मुआवज़ा (compensation) देना बहुत जरूरी है, चाहे वह किसी रूप मे हो, और यदि अधिकाँश ऐसा करना पड़ता हो तो ऐसे काम के लिये विशेष प्रबन्ध स्थायी रूप से करना चाहिये जिससे कि काम करने मे सुबिधा हो और वह अच्छी प्रकार से हो सके।

इसके अतिरिक बीच मे भी कर्मचारी को जलपान आदि करने के लिये कुछ छुट्टी देनी चाहिये। लगातार काम करने वालों को एक समय मे ५ घन्टे से अधिक काम नहीं करने देना चाहिये जब तक कि वह अपने मे ताज़गी न पैदा कर ले, लगातार काम करने वालों से काम लेने के कुल घन्टे प्रायः ८ से अधिक नहीं

होने चाहियें। अधिक काम होने पर बारी बाँध कर काम लेना चाहिये। इससे काम अच्छा और अधिक होता है।

काम करने वालों में अधिकांश ऐसे लोग होते हैं जो अपनी आमदनी में से जलपान का प्रबन्ध स्वयं नहीं कर पाते, ऐसे लोगों के लिये सस्ते जल-पान, जैसे गुड़ व चना आदि, का प्रबन्ध मालिक की ओर से होना चाहिये। इस से थोड़े अतिरिक्त खर्च से अधिक काम रुचिपूर्वक होता है।

(७) अतिरिक्त या अधिक काम लेना--

कभी कभी किसी कर्मचारी के बाहर चले जाने अथवा किसी अन्य कारणवश गैर हाजिर हो जाने से अथवा कुछ दिन के लिये काम बढ़ जाने से काम का दबाव विशेष रूप से बढ़ जाता है। ऐसी दशा में विशेष काम करने वाले कर्मचारियों को उनका वेतन कुछ बढ़ा कर देना चाहिये और यदि अधिकाँश ऐसा होता हो तो विशेष आदमी बढ़ाने चाहियें। लेकिन सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि आवश्यकता से अधिक कर्मचारी होने से बजाय अच्छा काम होने के वह और बिगड़ने लगता है, क्योंकि काम कम होने से बेकार की गपशप में बहुत समय नष्ट होने लगता है और काम ठीक नहीं होता। अधिक या अतिरिक्त काम लेते समय कर्मचारी के खाने पीने का विशेष ध्यान रखना चाहिये ताकि उसके कारण उसके स्वास्थ पर किसी प्रकार का बुरा असर न पड़े। बढ़े हुए काम को करने के लिये उन्हीं कर्मचारियों को नियुक्त करना चाहिये जो उसे अच्छी प्रकार और सुविधापूर्वक कर सकें। बाकी लोगों की समय पर छुट्टी कर

देना चाहिये। जिन लोगों ने अधिक काम किया हो उनका ब्योरे-वार हिसाब रखना चाहिये ताकि उसके लिये उन्हें उचित अति-रिक्त वेतन या पुरस्कार दिया जा सके।

(८) विशेष कृपा का व्यवहार—

हर एक कार्य के लिये जो एक कर्मचारी अपने मालिक के लिये कभी कभी विशेष रूप से करता रहता है, उसे अतिरिक्त वेतन देकर अथवा अन्य रूप से पुरस्कृत नहीं किया जा सकता। इसलिये मालिक को चाहिये कि उसे कभी कभी ऋतु परिवर्तन अथवा उत्सव आदि के उपलक्ष्य में कुछ न कुछ सम्मानपूर्वक देता रहे। इसी प्रकार उसके बीमारी आदि के कष्ट में पड़ जाने पर या उसके यहाँ विवाह आदि के अवसर पर उसकी सहायता करके और उसमें सम्मिलित होकर उसके साथ सद्व्यवहार का परिचय देना चाहिये। ऐसा करने से जो आपस का प्रेम बढ़ता है उसका फल दोनों के लिये बहुत अच्छा होता है। लेकिन साथ साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि किसी कर्मचारी से इतनी घनिष्ठता नहीं बढ़ा लेनी चाहिये कि वह उसका दुरु-पयोग करने लगे। और अपने काम से लापरवाह होने लगे, या मालिक अथवा मुखिया की अवहेलना या उपेक्षा करने लगे, जिसका कि कुप्रभाव अन्य कर्मचारियों पर भी पड़े बिना नहीं रह सकता। मालिक अथवा मुखिया को भी चाहिये कि प्रत्येक कर्मचारी को सेवक न समझ कर अपना सहायक समझे और इसी भाव से सदा उससे काम ले और व्यवहार करे। साथ साथ

कर्मचारी को भी चाहिये कि अच्छी प्रकार अधिक से अधिक काम करने में ही अपनी भलाई समझे।

(६) कर्मचारियों में नया उत्साह पैदा करना—

यदि कोई कारोबार ऐसे स्थान में हो जहाँ कि सिवाय काम के कोई मनोरंजन का सामान न हो या मिलने जुलने के साधन का अभाव हो, तो वहाँ के वातावरण में कभी कभी कोई मनोरंजन का कार्य करके उसमें नयापन लाना बहुत जरूरी है। ऐसा न करने से वहाँ के रहने वालों में एक प्रकार की उदासीनता आ जाती है जिसका प्रभाव उसके स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है और जीवन भार रूप होकर काम करने की रुचि कम हो जाती है। वहाँ मुख्य व्यवस्थापक को चाहिये कि वहाँ के वातावरण को योग्य बनाने के लिये उसमें कुछ मनोरंजन के सामान पैदा करे ताकि वहाँ के रहने वाले कर्मचारी तथा उनके बच्चे उससे लाभ उठा सकें। उसे चाहिये कि वह सब प्रकार के बड़े व छोटे लोगों से जो वहाँ रहते हों मिलता रहे और और उनका निजी हाल (दुःख सुख का) मालूम करता रहे, और जहाँ तक हो सके उसमें भाग लेता रहे। इससे मन में प्रसन्नता उमड़ती है और बड़ेपन के डींग के कारण जो एकाग्रता पैदा हो जाती है उससे वह प्रभावित न होकर स्वयं प्रसन्न रहने के साथ साथ औरों को भी प्रसन्न तथा संतुष्ट रख सकेगा, क्योंकि सच्ची प्रसन्नता सुखों को स्वयं भोगने में इतनी नहीं मिलती जितनी कि औरों को सुखी और प्रसन्न बनाने से प्राप्त होती है।

काम के समय भी जब व्यवस्थापक अथवा मुखिया किसी कार्य में लगे कर्मचारियों से व्यवहार कर रहा हो तो उसके लिये यह जरूरी नहीं है कि वह सदा गम्भीर भाव ही धारण किये रहे। उसको अवसर अनुसार कभी कभी उन पर कुछ मनोविनोद के वचन भी बरसाते रहना चाहिये। इससे काम करने वालों का मन प्रफुल्लित होकर उनकी थकान दूर होती है, तथा काम में नई रुचि पैदा होती है। पर ऐसा व्यवहार केवल काम में उत्तेजना लाने के लिये ही करना चाहिये, इतना न करे कि उसके कारण काम बिगड़ने लगे। काम के समय कर्मचारियों के आपस में मनोविनोद का बढ़ना कभी सहन नहीं करना चाहिये। यदि वे कभी कभी ऐसा करें तो उसकी उपेक्षा कर देनी चाहिये। पर यह भी एक सीमा तक, क्योंकि हर दशा में कर्मचारियों मे अपने उच्च अधिकारियों के सामने कोई व्यवहार ऐसा नहीं करना चाहिये जिससे उसके प्रति उनके मान तथा मर्यादा में अन्तर पड़े।

(१०) कर्मचारियों में स्वेच्छाचारिता--

कर्मचारियों में जहाँ तक हो सके स्ववेच्छाचारिता न बढ़ने दो। जो काम उनसे जिस प्रकार करने को कहा जावे सचेत रहो कि वे उसी प्रकार करते हैं, यदि नहीं करते तो उसके क्या कारण हैं? या तो उनका उसी प्रकार करने का समर्थन करो अथवा उनको ठीक ठीक तरीका उसे करने का बताओ। उन्हें अपने मन से काम करने तथा उसमें उन्नति करने के लिये उत्साहित करो लेकिन जिस प्रकार तुम निर्णय कर दो

उसके विपरीत वे न करने पावें। स्वेच्छाचारिता से यही तात्पर्य है कि काम कहा कुछ जावे और करें कुछ, या जिसे काम दिया जावे वह उसे किसी दूसरे पर टाल दे। यह बीमारी कर्मचारियों में मालिक अथवा संचालन की ही कमजोरी अथवा काम लेने में दृढ़ता के अभाव के कारण पैदा होती है, जिसको कि रोकना चाहिये। यदि किसी काम के बारे में स्वयं निश्चय न कर सको तो किसी अन्य उसके ज्ञाता से पूछ कर, अथवा उस काम पर लगे कर्मचारी से ही परामर्श करके उसे निर्णय अनुसार करने को कहो। उसको इस बात का अवसर न दो कि किसी काम के बारे में स्पष्ट रूप से दी हुई आज्ञा का उल्लंघन करे। यदि उसके इस प्रकार करने में कुछ विशेष कठिनाई अथवा असमञ्जस की सम्भावना हो तो उसका उपाय उसे समझा दो पर साथ साथ इस बात की ताक़ीद रहे कि जिस प्रकार हो सके काम को पूरा किया जावे। कठिनाइयों अथवा रुकावटों को जिस प्रकार से हो सके पार करने से ही काम होता है न कि उनसे पराजित होने से। यदि किसी कार्य के करने का ढंग स्वयं निर्णय न कर सको तो उसे उसके योग्य कर्मचारी पर ही अपनी बुद्धि तथा अवस्थानुसार करने को छोड़ दो।

(११) दण्ड विधि—

कर्मचारियों को किस प्रकार उनके अपराध के लिये दण्डित किया जावे यह भी एक सरल विषय नहीं है। आवश्यकता से अधिक दण्ड या कम देना दोनों का ही फल अच्छा नहीं होता। इसके अतिरिक्त किस कर्मचारी को किस प्रकार दण्ड दिया जावे

जिससे उस पर उसका अच्छा प्रभाव पड़े यह भी निर्णय करना आसान बात नहीं होती। कभी कभी साधारण सी बात पर कर्मचारियों में अशान्ति फैल जाती है जिसको दमन करना दुसाध्य हो जाता है। इसलिये दण्ड देते समय विशेष सावधानी की जरूरत है, कुछ सुझाव इस सम्बन्ध में नीचे दिये जाते हैं:—

१—दण्ड हानि पहुँचाने के अभिप्राय से न दे, बल्कि अपराधी को आगे के लिये सुधारने के विचार से दे। इसलिये जैसा आदमी हो उसके साथ वैसा व्यवहार करे और कोई ऐसा कार्य न करे जिससे उसके स्वाभिमान पर आघात हो, बल्कि उसे यह जान पड़े कि जो दण्ड उसे दिया गया है उसके वह योग्य ही था।

२—जहाँ तक हो शारीरिक अथवा वैतनिक दण्ड न देकर मानसिक दण्ड देना चाहिये। इससे जो सुधार होता है वह स्थायी होकर दूसरों पर भी अच्छा प्रभाव डालता है, तथा वातावरण भी बिगड़ने नहीं पाता। मानसिक दण्ड के रूप यह हैं (१) अपने सामने से कुछ या अधिक समय के लिये अपराधी को हटा देना, और उससे बात न करना, उसे कुछ समय के लिये वेतन सहित, बिना वेतन या अर्ध वेतन पर छुट्टी दे देना, या कुछ दिन के लिये उसे पदच्युत कर देना, इत्यादि।

३—मामूली अथवा आकस्मिक अपराध के लिये केवल डाँट देना ही काफ़ी है। अश्लील गाली आदि का प्रयोग किसी दशा में भी नहीं करना चाहिये।

४—यदि किसी कर्मचारी को अपनी बुद्धि अथवा काम का घमण्ड हो गया हो, और इस कारण वह आज्ञाओं की अव-

हेलना करने लगा हो तो उसे कुछ दिन के लिये दूसरे काम पर लगा कर उस से अन्य ऐसा काम लेना चाहिये जिससे वह दूर रहना चाहता हो।

५—जुर्माने का दण्ड उसी दशा में देना उचित है जब कि और प्रकार से दण्ड का कोई प्रभाव पड़ने की आशा न हो। किसी नुकसान का दाम काट लेना अथवा किसी भारी अपराध के कारण वेतन कम कर देना यह जुर्माने में शामिल नहीं है, लेकिन इसका भी प्रयोग जहाँ तक हो सके बचा जाना चाहिये।

६—शारीरिक दण्ड किसी दशा में न दे, सिवाय छोटी अवस्था के शैतान बाल कर्मचारियों को, जिन्हें और किसी प्रकार का दण्ड कारगर नहीं होता। लेकिन ऐसा भी बहुत छूट के साथ करे और केवल नाम मात्र के लिये करे। अपराध हो जाने पर केवल डाँट देना ही पर्याप्त होता है। इसका दूसरे बाल-कर्मचारियों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

७—यदि किसी कर्मचारी की आदत बिगड़ गई हो और वह कहने से अथवा डाँटने से नहीं सुधारी जा सकती हो, तो कुछ दिन के लिये उसका वेतन घटा देना चाहिये, और यदि ऐसा करने पर भी उसकी बुरी आदत नहीं छूटती तो उसको अलग कर देना चाहिये।

८—चोरी, जुआ, व्यभिचार आदि की कुटेव यदि किसी कर्मचारी में पड़ गई हो तो इसके जानकारी में आते ही तत्काल कठिन कार्यवाही करनी चाहिये और यदि कर्मचारी अधिक पुराना न हो तो उसे तत्काल अलग कर देना चाहिये। चोरी

आदि के लिए पुलिस के सुपुर्द उसे उसी दशा में करना चाहिये जब कि इसकी अत्यन्त आवश्यकता ज्ञान पड़े वरना नहीं।

९—दूसरे मनुष्यों द्वारा आरोपित दोष पर किसी कर्मचारी को दंड जहाँ तक हो सके नहीं देना चाहिये, जब तक कि उसका पूरा पूरा सबूत न मिल जाये। विशेष कर यदि किसी बाहरी आदमी या किसी ग्राहक का दोष लगाया हुआ हो तो और भी सचेत होकर काम करना चाहिये। ऐसी दशा में तो जहाँ तक हो सके अपने आदमी का पक्ष ही लेना चाहिये, और यदि दण्ड देना हो तो उसके सामने उसी दशा में उसे दण्डित करना चाहिये जब कि बिना ऐसा किये अपने यहाँ की साख पर धब्बा लगने का डर हो।

१०—जिन कर्मचारियों की ऐसी आदत हो कि वे केवल दिखाने भर के लिये काम करना चाहते हों या अत्यन्त सुस्त हों तो उन्हें जहाँ तक हो सके जल्दी ही अलग कर देना चाहिये, अथवा उनसे ठेके पर ही काम कराना चाहिये।

११—उपरोक्त विचार मुख्यतः नीची श्रेणी के कर्मचारियों से व्यवहार करने के बारे मे ही प्रकट किये गये हैं। ऊँची श्रेणी के कर्मचारियों से तो सदा आदर का व्यवहार ही बर्तना चाहिये, अथवा उन्हें अलग कर देना चाहिये या पदच्युत कर देना चाहिये। उनकी विशेष त्रुटियों की एक गाथा (record) जरूर रखना चाहिये। उसमें उनके विशेष अच्छे कामों का भी ब्योरा दर्ज करते रहना चाहिये, तथा व्यवस्थापक अथवा संचालक के

बदलते समय उनके कारनामों, आदतों आदि का वर्णन भी उनमें किया जाना चाहिये।

(१२) आकस्मिक या अचानक नुकसान—

ऐसे नुकसान सब जगह होते रहते हैं। यदि कभी कोई नुकसान इस प्रकार हो जावे तो उसको अवस्थानुसार निम्न-लिखित रूप से निबटा देना चाहिये—

१—यदि संयोगवश कोई नुकसान हो जाता है और कर्मचारी की लापरवाही उसमें सिद्ध नहीं होती अथवा वह उसका पहला अपराध है तो आगे को सचेत करके हर हालत में क्षमा कर देना चाहिये।

२—यदि कोई नुकसान कर्मचारी की लापरवाही से अथवा अज्ञानता से हुआ है तो उसको भविष्य के लिये होशियारी से काम करने के लिये ताड़ना करनी चाहिये। उसके लिये उसे उसी दशा में दण्ड देना चाहिये जब कि कई बार चेतावनी देने पर भी वह अपनी असावधानी से बाज़ नहीं आता।

३—यदि किसी कर्मचारी का काम ही ऐसा है कि उसमें कभी कभी नुकसान होना अनिवार्य है तो हरएक नुकसान का एक व्योरेवार लेखा रखना चाहिये और उसके अधिक बार होने पर उचित दण्ड या चेतावनी देनी चाहिये।

४—यदि कोई कर्मचारी किसी कार्य को उसको ठीक रीति से नहीं करने के कारण नुकसान करता है तो उसको या तो दूसरे काम पर लगा देना चाहिये अथवा वह काम उसे ठीक रीति से करने की पूर्ण शिक्षा देकर ही उसे सौंपना चाहिये और

यदि वह उसके योग्य न हो तो उसे उस स्थान से अलग कर देना चाहिये।

५—कभी कभी चीज़ ठिकाने से अथवा सावधानी से न रखने के कारण भी नुकसान हो जाता है! यदि ऐसा हो तो भविष्य मे ऐसा नुकसान न हो, ऐसा प्रबन्ध तुरन्त कर देना चाहिये, और अन्य चीज़ों को भी जो बेठिकाने हों उनका स्थान नियत करके उन्हें सुरक्षित करना चाहिये, और जिस कर्मचारी की लापरवाही से नुकसान हुआ हो उसे भविष्य के लिये ताड़ना करनी चाहिये।

(१३) धोखेबाजी से सचेत रहो--

वैसे तो हर दशा और समय में व्यापारी को धोखेबाजी से सचेत रहना जरूरी है, लेकिन अपने कर्मचारियों से भी उसे सदा सचेत रहना चाहिये। समय की कठिनाई और धार्मिक शिक्षा तथा परमात्मा के डर के अभाव के कारण आजकल उच्च आचरण के कर्मचारियों का मिलना बहुत कठिन हो गया है, और पग पग पर सतर्कता की आवश्यकता है, इसलिये जहाँ तक सम्भव हो, सदा सच्चरित्र कर्मचारी ही नियुक्त करना चाहिये, और यदि बाद में मालूम हो कि किसी का चालचलन ठीक नहीं है, जैसे वह जुआरी है या मद्यपान आदि कुटेव का दोषी है, अथवा उसके खर्च आमदनी से अधिक हैं, या वह विशेष रूप से कर्जदार है, तो उसको तुरन्त अलग कर देने की व्यवस्था करनी चाहिये। जिन दूकानों पर फुटकर छोटी छोटी चीजें बिकती हों उनमें ऐसी चीजों का, विशेषतया जो बहुमूल्य की

हों उनका, स्टाक सुरक्षित रूप से रखना चाहिये, ताकि उनकी आसानी से चोरी न हो सके; और यह भी देखते रहना चाहिये कि ग्राहकों को जो माल बेचा जावे वह उसको दिये हुये Cash Memo के अनुसार ही हो।

कर्मचारियों की लापरवाही से इतना नुकसान नहीं होता जितना कि उनके चरित्रहीन होने से होता है, क्योंकि लापरवाही से किया हुआ नुकसान दृष्टिगोचर होता रहता है और उसको रोकने का तुरन्त प्रबन्ध हो सकता है, लेकिन चरित्र ठीक न होने के कारण जो नुकसान होने लगते हैं उनका पता चलना कठिन हो जाता है। इसलिये ऐसे कुटेव जैसे जुआ, चोरी, झूठ मद्यपान या व्यभिचार आदि की ओर मालिक को विशेष कड़ी निगाह रखनी चाहिये। उनसे अपने व्यवसाय को कभी दूषित नहीं होने देना चाहिये।

यदि किसी कर्मचारी को किसी ऐसे अपराध या दोष के कारण जिसको वह सुधार नहीं सकता, अथवा जो कठिनाई से अथवा आकस्मिक रूप से दृष्टिगोचर हुआ हो, अलग करना हो तो ऐसा करने में देर नहीं करनी चाहिये। नहीं तो अवसर पा कर और यह जानकर कि वह अब अलग किया जावेगा वह कोई बड़ा नुकसान कर स्वयं गायब हो सकता है।

हिसाब रखनेवाले या रुपया वसूल करने वाले या माल खरीदने वाले कर्मचारी की ओर भी विशेष ध्यान रखना चाहिये। यह जाँचते रहना चाहिये कि वह हिसाब में किसी प्रकार की जालसाजी तो नहीं करता और जितनी रकमें आती हैं तथा दी

जाती हैं उनका वह सच्चा हिसाब रखता या देता है। उसमें किसी प्रकार की कमी बेशी तो नहीं करके कुछ का कुछ दिखा रहा है। इस अभिप्राय से जो आदमी रुपया ले या दे उसके हिसाब का मिलान उसके अतिरिक्त किसी दूसरे आदमी से जो हिसाब रखता हो या बनाता हो रोज कराना चाहिये, और देने तथा लेनेवाली कुल रकमों के हिसाब को स्वयं रोज जाँच कर हस्ताक्षर करते रहना चाहिये। माल खरीदने अथवा आर्डर देने वाला एक ही कर्मचारी नहीं होना चाहिये। आर्डर सदा मालिक अथवा मुख्य व्यवस्थापक द्वारा ही दिया जाना चाहिये, और उसको खरीदकर लाने वाला उसके बिक्रेता से या प्रयोग में लाने वाले से कोई अन्य होना चाहिये। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि माल खरीदने अथवा अन्य काम के बिल का दुबारा भुगतान न हो जावे, या जाली हस्ताक्षर बनाकर उसके नाम से कोई रुपया या माल आदि न ले लेवे। इस अभिप्राय से हर माल के पर्चे पर उसके भुगतान का नोट तुरन्त कर देना चाहिये, और चिक बुक को सदा अपनी रक्षा में रखना चाहिये।

(१४) कर्मचारियों में सद्भावना की आवश्यकता—

जिस प्रकार मालिक को अपनी उन्नति तथा व्यापार के विकास के लिये अपने कर्मचारियों को संतुष्ट और प्रसन्न रखने की आवश्यकता है, इसी प्रकार कर्मचारियों को भी ध्यान रखना चाहिये कि मालिक के कारोबार की उन्नति में ही उनकी उन्नति तथा भलाई है। क्योंकि यदि उसमें मुनाफ़ा न हुआ तो वह कहाँ से उनको प्रसन्न रख सकता है, अथवा उन्हें कायम रख

सकता है। यदि कभी मालिक उनकी सेवाओं की कदर, या उनके साथ उचित व्यवहार न करता हो, तो उन्हें चाहिये कि उचित रूप से अपने विचार उस पर प्रकट करें अथवा अपनी कठिनाई उससे कहें। न कहने से अथवा अनुचित रूप से कहने से उनका ही दोष तथा नुकसान होता है, और मालिक उनके प्रति कठोरता का व्यवहार करने लगता है जिसका परिणाम अच्छा नहीं होता। इसलिये जो शिकायत अथवा कठिनाई हो उसे मालिक अथवा मुख्य व्यवस्थापक से कहना चाहिये। अन्य लोगों से तो सदा उसकी प्रशन्सा ही करनी चाहिये, और अपना कर्तव्य समझकर मन लगा कर उसके व्यवसाय में उसकी सहायता करते रहना चाहिये, जिससे उसके व्यापार की उन्नति होती जावे और फल स्वरूप उनकी भी उन्नति हो।

अधिकांश कर्मचारी इसलिये काम करते हैं कि यदि वे काम न करें तो उनकी अथवा उनके बालबच्चों की जीविका कैसे चले। इसलिये उनकी सद्भावना प्राप्त करने के लिये मालिक अथवा मुख्य संचालक को उनसे सदा ऐसा व्यवहार करना चाहिये कि उसके प्रति उसकी सदभावना उत्पन्न होती रहे और वे उसकी उन्नति मे ही अपनी उन्नति समझें। ऐसा करने के लिये उनको अच्छे काम का तत्काल अथवा उचित समय पर पुरस्कार देते रहना चाहिये। अच्छे काम की प्रशंसा कर देना भी उसको एक प्रकार से पुरस्कृत करना है। और ऐसा करना इतना ही आवश्यक है जितना कि काम बिगड़ने पर उसको ताड़ित करना या समझाना। यह उसके स्वभावानुसार इस

प्रकार करना चाहिये कि उस पर ऐसा करने का अच्छा प्रभाव पड़े न कि वह उससे निरुत्साहित होकर काम में रुचि कम कर दे, जैसा कि किसी को बार बार डाँटते रहने से हुआ करता है। हर दशा में जैसा जिसका स्वभाव हो उसके साथ उसी प्रकार का अवस्थानुसार व्यवहार करना चाहिये।

कभी कभी कर्मचारियों को इकट्ठा करके उनको अपनी सद्भावना भी उनकी ओर प्रदर्शित करते रहना चाहिये, और उनकी कठिनाइयों का हाल उनसे पूछना चाहिये। यदि किसी कर्मचारी में किसी कारण शिथिलता आ गई हो तो उसमें नया उत्साह पैदा करने का यत्न जल्दी ही करना चाहिये, या कुछ दिन के लिये उसे छुट्टी दे देना चाहिये। यदि किसी कारण विशेष से कुछ समय के लिये कुल अथवा किसी विभाग के कर्मचारियों को असाधारण रूप से अधिक काम करना पड़ा हो तो उनमें नया उत्साह पैदा करने के लिये उनकी विशेष छुट्टी करके उनके मनोरंजन का प्रबन्ध करना चाहिये, ऐसा करने से उनमें शिथिलता नहीं आवेगी। ऐसी अवस्था अधिकांश अस्थायी होती है इसलिये इसे दूर करना बहुत साधारण बात है पर इसके लाभ बहुत हैं।

कर्मचारियों से सदा कड़ाई का व्यवहार करने से बहुत सी नुकसान की बातें मालिक या संचालक की जानकारी से छिपाई जाया करती हैं। लेकिन यदि वह उनसे कृपा का व्यवहार बर्तता रहेगा तो वह इस प्रकार से अन्धकार में न रखा जायेगा, कोई न कोई भेद की बात बतला ही देगा। उन्नति सम्बन्धी विचार विनिमय

योग्य कर्मचारियों से कभी कभी करते रहना चाहिये। ऐसा करने से उनमें अच्छा काम करने का उत्साह पैदा होता है और इस कारण कि वे अपने काम के अनुभवी होते हैं उनसे उसके सम्बन्धित अच्छे और उपयुक्त विचार भी मिलते हैं जिनका जानना एक व्यवसायी के लिये बहुत जरूरी है। उनसे पूछते रहने से कर्मचारियों की विचार शक्ति भी उन्नति की ओर दौड़ती है, जिससे कि काम के सुचारु रूप से होने में अथवा अच्छे सुझाव मिलने में बड़ी सहायता मिलती है। उन्नति के विचारों के साथ साथ उनमें चीजों को खराब न होने देने सम्बन्धी सावधानी की भी आदत पड़ती है। यदि कोई चीज कहीं खराब हो रही हो अथवा सुरक्षित स्थान पर न रखी हो या कोई कर्मचारी धोखा दे रहा हो, तो उसकी ओर व्यवस्थापक का ध्यान आकर्षित करना चाहिये अथवा स्वयं ही उसे नुकसान से बचाने का प्रयत्न करना चाहिये। ऐसा न करने से जो नुकसान होते हैं वे वर्ष के निखर्चे मुनाफ़े पर गहरा असर डालते हैं, और यदि उसके कारण यथेष्ट मुनाफ़ा नहीं हुआ तो कर्मचारियों को बोनस (bonus) आदि नहीं दिया जा सकेगा, न ही उनकी उन्नति हो सकेगी। उपरोक्त रीति से, यानी एक दूसरे के प्रति अच्छी भावना रखने से, कर्मचारियों में किसी प्रकार का वैमनस्य नहीं फैलने पाता, और उनका मानसिक स्तर ऊँचा उठता जाता है।

अधिक कर्मचारी होने से उनमें विभाग कर देना चाहिये, और हर एक विभाग का एक मुखिया नियुक्त कर देना चाहिये। इसी के द्वारा उनसे काम लेना चाहिये तथा काम बिगड़ने पर

दण्ड देना या चेतावनी करनी चाहिये। मुखिया को चाहिये कि प्रत्येक कर्मचारी से उसकी मनोवृत्ति और स्वभाव अनुसार न्याय से काम ले, किसी को शिकायत का मौका न होने दे। यदि कोई काम ठीक न करे अथवा समय बेकार नष्ट करे, उसकी रिपोर्ट अपने ऊपर के कर्मचारी अथवा मालिक या व्यवस्थापक से करे, ताकि उसे सुधारने का यत्न किया जा सके अथवा वह अलग किया जा सके। यदि निश्चित काम से अधिक कर्मचारी हों तो भी इस बात की रिपोर्ट करे ताकि विशेष कर्मचारियों को दूसरे कामों पर लगाया जा सके। अधिकांश अशिक्षित कर्मचारियों का ऐसा स्वभाव होता है कि वे अपने कष्ट को मालिक अथवा मुख्य संचालक से नहीं कहते हैं, लेकिन मन में दुःखी होते रहते हैं, या अन्य लोगों से कहते फिरते हैं जिसके कारण मालिक को उनका हाल नही मालूम होता, और न वह उसकी कठिनाई दूर कर पाता है, या ऐसा न कर सकने पर उनकी वह सांत्वना ही कर पाता है। जिसके परिणाम स्वरूप कभी कभी आपस का मतभेद बढ़कर स्थिति गम्भीर हो जाती है, और मालिक तथा कर्मचारी दोनों का नुकसान होता है। बड़ी बड़ी काम की हड़-तालें जिनमें हजारों आदमी काम छोड़ बैठते हैं, प्रायः इसी प्रकार के मतभेद के कारण पैदा होती हैं।

अध्याय ११

कार्य कुशलता

(EFFECIENCY)

जिस प्रकार एक घड़ी तभी अच्छी हो सकती है जब कि उसका हर एक पुर्जा अच्छी प्रकार से बना हो और वह ठीक रीति से जुड़ा हो, परन्तु ऐसा न होकर या केवल उसकी ऊपरी चटक भड़क या मुलम्मेबाजी कर दी गई हो तो उससे उसकी कदर बढ़ नहीं जाती, इसी प्रकार एक ऐसा माल जो ऊपर से खूब सुसज्जित और भड़कीला हो लेकिन वास्तव में घटिया हो तो वह निकम्मा ही कहा जावेगा और उससे उपभोक्ता प्रसन्न नहीं हो सकते न कोई एक बार परीक्षा करके उसे दुबारा लेने को इच्छुक होगा। फलतः उसकी माँग बढ़ने नहीं पावेगी। इस के विपरीत यदि वह आकर्षित होने के साथ साथ ठीक और पायदार भी हो तो वह कदर से बिकेगा और उसकी मांग स्थाई रूप से बढ़ती जायगी। माल उसी समय ठीक बन सकता है तथा पायदार और सुन्दर हो सकता है जबकि उसके बनानेवाले कारीगर होशियार हों, कारखाने का प्रबन्ध अच्छा हो, और जो कच्चा माल उसके बनाने में लगाया जाय वह उत्तम प्रकार का हो। कहा जाता है कि एक टूटी जर्मनी मशीन जब जांच के लिये खोली गई तो मशीनों के विशेषज्ञों ने इस बात को माना कि उसका एक एक

पेंच ऐसी खूबी से बनाया तथा जड़ा गया था मानो उस मशीन का सारा महत्व उसी पेंच पर निर्भर है। यही बात अन्य उन्नतिशील देशों की बनी मशीनों तथा वहाँ के बने अन्य मालों में पाई जाती है। इसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ के कारीगरों तथा कारखानों के मालिकों का मानसिक स्तर ऊँचा है। वे घटिया चीज बनाना कभी पसन्द नहीं करते, और अन्य देशों की बनी चीजें भी वे लोग तभी लेते हैं जब कि वे हर प्रकार से सुदृढ़ और सुन्दर हों। यही कारण है कि उनकी बनाई हर चीज़ देखते ही चित्त मुग्ध हो जाता है और उसे व्यवहार में लाकर बड़ी प्रसन्नता होती है। उनका कौल है कि यदि कोई कार्य करने योग्य है तो वह पूर्ण रूप से अच्छी ही प्रकार से किया जाना चाहिये और उसमें किसी प्रकार की कसर नहीं रहनी चाहिये।

इसी प्रकार यदि हमारे कारीगर भी ऊँचे लक्ष्य से अपनी सब क्रियायें करें, चाहें उसमें उन्हें कितना ही परिश्रम क्यों न करना पड़े, या कितना ही समय क्यों न लगाना पड़े, तो फिर कहना ही क्या है। हर एक काम को पूर्ण रूप से अच्छा, कम अच्छा या चलताऊ, करने की जैसी आदत पड़ जाती है उसको बदलने में उसी प्रकार की कठिनाई होती है जैसे कि एक खराब लिखने वाले को अपना लिखना सुधारने में। अच्छी प्रकार का माल बनाने के लिये कच्चा माल जो उसमें लगा हो, जिसके द्वारा वह बना हो, जैसे स्थान पर वह बना हो आदि सभी बातों पर उसका अच्छा या कम अच्छा अथवा बुरा बनना निर्भर होता है। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि बनाने वाले और

बनवाने वाले दोनों ही का मानसिक स्तर ऊँचा होना चाहिये। ऐसा करने मे चाहे जितना भी कष्ट अथवा तात्कालिक नुकसान सहना पड़े, सहना चाहियें। कार्य की कुशलता अधिकाँश अच्छे प्रबन्ध पर भी निर्भर है। इसमे बहुत सी बातें सम्मिलित हैं, जैसे हर स्थान मे अत्यन्त सफ़ाई और कहीं कहीं कुछ हद तक सजावट, कार्यस्थान (दफ्तर, कारखाना अथवा दूकान) का ठीक समय से खुलना और ठीक ही समय पर बन्द होना। कर्मचारियों का मुस्तैद, साफ़, सभ्य और मृदुभाषी होना सभी जरूरी है। काम लेने वाला व्यवस्थापक सफ़ाई पसन्द, प्रसन्नचित्त, काम पर ठीक समय पर आने वाला, एक वस्तु का उसकी आवश्यकता पड़ने से पहले ही प्रबन्ध करने वाला, दूरदर्शी, अनुभवी और अन्य लोगों से अच्छे ढंग से काम लेने वाला होना चाहिये। हरएक वस्तु उसके ठिकाने पर रखी हो और उसका ठीक ठीक हिसाब रखा जाता हो, घटिया काम करने या कराने का दिल में ख्याल तक न आये, जो माल बने उसकी ठीक ठीक जाँच होकर ही कारखाने से बाहर जावे, ऐसा न हो कि उसके बारे मे किसी प्रकार की शिकायत की गुंजायश रह जावे, इन सब बातों के फलस्वरूप ही काम अच्छा हुआ करता है। बारम्बार सुचारु रूप से काम करने से उसमें फुर्ती आप से आप आ जाती है और वह फिर मामूली तौर पर करने से भी अच्छा ही बनता है। लेकिन एक बार भी यदि उसे इस प्रकार अच्छे ढग से न किया तो आदत बिगड़ने का डर रहता है, और ऐसा अधिक करने से तो कारीगर तथा कारखाना दोनों ही रसातल की ओर

ढुलक जाते हैं। कार्य-कुशलता के फलस्वरूप सब ही विभाग अच्छा काम करते हैं, क्योंकि यदि कहीं भी गड़बड़ शुरू हो जाती है झट ही वह दूसरे विभाग पर अपना कुप्रभाव डालती है, और यदि रोका न जाय तो झट ही यह बीमारी प्लेग की भाँति दूसरे विभागों में भी फैल जाती है, और इस प्रकार बढ़ते बढ़ते सारे व्यापार अथवा कारखाने को दूषित कर देती है। जिसके कारण सब जगह गन्दगी नजर आने लगती है और काम अच्छा न होने के साथ साथ जहाँ तहाँ टूट-फूट, गलन-सड़न या चोरी आदि प्रारम्भ होकर नुकसान होने लगते हैं। फलतः जो व्यापार अथवा कारखाना एक समय बड़े नाम से चल रहा था वह मिट्टी में मिल जाता है। इसलिये जब कभी किसी काम अथवा विभाग की दशा किसी प्रकार से भी बिगड़ने लगे तो उसे तुरन्त ही सुधार देना चाहिये। यदि कई विभागों की दशा बिगड़ी हुई मालूम हो तो उनमें से किसी एक विभाग की दशा पहले अच्छी प्रकार से सुधारनी चाहिये। इसका असर तत्काल ही अन्य विभागों पर भी पड़ने लगेगा, और फिर उनकी दशा भी सुधारना सरल हो जावेगा। एक साथ सब विभागों का सुधारना बहुत कठिन है। यदि कोई विभाग बहुत बड़ा हो और उसमें अधिक संख्या में लोग काम करते हों तो उनमें से कुछ लोगों को पृथक करके पहले उन्हें सुधारने का यत्न करना चाहिये, लेकिन यदि वहाँ स्वच्छता के अभाव के कारण ठीक काम न हो रहा हो तो पूरे स्थान में एक साथ स्वच्छता का प्रबन्ध करना चाहिये। और यदि वहाँ वस्तुयें ठीक प्रकार से न

रखी गयी हों तो उन्हें साथ साथ ठीक रखवाना चाहिये। हर प्रकार की चीज़ों को उनके नियत स्थान पर रखते समय उनकी रक्षा का भी ध्यान रखना चाहिये। यदि उनमें से कुछ खराब हो गई हों तो अलग करके उनको निकालने या मरम्मत कराकर उनके स्थान पर रखने का प्रबन्ध जल्दी करना चाहिये वरना उनके कारण उनके समीप रखा हुआ और माल भी खराब हो जावेगा या अच्छा नहीं दीखेगा।

कभी कभी यह देखकर बड़ा खेद होता है कि केवल कार्य-कुशलता के अभाव के कारण बड़े बड़े कारखाने अथवा दूकानें अन्य प्रकार से ठीक होती हुई भी बन्द हो जाती हैं। सब प्रकार की योग्यता रखते हुए भी यदि कोई व्यापारी अपने कार्य में कार्यकुशलता नहीं ला सकता तो यह उसी का दोष कहा जावेगा। इससे देश की भी बदनामी होकर व्यापार में उन्नति नहीं होने पाती। इसके विपरीत यदि वह योग्यता से काम करता हुआ इस बात का ध्यान रखे कि उसके यहाँ का माल सदा अच्छी प्रकार का बने और उपभोक्ता उससे प्रसन्न रहें तो कोई कारण नहीं है कि वह दिन प्रति दिन उन्नति न करता जावे। इस प्रकार उन्नति कर के वह अपना ही भला नहीं करता वरन उस के कारण उस देश तथा स्थान का भी नाम हो जाता है जहाँ वह कार्य करता हो।

———

अध्याय १२

प्रबन्ध

(१) आवश्यकता और उपाय—

दूकान हो अथवा कारखाना, यदि उसका प्रबन्ध ठीक नहीं है तो कितनी ही उसके साथ योग्यता बरती जाय, या धन अथवा मन लगाया जाय किन्तु उसमें सफलता प्राप्त होना कठिन हो जाता है। प्रबन्ध कर्त्ता को सदा सचेत और दृढ़ रहने की जरूरत है। जरा भी कहीं कार्य मे असावधानी या ढील हुई कि गड़बड़ी पड़ी। गड़बड़ी शुरू होते ही नुकसान तथा गन्दगी होने लगती है। इसलिये प्रत्येक सफलता चाहने वाले मालिक अथवा संचालक को इस ओर सचेत और दृढ़ रहना चाहिये। इस सम्बन्ध मे कुछ नियमों का जो उसे ध्यान मे रखना चाहियें, वर्णन नीचे किया जाता है—

१—कभी कभी देखने में आता है कि प्रबन्धक किसी कार्य का प्रबन्ध तब तक नहीं करता जब तक कि उसके बिना काम रुकने तक की नौबत न आ जाय। इस प्रकार प्रबन्ध करने मे जो कार्य सरलता के साथ विधि पूर्वक और किफ़ायत से हो सकता था उसके लिये जल्द बाजी करने से उसमें अधिक धन लगकर उसके बिना काम रुक कर या ठीक न होकर नुकसान होता है। अंग्रेजी भाषा में एक कहावत है—A stitch in time

saves nine अर्थात् समय से काम करने से यदि एक टांके से काम चलता हो तो उसे टाल कर करने से नौ टांके देने होते हैं। इस प्रकार बेकार की बाधा पैदा हो कर नुकसान होता रहता है। व्यापार हो अथवा कारखाना उसमें समय की जितनी उपयोगिता है उतनी और किसी कार्य में नहीं। उसका व्यय नुकसानको बचाने और धन कमानेही में होते रहना चाहिये। हर जरूरी चीज़ का प्रबन्ध पहले से ही करते रहना चाहिये और उसके लिये सदा सचेत रहना चाहिये।

प्रकृति का नियम है कि यदि कहीं कोई चीज़ खराब होने लगती है और उसको तत्काल न रोका जाय तो वह बहुत जल्दी और अधिक बिगड़ जाती है। साथ साथ उसके आस पास की रखी हुई दूसरी चीजें भी खराब होने लगती हैं। इसलिये यदि कोई चीज खराब हो गई हो तो उसे तत्काल अच्छी चीजों के बीच से हटा देना चाहिये और जल्दी से जल्दी ठीक करा लेना चाहिये या कार्य में आने वाली न हो तो निकाल देना चाहिये। ऐसा करने से उसके पास की अन्य चीजों की आब में फ़र्क नहीं पड़ेगा, और वह उसकी खराबी से प्रभावित होने से बच जायेंगी। तथा जितना धन उसको उसी समय ठीक कराने में लगेगा उससे कहीं अधिक उसको आगे चलकर ऐसा करने में लगाना होगा। इसके अतिरिक्त उसको अधिक समय तक न बेचने से उसमें लगे धन के लौट फेर न होने के कारण भी नुकसान होता रहता है।

कभी कभी साधारण बातों की उपेक्षा करने से भी बड़े बड़े

नुकसान हो जाते हैं। जैसे, टपकने वाली छत की मरम्मत न कराने से उसके द्वारा पानी आ जाने से बहुत सा माल खराब हो जाता है, या उसमें नमी पैदा होकर उसमें कीड़ा या ज़ङ्ग आदि लग जाता है। आवश्यकतानुसार पर्दा न लगाने से भी माल बिगड़ता रहता है। दीमक से भी सावधान रहने की आवश्यकता है, विशेषकर बरसात के बाद के दिनों में। सफ़ाई न रहने के कारण चूहे आदि जीव जन्तु बढ़ कर भी तरह तरह के नुकसान करते रहते है, इत्यादि, इत्यादि।

एक योग्य संचालक अपने प्रत्येक साधारण काम नियमित रूप से उनके निश्चित समय पर अथवा उससे पहले ही कर या करा डालता है। इस प्रकार उनसे निश्चिन्त होकर वह दूसरे बड़े बड़े कामों की ओर दत्तचित्त होकर लग जाता है और उन्हें समय पर करके उनसे पूरा पूरा लाभ उठाता है। उसके पास हरएक आवश्यक कार्य करने की एक नोट-बुक अथवा यथासमय करने की तिथिवार सूची (diary) होती है, जिसके द्वारा वह प्रत्येक जरूरी कार्य को करने का समय उपस्थित होने के पहले ही करने के लिये तत्पर रहता है, या उसे कराने का पहले से प्रबन्ध कर देता है, क्योंकि यदि वह ऐसा नहीं करता है तो फिर अवसर निकल जाता है और बाद में सिवाय पछताने के कुछ हाथ नहीं लगता। हरएक व्यापारी को चाहिये कि वह अपनी नोट-बुक, नोट-शीट अथवा डायरी मे हरएक करने योग्य काम का जो तत्त्तण नहीं किया जा सकता हो, एक नोट रक्खे और यदि हो सके तो उसके करने की तिथि भी नियत

कर दे, ताकि नियुक्त समय पर या उसके पहले ही वह किया या कराया जा सके। छोटे छोटे दैनिक कार्यों की याददाश्त भी इसी प्रकार किसी साधारण पर्चे या नोट शीट पर प्रतिदिन काम शुरू करने के पहले ही लिखकर उन्हें करने के लिए सामने रख ले और जैसे जैसे वह होते जायें उन्हें काटते जाना चाहिये।

किसी कार्य की आवश्यकता का ज्ञान पहले से विचार कर यदि उसे कर लिया जाता है, तो उसे बाद को जल्दी में करने या कराने की अपेक्षा वह अधिक सुविधापूर्वक और किफ़ायत से होता है। ऐसा करने से उसके सम्बन्धित और काम भी अच्छे ढंग से सुविधा-पूर्वक होते हैं। अच्छे प्रबन्ध का यही अर्थ है कि हरएक कार्य उसकी आवश्यकता उपस्थित होने से पहले ही कर लिया जाय।

२—दूसरा जो मुख्य नियम अच्छे प्रबन्ध का है वह यह है कि प्रत्येक वस्तु को रखने का एक स्थान नियत होना चाहिये, और वह सदा वहीं रखी जाय। यदि इस नियम का पालन कड़ाई के साथ होता रहे तो हरएक कर्मचारी को उस चीज की आवश्यकता पड़ने पर उसके लिये भटकने और समय नष्ट करने की आवश्यकता नहीं होगी। लेकिन यदि वह वस्तु काम हो जाने पर इधर उधर लापरवाही के साथ डाल दी जाती है तो उसको तलाश करने में व्यर्थ का समय नष्ट होता है और कभी कभी वह खो भी जाती है।

सब से अधिक बुरा प्रभाव मालिक या संचालक की कुव्य-

वस्था का उसके कर्मचारियों पर पड़ता है। यदि मालिक समय से आता है तो कर्मचारी भी समय से आवेंगे, यदि वह सचेत, सतर्क और फुर्तीला है तो उसके कर्मचारी भी ऐसा ही करने के लिये प्रभावित होंगे। इसी प्रकार उसकी अन्य प्रकृतियों और स्वभावों का भी प्रभाव उन पर पड़ता है, जिसके कारण बहुत सी गड़बड़ियां पैदा होने से बची रहती हैं। लेकिन यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह पायेगा कि जहाँ तहाँ चीजें पड़ी पड़ी खराब हो रही हैं और उनका कोई पुरसां हाल नहीं, जब तक कि उनके कारण कोई बड़ा नुकसान न हो जाय। इस लिये हर एक व्यवस्थापक को चाहिये कि अच्छे प्रबन्ध की ओर सदा कड़ाई से ध्यान देता रहे और कभी कभी अवसर मिलने पर अपने कारोबार के कोने कोने में जा कर वहाँ की दशा का निरीक्षण करता रहे, और आवश्यकतानुसार वहाँ की सफ़ाई तथा सुरक्षा का प्रबन्ध करता रहे। यह भी ध्यान रक्खे कि बेकार चीजों को बहुत न जमा होने दिया जाय, और उनके लिए एक स्थान भी नियत हो। साथ ही उन्हें जल्दी जल्दी निकालता रहे नहीं तो वह व्यर्थ में जगह घेर कर उसका ध्यान आकर्षित करती रहेंगी, और स्वयं नष्ट और क्षीण होने के साथ साथ अन्य चीजों को भी अपने साथ नष्ट करेंगी।

(२) काम बढ़ने पर अपनी जिम्मेदारी क्रमशः बाँटना—

हर एक कार्य संचालक को इस ढंग से अपने सहायक कर्मचारियों से काम लेना चाहिये कि वह उसके कहे अनुसार सब काम करते जायँ। हो सकता है कि उन्हें शिक्षा देने के लिये

उनके साथ स्वयं भी लगना पड़े। ऐसा करने में तनिक भी हिच-किचाना नहीं चाहिये। सदा अपने सामने आदर्श यही रखना चाहिये कि उसकी उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति में काम एक सा सुचारु रूप से होता रहे। यह माना कि जितनी अच्छे प्रकार से उसका कार्य उसकी उपस्थिति में होगा उतना उसकी अनुपस्थिति में असम्भव है, लेकिन सिद्धान्त और कार्य में स्थाई उन्नति के विचार से उनमें स्वयं अच्छी प्रकार से काम करने की भावना पैदा करना भी जरूरी है। यदि एक व्यापारी अपने काम में सदा स्वयं ही जुटा रहता है तो उसकी अनिवार्य अनुपस्थिति में जो कि बीमारी इत्यादि के कारण आवश्यक हो सकती है, उसके व्यापार को बहुत हानि पहुँचती है। यद्यपि आरम्भ के कुछ वर्षों तक तो अधिक से अधिक ध्यान और समय उसमें स्वयं ही देना चाहिये।

किसी व्यापार या विभाग से छुट्टी क्रमशः ली जा सकती है। इसका सरल उपाय यह है कि हर एक विश्वासी कर्मचारी को उसके अनुकूल पद पर रखता जाय, और उस पर अपना विश्वास बढ़ाता जाय, साथ ही कभी कभी उसकी जाँच भी करता जाय, और जैसे जैसे काम बढ़े उसके सुपुर्द उसके सहायक या सहयोगी कर्मचारी करता जाय और उसका नया और अलग विभाग बनाता जाय। इस प्रकार से जितने अधिक विभाग होते जायें उतने मुख्य कार्यकर्त्ता अथवा व्यवस्थापक उसके लिये बनाता जाय, और उसका हिसाब अलग अलग बनवा कर उसे विधिपूर्वक जांचता जाय। अधिक विभाग हो जाने पर

सहायक व्यवस्थापक या संचालक भी नियत करता जाय और उस के सुपुर्द उन विभागों को पूरी जिम्मेदारी करता जाय और अपनी जिम्मेदारी क्रमशः घटाता जाय। स्वयं उनके केवल यथोचित मुनाफ़े और उन्नति की ओर ही ध्यान देता रहे। सदा इस बात का भी ध्यान रक्खे कि कोई कर्मचारी अपने मुख्य कर्मचारी के विरुद्ध कोई कार्य न करे और न उसे उसकी शिकायत करने के लिये किसी रूप से उत्साहित किया जाय। सिवाय ऐसी अवस्थाओं के जब कि कोई विशेष हानि या धोखे की सम्भावना हो। प्रयत्न प्रायः यही होना चाहिये कि सब कर्मचारी आपस में एक दूसरे के व्यवहार से सन्तुष्ट रहें।

(३) स्वच्छता की आवश्यकता—

अच्छे प्रबन्ध और स्वच्छता का बहुत निकट सम्बन्ध है। यदि कहीं सफ़ाई ठीक से नहीं है तो स्पष्टतया समझ लेना चाहिये कि यहाँ का प्रबन्ध भी ठीक नहीं है। स्वच्छता से प्रबन्धक तथा कर्मचारी दोनों के चित्त प्रसन्न रहते है। साथ ही वहाँ आने वाले दर्शक अथवा ग्राहक भी उससे प्रभावित होकर प्रसन्न होते है। हर स्थान मे उचित सफ़ाई करके मुख्य मुख्य स्थानों पर सुन्दर चित्र, फूल, माला, अगरबत्ती आदि से भी उसकी सुन्दरता को बढ़ाकर उसे सुगन्धित कर देना चाहिये। ऐसा करने से वातावरण को उच्च प्रकार का बनाने मे बड़ी सहायता मिलती है, जिससे मनोवृत्ति पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है। छोटी छोटी चीजें इधर उधर पड़ी रहने से उनके कारण गन्दगी पैदा होती है। इसलिये हर समय इस बात का

ध्यान रखा जाय कि कोई चीज़ बेठिकाने न पड़ी रहे और दिन में कम से कम एक बार सब चीजें अपने अपने स्थान पर पहुँचा दी जाएँ और उनका काम समाप्त होते ही फिर वह अपने ठिकाने ही पर रखी जाएँ। औज़ार आदि जो काम में लाये जाते हों वह सदा साफ़ चमकते हुए और तेज हों और उन्हें केवल वही आदमी व्यवहार में लावें जिनका यह काम हो। मशीनों में जो तेल, ग्रीज़ आदि दिया जाता हो वह उत्तम प्रकार का ही हो, और उन्हें दिन के अन्त में काम समाप्त होने पर अच्छी तरह से साफ़ करके किसी चीज़ से ढककर छोड़ा जाय, ताकि उन पर गर्दा आदि पड़ कर उन्हें खराब न करे। दूसरे दिन भी उनसे काम लेने से पहले उनमें तेल आदि डालकर दुबारा सफ़ाई करके उन्हें काम में लाना चाहिये।

इसी प्रकार और माल को भी सदा झाड़ते पोंछते रहने का प्रबन्ध रहे और वह किसी प्रकार से गन्दा या मैला न होने पावे। बिकने वाला माल सदा ही बहुत स्वच्छ और भड़कीला रहे। इसका हर समय हरएक कर्मचारी अथवा मालिक को ध्यान रखना बहुत जरूरी है।

(४) स्टोक-रूम का प्रबन्ध—

स्टोक-रूम अर्थात गोदाम में हर एक आदमी के आते जाते रहने से वहाँ का प्रबन्ध और सफ़ाई कभी ठीक नहीं रह सकती क्यों कि जो भी अनुचित रूप से उसमें किसी चीज़ को रखने या निकालने जायगा वही उसमें कुछ न कुछ गड़बड़ी पैदा करके वहाँ से अपना काम किसी प्रकार से करके चला आयगा।

इसलिये यह आवश्यक है कि वहाँ के प्रबन्धक की आज्ञा बिना कोई दूसरा वहाँ हस्तक्षेप न करने पाए। यह जरूरी नहीं है कि सब प्रकार का फ़ालतू या स्टाक का माल स्टाक रूम मे ही रक्खा जाय। वह इधर उधर भी काम की सुविधा के अनुसार रक्खा जा सकता है अथवा कारखाने मे अधबनी दशा मे छोड़ा जा सकता है। ऐसी दशा मे यह देखते रहना चाहिये कि वह अधिक समय तक इधर उधर न पड़ा रहे, अथवा बहुत समय मे खर्च होने योग्य माल एक समय पर गोदाम से न निकाला जाय। यदि वह बेठिकाने रखा है तो उसे ठिकाने से रखवाने की किसी एक कर्मचारी की जिम्मेदारी होनी चाहिये। गोदाम मे जो भी रखा जाय वह उसके नियुक्त स्थान पर ही रखा जाय, और आसानी से चोरी होने वाला अथवा कीमती माल विशेष सुरक्षता के साथ रक्खा जाय। स्टाक रूम की बाहरी रक्षा का भी निरीक्षण करते रहना चाहिये। यह एक विचित्र बात है कि हम अपने रूपये की रक्षा तथा हिसाब का जितना ध्यान रखते है उतना उससे खरीदे हुये माल का नहीं रखते। यह शायद इसलिए कि उसकी चोरी का डर इतना अधिक नहीं है जितना कि रुपये की चोरी का, लेकिन साथ साथ इस बात का विचार भी तो जरूरी है कि यदि उचित ध्यान उसकी रक्षा की ओर नहीं दिया गया तो वह आप से आप खराब हो कर छीजता रहता है और रुपये की अपेक्षा उसकी चोरी आदि का ज्ञान कठिनता से हो पाता है या होता ही नहीं। इसके अतिरिक्त यदि माल अच्छे प्रकार से नहीं रखा गया हो तो वह बिगड़ कर

उससे जो चीज बनाई जाती है वह भी अच्छी नहीं बनती। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि माल जो लिया जाय चाहे वह बिक्री के लिये हो अथवा प्रयोग के लिये, उसे हर प्रकार से ठीक दशा में सुरक्षित रखा जाना चाहिये, और इस ओर कड़ी दृष्टि रखनी चाहिये। ऐसा करने का प्रभाव कर्मचारियों पर भी अच्छा पड़ता है और वह भी इस ओर सतर्क रहते हैं तथा चीजों को नुकसान होने से या बिगड़ने से बचाय रखने का ध्यान रखते हैं।

(५) बड़े व्यवसायों का प्रबन्ध--

बड़े बड़े चालू कारखानों इत्यादि का प्रबन्ध जितना अच्छा बाहर से उसके सम्बन्धित नक़शे आदि द्वारा जानकारी प्राप्त करके और कभी कभी वहाँ जाकर हो सकता है उतना अच्छा वहाँ हर समय उपस्थित रह कर नहीं हो सकता, क्योंकि ऐसा करने से बहुत सा समय उसका वहाँ की साधारण बातों या समस्याओं में लगकर नष्ट होता रहता है और बहुत सी त्रुटियाँ जो उसके दृष्टिगोचर होती हैं वह देखी अनदेखी होती रहती हैं और उनको ठीक कराने की ओर उसका ध्यान आकर्षित नहीं हो पाता। इसके विपरीति यदि मालिक अथवा मुख्य संचालक उसके सम्बन्ध में बाहर घूमकर उसके लिये काम लाता रहे, या उसमें यात्रा द्वारा अनुभव में आये हुये ज्ञान के अनुसार उन्नति करता रहे तो अधिक लाभ हो। नित्य वहाँ रह कर वह उसके हरएक बिभाग को अच्छी प्रकार नहीं देख पाता, या देखता भी है तो उसे उसकी त्रुटियाँ नजर आकर भी ओझल हो जाती हैं।

लेकिन कभी कभी उसका पूरी तौर पर निरीक्षण के लिये वहाँ जाने से और नित्य के कामों को वहाँ के स्थानीय संचालक द्वारा कराते रहने से बहुत सी कमी की बातें मुख्यतः दृष्टिगोचर होती रहती हैं और उनकी ओर पूरा ध्यान दिया जा सकता है। मालिक को निरीक्षण करते समय अपने अधिकार से उतना ही काम लेना चाहिये जितना कि कम से कम जरूरी हो। क्योंकि वहाँ का मुख्य संचालक उसका स्थानीय व्यवस्थापक होता है, जो भी काम करना हो अथवा आज्ञा देनी हो उसे उसी के द्वारा ऐसा करना चाहिये।

निरीक्षण सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने के लिए ५वें अध्याय का "२, मालिक की देख-भाल" भी देखिये, और इस विषय पर अन्य पुस्तकों का भी अध्ययन करके अपना ज्ञान बढ़ाइये।*

(६) मन की चंचलता और प्रबन्ध--

मन स्वभावतः बड़ा चंचल है, वह क्षण क्षण बदलता रहता है, कभी कुछ कभी कुछ विचार उमड़ते रहते हैं। इसलिये हरएक विषय को जहाँ तक हो सके पहले अच्छे प्रकार से सोच ले और

---

*नोट—हाल ही में छपी एक पुस्तक जिसका नाम Works Organisation, Management and Cost Control है, जिसको श्री Jamshed R. Batliboi, बम्बई निवासी ने लिखा है, इसको पढ़कर बड़े बड़े कारखानेदार बहुत कुछ लाभ उठा सकते हैं।

यदि वह कोई गूढ़ अथवा अत्यन्त कठिन या नाजुक विषय हो तो दूसरे अनुभवी और शुभ चिन्तक लोगों से भी उसके बारे में परामर्श कर ले। लेकिन जो बात उसके सम्बन्ध में निश्चय कर ले उसको कार्य रूप में परिणित करने में देर न करे और उस निश्चय पर दृढ़तापूर्वक कायम रहे; जल्दी उससे न डिगे। बार बार मत बदलने से काम या तो होता ही नहीं है या सफलता-पूर्वक नहीं हो पाता। मन की चंचलता के कारण अच्छे अच्छे मनसूबे जरा जरा सी अड़चन पड़ने से कार्य रूप में न आकर टलते जाते हैं और हो नहीं पाते। इस प्रकार लाभ के अच्छे अच्छे सुअवसर बिना उनसे लाभ उठाए यों ही निकल जाते हैं, अथवा नुकसान हो जाता है। इसलिए दृढ़तापूर्वक मन के ऊपर सदा शासन करते रहना चाहिये। यदि कोई कार्य करना हो और उसे बिना किसी खास कारण के टालने को जी चाहे, तो तत्काल उसका तर्क इस प्रकार करना चाहिये कि उसे अब ही अथवा आज ही क्यों न कर लिया जाय। यदि इस प्रकार के तर्क में भी उसे टाल देना ही ठीक समझा जाय तो उसे टाल दे, नहीं तो उसे तत्काल कर ही डालना चाहिये अथवा उसके सम्बन्धित अन्य व्यक्ति से करा डालना चाहिये, ऐसा करने से बिना विशेष कारण के कार्य स्थगित नहीं हो पाता और वह उचित समय पर हो जाता है। ऐसा करते रहने के थोड़े अभ्यास से ही अच्छी आदत पड़कर एक व्यवसाई का हरएक काम समय पर और सुचारु रूप से होने लगता है। हरएक जरूरी कार्य को करने का एक समय भी नियत किया जा सकता है, जिससे कि उसको

पूरा करने में बड़ी सहायता मिलती है। इसलिये जो भी ऐसा कार्य हो, जो तत्काल नहीं हो सकता हो तो उसको करने के लिये एक समय या तिथि निश्चय करके अपनी नोट-बुक अथवा डायरी में नोट कर ले और उस समय की प्रतीक्षा करता रहे। नियत समय उपस्थित होते ही या उससे भी पहले उसे जरूर कर डाले।

———

अध्याय १३

माल को खराब होने से बचाना

(१) कारण और उपाय--

यह एक बहुत साधारण विषय है, लेकिन प्रायः देखने में आता है कि इस ओर उचित ध्यान तभी दिया जाता है जब कि सचमुच में नुकसान होने लगता है। एक व्यापारी के लिये जिसे पैसे-पैसे के नफ़ा नुकसान की ओर ध्यान देते रहना चाहिये यह बड़ी विचित्र बात है। इस पुस्तक में इस विषय पर विस्तार पूर्वक विचार न करके केवल कुछ मुख्य बातों की ओर ही ध्यान आकर्षित किया जाता है।

वस्तुएँ प्रायः नीचे लिखे कारणों से खराब होती या छीजती हैं—

१—मौसिमी कारणों से जैसे धूप लग कर, सील खाकर या भीग कर अथवा गर्द-गुबार पड़ कर। इसलिये यदि माल को इन कारणों के प्रभाव से सुरक्षित रखा जाए तो फलतः वह बिगड़ने से बचे रहेंगे। और साथ साथ सफ़ाई भी रहेगी। बहुत सा माल जो बाहरी गर्द-गुबार अथवा मक्खियों आदि से खराब होता हो उसको बिक्री के समय के अतिरिक्त सदा ढके रहना चाहिये, अथवा उसे शीशे आदि के बर्तनों या आलमारियों में रखना चाहिये। यदि वह मौसिमी माल हो तो उसे बरसाती

हवा और कीटाणुओं से बचाने के लिये वर्षा ऋतु आरम्भ होने के पहले ही सुरक्षित स्थान में नैप्थलिन गोलियों या नीम की पत्तियों के सहित अथवा केवल कस कर बंधवा कर रख देना चाहिये और बरसात बाद ही वहाँ से निकालना चाहिये।

(२) चूहों द्वारा—

चूहे विशेषतः दूकान आदि में खाने की चीजों से हो जाते हैं इस लिये वहाँ खाना खाया या खिलाया ही न जाय, और यदि ऐसा करना ही पड़े तो कुछ बखेरा या वहाँ छोड़ा न जाय। लेकिन यदि दूकान ही खाने के पदार्थों को हो तो भी चीजों को इस प्रकार से रक्खा जाय कि वह चूहों के आक्रमण से बची रहें। किसी हालत में उन्हें बढ़ते देना उचित नहीं है। चूहों को रोकने व पकड़ने में चूहेदाना प्रायः निष्फल ही सिद्ध होती हैं क्योंकि वह उनमें तभी तक फँसते हैं जब तक कि उनमें उनकी दुर्गन्ध नहीं पैदा होती, उन्हें जहरीली गोलियों से मारना भी ठीक नहीं होता क्योंकि इसके कारण वह इधर उधर मर कर बड़ी दुर्गन्ध पैदा कर देते हैं और फिर मरे चूहे को तलाश करना एक समस्या हो जाती है। इसलिये उनसे बचने के लिये बिल्ली पालना ही सर्वोत्तम उपाय है।

(३) दीमक आदि से—

यह अधिकाँश सील के कारण पैदा होती है और बक्सों, आलमारियों आदि में लग कर उनमें रक्खे माल को चट कर जाती है। साथ साथ उनमें इसके कारण जङ्ग भी लग जाता है,

ऐसी दशा में मिट्टी का तेल और कोलतार अथवा मोटर आयल (motor oil) उनके आसपास के स्थानों पर पहले से लगा कर उनको सुरक्षित करना चाहिये और जहाँ तक हो सके उन्हें दीवार से हटाकर रखना चाहिये। वर्षा के बाद कुँवार के महीने में दीमक का जोर अधिक बढ़ जाता है इस लिये उनका इलाज पहले से ही कर लेना जरूरी है।

(४) कीड़े (लकड़ी के) अथवा घुन लगना—

या तो उपरोक्त रीति से कोलतार आदि लगा कर काठ की चीजों को बचाना चाहिये, अथवा उन पर Formaline छिड़क कर या लगा कर उन्हें सुरक्षित करना चाहिये। गोदाम में जहाँ माल रखा हो वहाँ कभी कभी D.D.T. की फुहार देते रहना चाहिये ताकि वहाँ के हानिकारक कीटाणु मरते रहें।

जाले आदि हर स्थान से सदा सफ़ा कराते रहना चाहिये, सफ़ेदी कराते रहने से भी सब प्रकार के हानिकारक कीटाणु मरते रहते हैं।

किसी कारण से भी खराब हुये माल को तुरन्त ही अन्य नये माल से हटा कर अलग रख देना चाहिए, और उसे जल्दी से जल्दी निकालने या प्रयोग में लाने की व्यवस्था करनी चाहिये, नहीं तो वह और अच्छे माल को भी बिगाड़ देगा।

———

अध्याय १४

व्यापार में शिथिलता आने पर क्या करना चाहिये

(१) कारणों की जाँच और उपाय--

एक व्यापारी को किसी दशा में भी हतोत्साह नहीं होना चाहिये। उसमें इतना धैर्य होना चाहिये कि यदि उसके व्यापार में किसी कारण कभी शिथिलता आ जावे अथवा हानि प्रतीत होने लगे तो उसे इसकी चिंता न कर उसके कारणों और उपायों पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिये, और सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।
मन ही को समझाइये, मन ही की परतीत॥

यदि हो सके तो किसी विशेषज्ञ द्वारा अपने व्यापार की जांच करानी चाहिये, तथा उससे विचार विनिमय कर उसके बतलाये सुझावों को काम में लाना चाहिये, लेकिन किसी दूसरे पर अपने व्यापार के सम्बन्ध में दूषित विचार पैदा करने वाली बात कभी भाषित नहीं होने देना चाहिये, क्योंकि इससे वातावरण बिगड़ कर सिवाय हानि के लाभ कुछ नहीं होता।

किसी कठिनाई को निवारण करने के लिये प्रथम उसकी

जानकारी होनी चाहिये, तथा उससे निपटने का ढंग मालूम होना चाहिये, साथ साथ निपटने की अभिलाषा और दृढ़ता भी होनी चाहिये। इस प्रकार उस पर विजय प्राप्त हो सकती है। हाँ, समय कम या अधिक लग सकता है जो कि अपने पराक्रम तथा ईश्वर की कृपा पर निर्भर है।

बहुत सी घटनायें तथा हानियाँ जीवन में ऐसी घटित होती रहती हैं कि वे समय पाकर आप से आप ठीक हो जाती हैं, तथा कुछ दिन बाद उनका वेग नाम मात्र का ही रह जाता है। इसलिये किसी कठिनाई के उपस्थित होने पर उसके सम्बन्ध में सोच नहीं करना चाहिये। ऐसा करने से वह चौगुनी प्रतीत होती है। सदा उसके कारणों और उपायों पर ही विचार करना चाहिये, और यदि उसमें अपना वश नहीं है तो सन्तोष कर उसे सहना चाहिये, और परमात्मा का भरोसा कर अच्छे समय की प्रतीक्षा करनी चाहिये। पर साथ साथ उसे निवारण करने के उपाय सोच कर उन्हें प्रयोग में लाते रहना चाहिये। यही मनुष्य का धर्म है, और इसी में उसका कल्याण है। परमात्मा के ऊपर भरोसा करने वाले और अपने धर्म पर चलने वाले तथा अपने कर्तव्य पर आरूढ़ रहने वाले के लिये कभी हताश होने की जरूरत नहीं है। उसे तो परमात्मा के भरोसे प्रसन्नता तथा दृढ़ता पूर्वक सदा अपना कर्तव्य ही पालन करते रहना चाहिये। असफलता तथा हानि इसी में है कि ऐसा करने में किसी कारण वह चूक जावे, क्योंकि अच्छे और बुरे दिन कर्मानुसार आते जाते रहते हैं उन पर किसी का वश नहीं चल सकता। जब

अच्छे दिन हों तो उन दिनों जितना भी हो सके धर्मानुकूल काम करे लेकिन विपरीत दिनों में केवल अपना कर्तव्य ही पालन करता जावे, कोई नया काम करने की चेष्टा न करे। ऐसे दिनों में नया काम करने से प्रायः कठिनाइयां अधिक उपस्थित होती हैं जिन पर कि विजय प्राप्त करना समस्या हो जाती है। फिर भी उन्नति के अवसर उपस्थित होने पर उनसे लाभ उठाने की चेष्टा करने में कभी नहीं चूकना चाहिये, क्योंकि केवल प्रारब्ध के आसरे निष्कर्म हो जाने से भी काम नहीं चलता। कठिनाइयों से लड़ते रहना और उन पर विजय प्राप्त करना ही मनुष्य का स्वाभाविक धर्म है। उनसे डर कर अकर्मण्य हो जाना कायरता है।

यदि व्यापार ठीक नहीं चल रहा है, तो उसके मालिक को चाहिये कि अपनी सामर्थ्य अनुसार बिक्री बढ़ाने के उपाय करे। उसका रुपया कहाँ कहाँ रुका है उसे निकालने का यत्न करे। यदि कोई माल ऐसा जमा हो गया है जो निकल नहीं रहा है अथवा आवश्यकता से अधिक है, तो उसे निकालने के विशेष उपाय करे और उनकी एक सूची बनाकर सदा अपने सामने रखे, ताकि उस पर विशेष ध्यान दिया जा सके। यदि कहीं माल खराब हो रहा है अथवा सुरक्षित रूप से नहीं रखा है तो उसका तत्काल उचित प्रबन्ध करे। अपने विक्रेता अथवा प्रतिनिधियों को अधिक से अधिक बेचने के लिये उत्साहित करे, पर उन पर यह कभी न भाषित होने देवे कि व्यापार में किसी प्रकार से शिथिलता आ जाने के कारण उनसे ऐसा करने

के लिये कहा जा रहा है, परन्तु स्वयं को अपने व्यापार का एक विशेषज्ञ मानकर उसमें काम करना चाहिये।

किसी व्यापार की गिरती हुई अवस्था का ज्ञान होना ही उसको डूबने से बचाने का पहला उपाय है। सब प्रकार के बचाने के उपायों को तत्काल काम में लाने से ही वह बचाया जा सकता है, न कि उसके प्रति केवल अच्छी भावना ही धारण किये रहने से जो कि अधिकाँश धोखा देनेवाली सिद्ध होती हैं। यह निश्चय है कि यथा समय किसी रोज़गार की मन्द अवस्था का ज्ञान होने से और उसको रोकने के लिये उपाय करने से ही वह बचाया जा सकता है। अधिक देर हो जाने से उसकी दशा इस हद तक बिगड़ सकती है कि फिर उसका संभालना असम्भव हो जाता है, क्योंकि हर चीज़ के गिरने का ढाल बहुत तेज़ होता है, उस पर पड़ते ही फिर उसका बचाना कठिन हो जाता है। किसी व्यापार की गिरती हुई अवस्था में यदि पुराना ऋण का भार हुआ तो वह असह्य हो जाता है, और फिर उस व्यापार के गिरने में देर नहीं लगती। ऐसी दशा में ऋणदाता अपना ऋण वसूल करने में तत्परता प्रकट करने लगते हैं और देनदार अथवा अन्य लोग रुपये से सहायता करने में अपनी असमर्थता प्रकट कर देते हैं। ऐसी दयनीय अवस्था उपस्थित होने से पहले ही एक समझदार व्यापारी को अपने व्यापार को बचाने की यथा शक्ति चेष्टा और उपाय करना चाहिये। ऐसे समय में किसी प्रकार का नया माल जो पहले से न बिकता हो लेकर रुपया और न फंसा देना चाहिये। यत्न यह

होना चाहिये कि चालू माल अधिक बिके और उससे ग्राहक सन्तुष्ट हों, और वह केवल नकद दाम में बिके। सदा इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि ग्राहक अपनी आवश्यकता के अनुसार ही चीज़ लेता है, यदि वह अच्छी और सस्ती मिलती है तो उसे आवश्यकता से कुछ अधिक भी ले लेता है। परन्तु आवश्यकता या इच्छा न होने पर केवल दाम कम कर देने से कोई चीज़ अधिक नहीं बिक सकती। इसलिये अधिक बेचने के लिये उसकी मांग ही अधिक पैदा करने से काम चलता है, जो कि विविध प्रकार से विज्ञापन द्वारा या परिस्थिति अनुसार कोई नयी योजना बनाकर किया जा सकता है। विज्ञापन के साथ साथ अपने विक्रेताओं मे उत्साह भी पैदा किया जाना चाहिये, यह तभी हो सकता है जब कि व्यवस्थापक अथवा मालिक में वह पहले पैदा हो। नया उत्साह पैदा करने के लिये कोई नयी योजना बनाई जानी चाहिये ताकि उसके कारण वह सब में पैदा हो सके। हर एक व्यापार की अवस्थानुसार ही नयी योजना बनाई जानी चाहिये, पर इसमे देर नहीं करना चाहिये।

कठिन समय मे हताश होने की आवश्यकता कभी नहीं होती, इससे काम और बिगड़ता है। इसके अतिरिक्त यदि किसी समय मे किसी बात की विशेष कठिनाई होती है तो उसी समय में अन्य बातों की सुविधा अथवा विशेष लाभ के साधन भी पैदा हो जाते हैं। केवल कठिनाइयों के बारे मे सोचते रहकर उसी समय मे होने वाले लाभ के सुअवसरों पर विचार न करना बड़ी भूल की बात है। जैसे वर्तमान काल में अतिशय महँगी

होने के कारण बेकारी बढ़ गई है, ऐसे समय में काम करने वाले अधिक मिलते हैं उन्हें लगाकर कोई नया काम सुविधा पूर्वक और सस्ते दामों में कराया जा सकता है, या कोई चीज निकाल कर सस्ती बेची जा सकती है, अथवा अपने कारखाने या दूकान आदि में उन्नति की जा सकती है। उसमें नया काम कराया जा सकता है, या कोई दूसरा लाभ का काम शुरू किया जा सकता है, जैसे नये मकान आदि बनवा कर उन्हें बेचने या किराये पर उठाने का, यह इस प्रकार का हो कि बाद में केवल उसकी देखभाल से ही लाभ होता रहे और विशेष ध्यान अपने मुख्य व्यापार ही में लगाया जा सके।

• हर हालत में दूकान में विशेषतया वे ही चीजें या माल होना चाहिये जो कि अधिक चलता हो और उसी की ओर ध्यान भी विशेष देना चाहिये। ऐसी चीजें जो चलती न हों उनके ऊपर विज्ञापन में भी रुपया खर्च करके बेकार घाटा होता है। न चलने वाली वस्तुओं को तो वहीं बिकने के लिये भेज देना चाहिये जहाँ कि वे आसानी से बिक सकें, अथवा जहाँ से वे ली गई हों वहीं वापस कर देना चाहिये, चाहे ऐसा करने में कुछ घाटा ही हो। एक दूसरा उपाय उनको निकालने का यह भी है कि दूसरी आसानी से बिकने वाली चीजों से उन्हें जुटाकर बेचा जावे। ऐसा उसी दशा में किया जा सकता है जब कि उसी मेल की दूसरी चलने वाली चीज भी हो जिससे वह जुटाई जा सके, और दोनों को मिलाकर कुछ दाम में भी किफ़ायत की जावे।

प्रत्येक रोजगार की सफलता उसमें बिक्री होने पर निर्भर

होती है। यदि उसमें पूँजी अधिक नहीं लगी है तो उसके संचालक को चाहिये कि उसकी लौट फेर अधिक बार करता रहे। जितनी अधिक बार वह ऐसा कर सकेगा उतनी ही उसे सफलता मिलेगी। ऐसा होने पर पूंजी की कमी उसके मुनाफ़े को कम से कम प्रभावित करेगी। ऐसा करने पर ही उसकी स्थायी उन्नति निर्भर है, क्योंकि अधिक मुनाफ़ा होने पर ही वह अपनी पूंजी बढ़ाकर अपना काम भी बढ़ा सकता हैं, और कर्ज़ का बोझ कम कर सकता है। लेकिन साथ साथ उसे अपने निजी खर्चे भी कम रखने चाहियें और दूकान के खर्चों आदि में बहुत किफ़ायत से काम लेना चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करेगा और अपनी पूंजी को बजाय बढ़ाने के कम कर देगा तो फिर उसके व्यापार की वही दशा होगी जो उस मरीज़ की होती है जिसकी कि जीवन शक्ति इस हद तक कम हो गई है कि दवाओं का फिर उस पर कोई असर नहीं हो पाता।

अधिक मुनाफ़ा और स्थाई उन्नति माल के अधिक बिकने ही पर निर्भर हैं, और अधिक बिक्री विशेषतः दूकान के संचालक की योग्यता पर निर्भर होती है। योग्य व्यापारी अधिक से अधिक बेचकर अपनी पूँजी दिन दिन बढ़ाता जाता है, और अपने व्यापार मे सफलता प्राप्त करता रहता है। इसके विपरीत बिना समझे कार्य करने वाला व्यापारी उसे दिन दिन कम करके एक दिन अपने रोज़गार से भी हाथ धो बैठता है और अन्य लोगों के लिये बुरा उदाहरण बनता है, तथा अपने रोज़गार में लगे दूसरे लोगों का भी धन नष्ट करके उनकी भी बरबादी या हानि

का कारण बनता है।

वैसे तो हर समय ही एक व्यापारी को सचेत रहना चाहिये और देखते रहना चाहिये कि कौन सी ऐसी चीजें उसके व्यापार में हैं जिनका कि लौट फेर नहीं हो रहा है। लेकिन कठिनाई के समय पर तो उसे इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। यदि उसकी पूँजी किसी ऐसी चीज़ में फँसी हुई है जिसका अब काम हो गया है और उसे बेचकर रुपये की शकल में परिवर्तित किया जा सकता है, तो ऐसा करने में उसे देर नहीं करनी चाहिये, ताकि इस प्रकार से प्राप्त की हुई नक़दी अन्य आवश्यकीय कार्य या माल में लगाकर उससे लाभ उठाया जा सके। इसी प्रकार यदि कोई मशीनरी उसके यहाँ ऐसी हो जो कि फालतू हो गई हो, अथवा काम अच्छा न करती या कम किफ़ायत से करती हो तो उसे तुरन्त अलग कर उसकी बजाय अधिक लाभ वाली मशीनरी लगानी चाहिये। अपनी लेने वाली रकमों को सदा ध्यान में रखना चाहिये, यह देखते रहना चाहिये कि वह समय पर वसूल हो जाती हैं या नहीं। यदि नहीं तो उसके उपाय बराबर करते रहना चाहिये, वरना उसका वसूल होना अधिक से अधिक कठिन होता जावेगा। किसी ढलते हुये व्यापार को संभालने के लिये इस प्रकार से अपनी फँसी हुई रकमों को निकाल कर चलते हुये काम या माल में लगाना अत्यन्त आवश्यक है।

(२) व्यापार को रसातल की ओर ढकेलने वाले कारण—

अब हम अपने पाठकों का ध्यान उन कारणों की ओर

आकर्षित करना चाहते हैं जिनसे व्यापार रसातल की ओर न जाता हो तो चला जावे। वे यह हैं—

१—ग्राहकों के प्रति उदासीनता अथवा उचित ध्यान न देने का बर्ताव करना।

२—पुरानी रूढ़ियों पर कायम रहकर बदलते हुए समय के अनुसार कार्यवाही न करना।

३—अपने मुख्य रोजगार की ओर ध्यान न देकर दूसरा ऐसा नया काम करना जिसमें रुपया फंस जावे।

४—अनुचित किफ़ायत करना—जैसे विज्ञापन का कार्य बन्द कर देना, स्टेशनरी घटिया बर्तना, पुराने अच्छे नौकरों को अलग कर देना इत्यादि।

५—अच्छे माल के भी दाम बाजार भाव से कम करके बेचना, केवल इसलिये कि वह जल्दी बिक जावे।

६—घाटे के डर से व्यापार में अधिक रुपया न लगाना, और जो लगा है उसको भी उतारने की चेष्टा करना।

७—कर्ज की रकम अथवा उस पर ब्याज बढ़ाते जाना, अथवा अपनी लेने वाली रकमों को बढ़ा लेना।

८—अपने व्यवसाय को (विशेषतः दूकान को) अधिकांश कर्मचारियों पर छोड़ देना, और उनके ऊपर निर्भर रहना।

९—बढ़ती हुई परिस्थिति के अनुसार उपाय न करना।

१०—उत्साह हीन होना, अथवा अपने व्यापार की ओर ध्यान कम देना या उसके प्रति उदासीनता बर्तना।

११—आमदनी से खर्चों को बढ़ाये रखना।

उपरोक्त बातों से कोई रोजगार न बैठता हो तो बैठ जावेगा। इसलिये इनसे एक समझदार व्यापारी को सचेत रहना चाहिये। यदि रोजगार किसी कारण से ठीक न चल रहा हो तो उसके प्रति उदासीनता का व्यवहार न बर्तकर उसमें नये उत्साह तथा नये पुरुषार्थ से लगकर दृढ़तापूर्वक काम करना चाहिये और यह देखना चाहिये कि उसके मन्द पड़ जाने के क्या कारण हैं और वे किस प्रकार और किस हद तक दूर किये जा सकते हैं। यदि वे ऐसे कारण हैं जिनके ऊपर अपना कोई वश नहीं है, तो विचारना चाहिये कि ऐसी परिस्थिति कब तक रहेगी और उसका क्या उपाय है। यदि वे उपाय तत्काल काम में नहीं लाये जा सकते तो उन्हें उचित समय पर काम में लाने की प्रतीक्षा करनी चाहिये और पहले से उनके अनुरूप काम करने की चेष्टा करनी चाहिये। यदि दूकान आदि अच्छे मौके पर न हो तो अच्छे स्थान पर हटाने का प्रबन्ध करना चाहिये, लेकिन यदि वह ऐसा स्थान हो जिसमें जाने से सफलता तत्काल मिलने में सन्देह हो तो जहाँ तक हो दोनों स्थानों को कुछ दिन चालू रखना चाहिये, यदि हो सके तो दूसरे स्थान पर उसी दशा में जाना चाहिये जब कि वहाँ पर जाकर कुछ दिन काम कम चलने के कारण घाटा सहने या अधिक खर्च उठाने की सामर्थ्य हो। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि समय सदा एक सा नहीं रहता, कभी कभी आँधी या तूफ़ान का भी मुकाबला करना पड़ता है; इसलिये उससे घबड़ा कर कोई अनुचित कार्य नहीं कर डालना चाहिये। ऐसे समय धीरज से काम लेकर अच्छे

समय की प्रतीक्षा करनी चाहिये। कठिन समय में यही सोचना चाहिये कि उससे किस प्रकार लाभ उठाया जा सकता है। कठिन से कठिन समय या परिस्थिति उपस्थित होने पर भी व्यापारी को हिम्मत नहीं हारना चाहिये। उसे सदा परमात्मा पर भरोसा रखना चाहिये। यदि वह अपना कर्तव्य पालन करता गया, और पराक्रम तथा स्थिरता से काम करता गया तो उसे उसकी सहायता अवश्य मिलेगी। मनुष्य के जीवन को कभी कभी एक तंग या अँधेरे रास्ते से भी गुजरना होता है, यह तंग अथवा अँधेरा रास्ता प्रायः लम्बा नहीं होता पर उसे पार करते ही उसे फिर प्रकाशमय और खुला रास्ता अपने जीवन को सुखमय बनाने का मिलता है, जो कि बीते हुये रास्ते से अधिक सुखमय होता है। इसलिये कठिन से कठिन समस्या अथवा समय उपस्थित होने पर भी एक व्यापारी को सदा उसे पार कर आगामी अच्छी परिस्थिति की प्रतीक्षा करनी चाहिये। असफलता का सबसे बड़ा कारण उदासीनता अथवा उत्साह हीनता होती है, इन पर यदि मनुष्य विजय प्राप्त करता रहे तो कोई शक्ति ऐसी नहीं है जो उसे गिरा सके। इसलिये परिस्थिति के अनुसार उसे सदा उत्साह पूर्वक यत्न करते रहना चाहिये, और उन्नति की ओर ध्यान रखना चाहिये, तथा उसके उपाय सोचते तथा करते रहना चाहिये। कोई कारण नहीं है कि एक पुरुषार्थी और उत्साह पूर्ण मनुष्य एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी चढ़ता चला न जाय, प्रश्न केवल उसके यथाशक्ति यत्नपूर्वक लगे रहने का है। योग्यता अथवा परिस्थिति अनुसार देर हो सकती है लेकिन अपने

लक्ष्य में सफलता प्राप्त न हो यह नहीं हो सकता। दृढ़तापूर्वक लगे रहने से बड़े बड़े कठिन कार्य हो ही जाते हैं, प्रश्न केवल यत्नपूर्वक उनमें लगे रहने का है।

(३) विज्ञापन की आवश्यकता—

व्यापार में कितनी ही शिथिलता क्यों न आ गई हो, उसके चलाने के उपायों को, मुख्यतः विज्ञापन के कार्य को, जारी रखना बहुत जरूरी है, इसका असर हुये बिना नहीं रह सकता। रोजगार जैसा बड़ा या छोटा हो उसी के अनुसार उसका विज्ञापन करते रहना चाहिये। इसके करने के कई तरीके हैं जैसा कि अध्याय ४ में वर्णन किया गया है। उसमें वर्णित उपायों को अपनी शक्ति और सुविधा के अनुसार काम में लाते रहना चाहिये। इसमें किसी प्रकार की असावधानी नहीं करनी चाहिये। यदि और कुछ नहीं तो कम से कम हैन्डबिल अथवा सूचीपत्र तो निकालते ही रहना चाहिये, और अपने कार्य स्थान को सदा भड़कीला और आकर्षक बनाये रखना चाहिये। एक छोटे दूकानदार को तो कोई न कोई ऐसी रचना जरूर रचते रहना चाहिये जिससे जनता उसकी दूकान से आकर्षित होती रहे और इस प्रकार ग्राहकों की संख्या बढ़ती जावे। ऐसा करने में परिश्रम अधिक करना पड़ता है, लेकिन इसका लाभ भी अधिक और स्थायी होता है।

अधिकांश व्यापारी अपने बाहरी शो-केसों की ओर पूरा ध्यान नहीं देते, या कहना चाहिये कि ये उनके लिये एक साधारण चीज़ हो जाती हैं। उनकी ओर आकर्षित होने वाले लोगों

का ध्यान उसमें सजी चीजों की ओर तभी विशेष रूप से जा सकता है जब कि उनकी विशेष रूप से सफाई होती रहे और उनके अन्दर दर्शाये हुये माल को आकर्षक रूप से उनमें सजाते और कभी कभी बदलते रहा जावे। राह चलते लोगों को वह दूकान का सबसे अधिक प्रभावित करने वाला स्थान है। उसमें रखी हुई चीजें ऐसी होनी चाहिये जिससे वे विशेष रूप से प्रभावित होकर दूकान के अन्दर आयें और उनके बारे में पूछताछ कर उनका तथा अन्य बिकने वाली चीजों का सौदा करें।

(४) चलने वाली अथवा बहुधा प्रयोग में आनेवाली चीजें—

कभी कभी देखने मे आता है कि दूकानदार चलने वाली चीजों को तब तक मँगवाने की चेष्टा नहीं करता जब तक कि उनका स्टाक बिल्कुल न खतम हो जावे अथवा उनके बिना काम रुक न जावे। यह आदत बहुत हानिकारक है। ऐसी चीजों को थोड़ा थोड़ा करके मँगवाने से क म बेकार का बढ़ता है और हानि होती रहती है। उनके न रहने से ग्राहक लौटने लगते हैं और अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिये दूसरी दूकान से उन्हें लेकर फिर वहीं के ग्राहक बन जाते है। इसलिये यह बहुत जरूरी है कि जो चीजे चलने या अधिक प्रयोग में आनेवाली हों उन्हें जहाँ तक बन पड़े अधिक मात्रा में ही मँगवाना चाहिये और उनका स्टाक कभी समाप्त नहीं होने देना चाहिये। अधिक मात्रा मे लेने से वे सस्ती भी मिलेगी तथा उनके ग्राहकों का सिलसिला जारी रहेगा। ऐसी चीजों के भावों मे गिराव कम होते हैं। साथ ही बाजार मे कभी कभी न मिलने के कारण

उनके भाव बहुत ऊँचे चढ़ जाते हैं जिससे कि विशेष लाभ हो सकता है।

(५) बनवाई हुई चीज़ों की लागत का ज्ञान—

हरएक व्यापारी जो अपने कारखाने आदि में बने माल की बिक्री करता है उसे उसकी ठीक ठीक लागत का ज्ञान होते रहना बहुत जरूरी है। उसके बनवाने में लगे हुये माल तथा मजदूरी के खर्चों के अतिरिक्त जो अन्य ऊपरी खर्चे उसके बनवाने में पड़ते हैं उनकी ठीक ठीक जानकारी न होने से धोखा हो जाता है। इसलिये उसे चाहिये कि वह ऊपरी खर्चों को विधि पूर्वक मालूम करता रहे और उनको माल की पैदावार के विप्रति न होने दे। यदि उसे यह ज्ञात हो कि किसी चीज़ के बनवाने में खर्च अधिक होने के कारण घाटा हो रहा है और उसका मूल्य बढ़ाया नहीं जा सकता तो उसे वह चीज़ बनवाना बन्द कर देना चाहिये, अथवा कम बनाना चाहिये जिससे कि उसके बनवाने में घाटा न हो। वही चीजें अधिक बनवानी चाहियें जो कि अधिक बिकती हों और जिनमें लाभ भी उचित रूप से होता है। केवल लगे हुए माल और मज़दूरी पर ही किसी चीज़ का दाम निश्चय नहीं कर देना चाहिये, उसके बनाने में कितना माल खराब होता है या टूटता-फूटता रहता है या कितना समय लगता है अथवा उसका कितना भाग सस्ते भाव में बेचना पड़ता है, यह सब बराबर देखते रहना चाहिये। यह भी देखना चाहिये कि उस पर अन्य ऊपरी खर्चे, जैसे बनवाने वाले कर्मचारियों का वेतन, पैकिंग, भेजने के खर्चे, एजन्ट का कमीशन आदि जोड़कर

उसमें कुल कितना लाभ या हानि हो रही है। ऐसा किये बिना कोई माल बनवाकर बेचते रहने से कभी कभी बड़ी हानि का डर रहता है जो कि वर्ष के अन्त में पता लगता है। फिर वही कहावत चरितार्थ होगी कि "अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत"। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि वही माल अधिक बने जो अधिक बिकता हो और उसी की ओर अधिक ध्यान दिया जाय।

(६) फुर्सत का समय—

एक व्यापारी को अपने काम से कभी कभी छुट्टी भी लेते रहना चाहिये और उसे अपनी उन्नति, मनोरंजन या समाज सेवा में लगाते रहना चाहिये। व्यापार के मध्य में यदि उसे किसी समय अवकाश मिले तो उसे बेकार की गपशप या किस्से कहानी की किताबें पढ़कर नष्ट नहीं करना चाहिये। ऐसे अवसर को उसे अच्छी अच्छी व्यापार सम्बन्धी पुस्तकों को पढ़ने अथवा अपने व्यापार में उन्नति करने के ढंग सोचने में व्यतीत करना चाहिये। इस प्रकार थोड़ा थोड़ा भी ज्ञान प्राप्त करके समय मिलने पर उसका उपयोग करने से बड़ा लाभ हो सकता है, या कोई नया काम करके व्यापार बढ़ाया जा सकता है। हरएक काम के करने की योग्यता प्राप्त करके ही उसे करने में सुविधा तथा लाभ होता है। इसलिये फुर्सत के समय को अपनी योग्यता बढ़ाने और व्यापार की उन्नति में ही लगाना चाहिये। ऐसा न करके अधिकाँश नवयुवक अपना बहुमूल्य समय नष्ट कर देते हैं और फिर सारी उम्र पछताते रहते हैं, क्योंकि बाद में

अधिक उम्र हो जाने के कारण, तथा काम सीखने का उत्साह और साधन दोनों कम और कठिन हो जाने के कारण वह अपने बन्धनों में आप ही इतना जकड़ जाता है कि कोई दूसरा उन्नति का काम करना उसके लिये असम्भव हो जाता है। इसलिये व्यापार में लगे सभी व्यक्तियों को, विशेषतः नवयुवकों को, अपने फुर्सत के समय को बिना उससे लाभ उठाये खोना नहीं चाहिये।

(७) परिवर्तन और नवीनता की आवश्यकता—

दूकान हो अथवा कारखाना, वह एक जीवित प्राणी की भाँति उन्नति या अवनति करता रहता है। यदि उसमें किसी कारण से शिथिलता आ गई है तो वह उसके लिये अच्छी बात नहीं। उसमें कुछ न कुछ परिवर्तन होते रहना ही उसकी जीवन-शक्ति में उन्नति करते रहने की एक बड़ी दलील है। यदि उसमें शिथिलता आ गई है तो निश्चय है कि वह अवनति की ओर जावेगा। इसलिये हर एक व्यापारी को अपने व्यवसाय में कुछ न कुछ उन्नति या उसके अनुकूल परिवर्तन बराबर करते रहना चाहिये। ऐसा करने के लिये उसे ग्राहकों या अन्य शुभचिंतकों द्वारा अथवा उपयोगी पुस्तकों या समाचार पत्रों द्वारा सुझाव मिलते रहते हैं। उन पर विचार कर उन्हें कार्यान्वित करना चाहिये। संसार परिवर्तनशील है, उसमें स्थिरता नहीं रह सकती। हर एक चीज घटती या बढ़ती रहती है। समय समय पर वैज्ञानिक ज्ञान के कारण नई नई चीजें निर्माण होती रहती हैं और उनके अनुकूल माँगें भी पैदा होती रहती हैं, जिससे कि उनके उपभोक्ताओं की आदतों पर असर पड़ कर वे, बदलती रहती हैं। उनसे अनु-

भिज्ञ रहना या उनके अनुकूल न चलना एक व्यापारी के लिये बड़े खतरे की बात है। इसलिये समय अनुसार रोजगार में परिवर्तन करते रहने से लाभ उठाना उन्नति का सबसे अच्छा साधन है। एक कारखानेदार को भी इसी प्रकार उपभोक्ताओं को समयानुसार बदलती हुई आदतों या फैशन का विचार करते हुये अपने यहाँ बनने वाली चीजों में परिवर्तन या नयापन पैदा करते रहना चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो उसके अच्छे दिन समाप्त होकर बुरे दिन आते देर नहीं लगेगी, क्योंकि सदा नई नई और भाँति भाँति की चीजों का आविष्कार होता रहता है। आजकल तरह तरह की नकली चीजें (जैसे नकली ऊन, नकली रुई, नकली रेशम आदि) पैदा होकर असली माल वालों के लिये समस्या पैदा कर रहे हैं, फलों की रक्षा के लिये ठंडे-घर (cold storage) बनकर महीनों बाद भी हम बेफसल के फल ताजे रूप में खा सकते हैं। विज्ञान द्वारा सुरक्षित किये हुये फल व तरकारियाँ वर्षों बाद भी बिना उनकी पोषण शक्ति या स्वाद बिगड़े प्रयोग में ला सकते हैं। इसी प्रकार विज्ञान के चमत्कार के साथ साथ फ़ैशन और रिवाजों तथा आदतों में भी परिवर्तन होता जाता है, फिर कैसे हो सकता है कि रूढ़वादियों की प्रणाली में पड़कर एक व्यापारी अपनी उन्नति कर सके। यदि वह बदलते हुये समय के अनुसार नहीं चलेगा और उसकी ओर उचित ध्यान नहीं देगा तो कैसे सम्भव है कि उसकी बिक्री न घट जावे। ऐसा करने से वर्ष के अन्त मे जब वार्षिक चिट्ठा बनता है तब दूकानदार की आँखें खुलती हैं और उसे ज्ञान होता

है कि उसके हर प्रकार से अपने व्यापार में किफ़ायत बर्तते हुए भी उचित लाभ नहीं हुआ या घाटा हुआ। यदि इस चिट्ठे को देखकर भी वह अपनी बिक्री बढ़ाने या अपने रोज़गार की गिरती दशा को सुधारने की ओर ध्यान नहीं देता या उसमें परिवर्तन नहीं करता और टालता जाता है तो उससे बढ़कर आपसे आप गड्ढे में गिरने वाला और कौन हो सकता है। सफलता अधिकाँश कुसमय उपस्थित होने पर या अपना घाटा मालूम होने पर दुगने उत्साह से काम करने वालों को प्राप्त होती है, न कि उनसे उत्साहहीन होने वालों को। समय प्रतिकूल है, महँगी बहुत है, ऐसी दलीलों से मन को समझाने से काम नहीं चलता। हर समय में व्यापारी बनते और बिगड़ते रहते हैं। तुम बिगड़ने वाले व्यापारियों का अनुसरण करके या उनका ज़िक्र करके अपने आपको भी उनकी श्रेणी में क्यों सम्मिलित करते हो। जैसा तुम अपने आपको बनाओगे वैसे ही बनते जाओगे। वार्षिक चिट्ठे से एक व्यापारी को मालूम होना चाहिये कि उसका व्यापार किस ओर जा रहा है। यदि उसको उचित लाभ नहीं हो रहा है अथवा घाटा हो रहा है तो उसके क्या क्या कारण हैं। किन किन मदों में खर्च अनुचित हो रहा है, बिक्री क्यों गिर गई है, इत्यादि ऐसे अवसरों पर उसे विचारना चाहिये कि कौन कौन से खर्चे व्यापार को हानि पहुँचाये बिना कम किये जा सकते हैं। जिस चीज़ में मुनाफ़ा अधिक होता हो उसे ही अधिक बनाया या बेचा जाना चाहिये, या क्या माल बनवाया जावे अथवा बेचा जावे जिससे उसकी

बिक्री बढ़े। जो माल नहीं चल रहा है और उसमें लगे रुपये का लौट फेर नहीं हो रहा है उसको किस प्रकार निकाला जावे, इत्यादि, इत्यादि। जो कुछ निश्चय किया जावे उसके अनुसार कार्य करने की दृढ़ता पूर्वक कोशिश करनी चाहिये और उसे कार्य रूप में परिणित करने में देर नहीं करना चाहिये। अपने कर्मचारियों को भी उसके अनुसार व्यवहार करने की कार्यवाही करनी चाहिये। परिवर्तन करने अथवा काम में लाने योग्य बातों की एक सूची अथवा विशेष याददाश्त बनाकर उनके अनुसार व्यवहार करना चाहिये।

(८) देर करने या टालते रहने से हानि--

व्यापार में उन्नति अथवा लाभ के उपायों को कार्यरूप में लाने में देर नहीं करनी चाहिये। देर करने से मामला अधिक बिगड़ता जाता है, और कभी कभी हाथ से बाहर होकर भीषण रूप धारण कर लेता है। यदि कहीं नुकसान हो रहा हो तो उसे तत्क्षण रोकने के उपाय सोचने व करने चाहियें। टालते रहने से वह बढ़ता ही जाता है और लाभ कुछ नहीं होता। यही हाल घटी बिक्री का भी है, यदि वह किसी कारण असाधारण रूप से घटना शुरू होने लगेगी तो फिर उसको बढ़ाना कठिन से कठिन होता जावेगा। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि हर मास के बिक्री धन को पिछले वर्षों के उसी मास के बिक्री धन से मिलाते जाना चाहिये। यदि कमी मालूम होती हो तो तत्काल उसके कारण मालूम करके उसको बढ़ाने का प्रबन्ध करना चाहिये, क्योंकि

स्वभावतः वह बढ़ना ही चाहिये थी। हो सकता है कि ऐसा करना आसान न हो, लेकिन सोचो तो सही कि यदि आसान होता तो उस ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता ही क्यों पैदा होती। एक उत्साही आदमी के लिये कठिन समस्या का मुकाबला करना ही उसकी योग्यता और पराक्रम की जाँच का अवसर उपस्थित करता है। यदि वह ऐसे अवसर पर ढिलाई से काम लेता है या टालता रहता है तो उसके समान मूर्ख और कौन होगा, वह कभी एक अच्छा व्यापारी नहीं बन सकता। हर एक समस्या या कठिन अवसर उपस्थित होते ही उसका तुरन्त प्रबन्ध करना उन्नति के लिये परम आवश्यक है। ऐसे अवसर पर अच्छी प्रकार सोचकर अपनी गाड़ी को आगे बढ़ाने या उसकी मन्दगति को उत्तेजित करने का कार्य करना अनिवार्य है। निरुत्साही अथवा आलसी बनकर कार्य करने से काम नहीं चलता। विधिपूर्वक यत्न और परिश्रम करने से बड़े बड़े काम होकर ही रहते हैं। लेकिन केवल सोचते रहने से अथवा अनमने ढंग से करने से कोई काम ठीक नहीं होता।

(९) देखी अनदेखी करते रहना—

बहुत सी बातें एक दूकानदार या कारखानेदार अथवा उसका संचालक इस दृष्टि से देखता रहता है कि देखकर भी वह उनकी ओर यथेष्ट ध्यान नहीं देता, यहाँ तक कि नुकसान होने लगता है। उन्हें प्रतिदिन देखते रहने से वह उनकी ओर से कुछ ऐसा असावधान सा हो जाता है कि उनके कारण नुकसान होते रहने पर भी वह कुछ उपाय नहीं सोचता या करता जब तक कि

उसके कारण अधिक नुकसान न हो जावे, जैसे (१) बिजली के तार बहुत पुराने हो गये हैं उनमें लीकेज (छीजन) हो रहा है, उसका मासिक बिल असाधारण रूप से बढ़ गया है, लेकिन उसकी जाँच कराके उसे ठीक करा देने की कार्य-वाही नहीं की जाती, और हर मास बिजली का बेजा खर्चा दूकान पर पड़ता जाता है। कभी कभी तो वह लीकेज इतना बढ़ जाता है कि बिजली का मासिक बिल अधाधुंध बढ़ जाता है तब दूकानदार की आँखें खुलती हैं परन्तु उस समय तक उसकी सैकड़ों की हानि हो चुकती है। (२) पानी का पाइप चूता रहता है, लेकिन उसकी मरम्मत की फ़िक्र तभी की जाती है जब कि उसके कारण सील बढ़कर सैकड़ों का माल खराब हो जाता है, अथवा मच्छर आदि बढ़कर वहाँ रहना मुश्किल कर देते हैं या सील के कारण दीवारें या फ़र्श कमजोर हो कर टूट जाते हैं। (३) चूहे दूकान में बढ़कर इस कदर नुकसान करने लगते हैं कि वह असह्य हो जाता है। (४) रक्खे रक्खे माल इस कदर पुराना हो जाता है कि फिर वह बिकने योग्य नहीं रह जाता और जो दाम पहले मिल सकते थे वह भी नहीं मिल पाते। इस बीच में वह बहुत कुछ आप से आप कम भी हो जाता है। (५) कर्मचारी कभी कभी इतनी लापरवाही करने लगते हैं कि दूकान अथवा कारखाना नियत समय पर न खुलता है न बन्द होता है, जिसके कारण बदइन्तजामी बढ़ जाती है और घाटा होने लगता है। (६) शनैः शनैः हिसाब लिखना पिछड़ जाता है और कुछ ही समय बाद फिर उसका हाथ आना कठिन ही नहीं वरन्

असम्भव हो जाता है और फिर फर्जी आँकड़े बिठाने पड़ते हैं जो कि कुल वर्ष के हिसाब को माने जाने के अयोग्य बना देते हैं। इसी प्रकार अन्य जरा जरा सी बातों के प्रमाण दिये जा सकते हैं जिनके कारण एक व्यापारी जानबूझ कर नुकसान उठाता है या अपने लिये कठिनाई पैदा कर लेता है, जिसके कारण कभी कभी उसे लज्जित भी होना पड़ता है। इसलिये उसे चाहिये कि कोई कार्य ऐसा न होने दे जिससे आगे चल कर एक समस्या उपस्थित हो जावे। उसे सदा सतर्कतापूर्वक तत्काल कार्य करते रहना चाहिये, और यदि वह इस प्रकार करने में असमर्थ हो तो उसे जल्दी से जल्दी बाद मे करने के लिये अपने स्मृति-पत्र मे नोट कर लेना चाहिये, जिससे कि अवकाश मिलते ही वह उसे कर या करा सके और उसकी ओर असावधानी न होने पावे।

(१०) सतर्कता की आवश्यकता—

प्रत्येक व्यापारी को इस बात से सदा सचेत रहना चाहिये कि जिस माल अथवा विभाग में वह लाभ समझ रहा है उसमें वास्तव में लाभ हो भी रहा है या नहीं। यह वह उसके बेचने अथवा बनवाने और बिक्री के अलग आंकड़े रखकर या जोड़कर बड़ी आसानी से जान सकता है। यदि यह बात वह किसी मुख्य विभाग के बारे में जानना चाहे तो उसे उस विभाग के आमदनी व खर्च का व्योरेवार नक़शा बनवा कर देखना होगा कि उसमें हानि हो रही है या लाभ। केवल अनुमान ही करते रहने से काम नहीं चल सकता। नक़शा जो बने वह उस विभाग का

हिसाब रखने वाला कर्मचारी ही बनावे। केवल स्टाक की सूची अथवा वहाँ के फर्नीचर आदि का ब्योरा उसके संचालक द्वारा बनवाया जा सकता है। स्टाक की सूची जो बनाई जावे उसकी जाँच भी किसी विश्वसनीय आदमी, विशेषतः मालिक या मुख्य संचालक को कर लेनी चाहिये, और उसमें दाम जो लगाये जावें वे लागत के हिसाब से ही लगाये जावें न कि बेचने के हिसाब से। केवल ऊपरी दिखावट या सामान्य भावना के आधार पर किसी बात को मानते रहने से अन्त में धोखा हो सकता है। इसी प्रकार जहाँ तक सम्भव हो अपने यहां के अन्य विभागों की गति भी उनके माल की सूची बनवाकर कभी कभी देखते रहना चाहिये जिससे कि उसका भरपूर ज्ञान होता रहे। लेने व देने वाली रकमों को भी सदा जाँचते रहना चाहिये, यदि कोई रकम विशेष दिन से देनी या लेनी हो तो उसकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये, ताकि वह आगे चलकर भार रूप न हो जावे।

कभी कभी एक व्यापारी अपने आपको इस कारण भी धोखा देता रहता है कि वह नुकसान की बात सोचना स्वाभाविक रूप से पसन्द नहीं करता, और नुकसान होते हुये भी उसकी ओर पूर्णतया ध्यान नहीं देता, लेकिन ऐसा वह अधिक समय तक नहीं कर सकता क्योंकि वर्ष के अन्त में जब वह वार्षिक चिट्ठा बनावेगा तो उसे प्रत्यक्ष देखने में आवेगा कि उसका अनुमान कहाँ तक भ्रम मूलक था। उस समय वह देखेगा कि बहुत से ऐसे खर्चे व्यापार के ऊपर पड़ गये हैं या कुछ ऐसे घाटे हो गये

हैं जिनका उसे ख्याल तक न था। इसलिये उसे चाहिये कि वह कभी कभी व्योरेवार अपने व्यापार का हाल मालूम करता रहे और व्यापार की गति मालूम करता रहे, और बेकार के खर्चों को बन्द करने की चेष्टा करता रहे ताकि आगे चलकर पछताना न पड़े। कभी कभी लोग पाखण्ड या अन्धविश्वास में पड़कर भी धोखा खाते रहते हैं। यह विश्वास उनकी मनोवृत्ति या कुसंगत के कारण ही पैदा होते हैं। इसलिये एक व्यापारी को चाहिये कि किसी बात का विश्वास करने के पहले उसके बारे मे पूरा पूरा और ठीक ज्ञान प्राप्त कर ले तब उस पर कार्यान्वित हो। बेकार के अन्धविश्वास अथवा झूठी अफवाहों में पड़ कर नुकसान न उठावे। सदा दूरदर्शिता, ईमानदारी, उद्योग और बुद्धि से काम ले और परमात्मा पर भरोसा रखे। कोई राय कायम करने के पहले, या उस पर कार्यान्वित होने के पहले उसे सोचना चाहिये कि उसके समर्थन में क्या क्या सिद्धि-युक्त प्रमाण है और किन किन बातों पर वह निर्भर है। आसानी से किसी बात को मानकर उसके अनुसार काम कर डालना बुद्धिमानी नहीं है। यह भी सम्भव है कि जो बातें पहले ठीक या अच्छी समझी जाती थीं वे अब पीछे पड़ गई हों। और उनकी बजाय नई नई बातें पैदा हो गई हों। इस प्रकार बदली हुई परिस्थिति पर ध्यान न देकर गई गुजरी प्रथाओं अथवा प्रणालियों पर ही आरुढ़ रहने से कभी उन्नति नहीं हो सकती। नये नये आविष्कार अथवा कलाओं का जो अपने व्यापार से सम्बन्ध रखने वाली हों, ज्ञान प्राप्त करते रहना

अत्यन्त जरूरी है। इसी प्रकार अपने विचारों में परिवर्तन करते रहना उन्नति का मूल साधन है। ऐसा करने के लिये व्यापार सम्बन्धी पत्र पत्रिकायें अथवा पुस्तकें आदि पढ़ते रहना चाहिये। और जो उसके ज्ञाता हों, उनसे अवसर मिलने पर विचार में विनिमय भी करते रहना चाहिये। अन्य देशों आदि मे या प्रदर्शनियों जाने से भी इस सम्बन्ध की बहुत जानकारी होती है।

अपने ग्राहकों के बारे में भी एक व्यापारी को सदा सचेत रहना चाहिये। यदि कोई ग्राहक उसके यहाँ से अपना व्यवहार बन्द कर देता है या कम कर देता है तो उसके बारे में ठीक ठीक जानकारी प्राप्त करके उसका समाधान कर उसे संतुष्ट करना चाहिए, क्योंकि ग्राहक स्वयं यह कहने प्रायः नहीं आते कि किस कारण उन्होंने ऐसा किया है। यदि वे कभी किसी बात की शिकायत करें तो उसकी जाँच कर उसे जल्दी से जल्दी दूर करना चाहिये।

सारांश यह है कि किसी प्रकार का भी नुकसान होने या बिक्री कम होने के आसार देखते ही एक व्यापारी को उनकी छानबीन तुरन्त करना चाहिये, क्योंकि यह उसके व्यापार के लिये बड़े महत्व का विषय है, जिसकी वह अवहेलना या उपेक्षा कर नहीं सकता। प्रत्येक व्यापारी को (१) सीखना, (२) सोचना, (३) उपाय करना, और (४) उन्नति करना ये चार बातें सदा विचारते और करते रहना चाहिये। साधारण चालू काम की ओर वह विशेष ध्यान कभी कभी देता रहे यह काफ़ी है, सीखने और सोचने से जो उन्नति काम में होती है वह काम में

सदा लगे रहने से नहीं हो सकती। अपने धन, शिक्षा और बुद्धि से काम लेना ही मुख्य रूप से उन्नति का साधन होता है। चालू काम तो वह दूसरों से भी उन्हें वेतन आदि देकर करा सकता है, पर बुद्धि और ज्ञान उसे हर अवस्था में अपना ही लगाना पड़ता है। इनको वह शिक्षा और सुसंगति द्वारा ही प्राप्त कर सकता है। इन्हीं से वह तीव्र और समय पर काम देने वाले बनते हैं और उसे दूसरों से काम लेने योग्य बनाते हैं। साथ साथ जो जरूरी काम उसके करने का है उसे वह स्वयं भी करता जावे। इसी में उसकी सफलता का भेद है। यदि वह एक छोटे व्यवसाय का मालिक है तो भी उसे अपने हाथों की अपेक्षा अपने नेत्रों, बुद्धि और जिह्वा से ही अधिक काम लेना चाहिये। उसे देखते रहना चाहिये कि उसके कर्मचारी क्या कर रहे हैं और किस प्रकार कर रहे हैं या क्या नहीं कर रहे हैं। किस प्रकार से वे उसी कार्य को अधिक अच्छी प्रकार से या कम समय में करा सकता है अथवा जो कार्य एक कर्मचारी कर रहा है वह उसके करने योग्य है या नहीं, इत्यादि, इत्यादि। उसे यह भी देखना चाहिये कि यदि कम वेतन वाला किसी कार्य को कर सकता है, तो उस स्थान पर अधिक वेतन वाला न लगा कर उसे किसी अन्य अधिक उपयुक्त कार्य पर लगाना चाहिये। मालिक या संचालक को नई योजनायें सोचते और उनको अच्छी प्रकार सोच समझकर कार्यान्वित करते रहना चाहिये, जिससे कि परिश्रम व समय कम से कम लगकर लाभ के साधन बढ़ते जावें। सदा अपने व्यापार में स्वयं लगे रहना

यह इस बात की दलील नहीं है कि वह विशेष उन्नति के पथ पर है। ऐसा करने से बहूत से कार्य या प्रस्ताव जो उन्नति सम्बन्धी हैं स्थगित होते रहते हैं, या वे उसे सुझाई भी नहीं पड़ते, क्योंकि वह हर एक विषय को प्रतिदिन उसमें उन्नति की निगाह से नहीं देख सकता, और यदि देखता भी है तो करने का अवकाश नहीं पाता। इसके विपरीत यदि वह उसका कभी कभी भली प्रकार से निरीक्षण करता रहे, और व्यापार की गति को उन्नति की ओर बढ़ता रहे तो फल कहीं अधिक अच्छा होगा।

(११) उन्नति के साधन—

कोई काम रात दिन करते रहना ही इस बात की दलील नहीं है कि उसमें सफलता हो जावेगी। सफलता यत्नपूर्वक लगे रहने पर ही निर्भर है। इसलिये कोई भी काम क्यों न किया जावे, उसके बारे में उचित ज्ञान और शिक्षा प्राप्त करना बहुत जरूरी है। इस ज्ञान और शिक्षा की प्राप्ति किसी एक काल में ही सीमित नहीं होती। वह उसे सदा प्राप्त करते रहना चाहिये, तभी सफलता प्राप्त कर वह अपने काम में उन्नति कर सकता है, वरना या तो सफलता मिलेगी ही नहीं या वह अधूरी होगी। हमे सदा बिचारते रहना चाहिये कि कौन सा कार्य किस प्रकार से किया जावे जिससे उसमे वास्तविक उन्नति होती रहे। ऐसा करने के लिये अच्छी अच्छी व्यापार सम्बन्धी पुस्तकें या लेख पढ़ते रहना चाहिये, अथवा अनुभवी लोगों से परामर्श कर विचार विनिमय करते रहना चाहिये, और नीचे लिखी अंग्रेजी

कहावत का ध्यान रखना चाहिये।

"It is by diving deep into the ocean of thought that a man gets at the pearl of truth."

भावार्थ—विचार सागर में गहरा गोता लगाने से ही सत्य रूपी मोती प्राप्त होता है अन्यथा अधिकांश विचार आगे चल कर भ्रमपूर्ण और निःसार सिद्ध हो सकते हैं।

व्यापार में रात दिन लगे रहने और उसके बारे में सोचते रहने पर ही उसकी उन्नति निर्भर नहीं होती, यद्यपि यह निर्विवाद सत्य है कि जब तक वह अच्छी प्रकार से न चलने लगे तब तक तो व्यापारी को उसमें सदा तल्लीन रहना ही चाहिये। साथ साथ उसे उसके सम्बन्ध का ज्ञान भी बढ़ाते जाना चाहिये, और विचारते रहना चाहिये कि किस प्रकार उसकी उन्नति ठीक रीति से की जानी चाहिये। ये विचार उसमें सदा लगे रहने से नहीं प्राप्त हो सकते। उसे कभी कभी उससे छुट्टी लेते रहना चाहिये, और अन्य स्थानों में घूम कर या अवकाश मिलने पर विचारने से मिल सकते हैं। यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसके परिश्रम का पूरा लाभ उसे मिलना कठिन हो जावेगा।

अधिकांश व्यापारी यह समझते हैं कि उनके व्यवसाय में कुछ न कुछ विशेषता या भिन्नता है। ऐसा विचार बहुत कुछ भ्रम में डाले रखने वाला होता है। हर एक व्यापार सम्बन्धी कार्य में एक दूसरे से कुछ न कुछ भिन्नता तो होती ही है, पर यह इस बात की सूचक नहीं है कि उस भिन्नता के कारण उसमें कोई विशेषता पैदा हो गई है। इस भ्रम का एक प्रभाव यह भी

होता है कि यदि कोई त्रुटि उसके कार्य अथवा प्रणाली में होती है तो भी वह उस पर उचित ध्यान न देकर अपने मन को केवल भिन्नता का बहाना करके समझा देता है, या उसकी ओर उचित ध्यान नहीं देता जिसके कारण वह उन्नति करने के बजाय घाटा सहता रहता है। इसलिये हर एक व्यापारी को चाहिये कि यदि कोई उसकी दूकान अथवा कारखाने की बनी चीज़ में कोई त्रुटि बतलावे या उसमें उन्नति की राय दे तो उसे आदर के साथ सुनना और मनन करना चाहिये, और यदि उसकी राय मानने योग्य हो तो उसे कार्यान्वित भी कर देखना चाहिये। उसे ऐसा करने में किसी प्रकार का दंभ या घमंड मन में नहीं लाना चाहिये, क्योंकि घमंड से कुशलता कोसों दूर रहती है (Pride is the enemy of efficiency)। यदि कोई आदमी यह समझने लगे कि उसको कोई दूसरा व्यक्ति अथवा पुस्तक कुछ सिखा नहीं सकते, तो वह निश्चय ही खतरे में है, क्योंकि वह अपने ही अन्धविश्वासों पर इतना आरूढ़ है कि उसको कोई दूसरा सुधार नहीं सकता। शिक्षा-काल के बाद आदमी का स्वयं अनुभव अथवा अन्य लोगों या पुस्तकों से प्राप्त हुआ ज्ञान ही उसके सबसे अच्छे साथी और शिक्षक होते हैं। इनसे उसे लाभ उठाते रहना चाहिये, और इस प्रकार अपनी उन्नति आप करते जाना चाहिये। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो वह पायेगा कि उसके अन्य साथी अपने नये ज्ञान और पुरुषार्थ के कारण उसके आगे बढ़ रहे हैं, या उन्होंने उसे कुचल कर अपनी उन्नति कर ली है। कोई कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, उसे

यह समझना चाहिये कि वह हर एक बात में निपुण नहीं हो सकता, न ही वह सब बातों का ज्ञाता या अनुभवी हो सकता है। यदि वह किसी विशेष प्रकार की योग्यता रखता है तो यह जरूरी नहीं है कि उसके बारे में वह सब कुछ जानता है। इसलिये उसे अपना मन दूसरों की बातों को आदरपूर्वक सुनने और आवश्यकता या अवसर अनुसार उससे पूछने के लिये सदा खुला रखना चाहिये, और साथ साथ अपनी कमज़ोरियों की ओर भी ध्यान रखना चाहिये जिससे कि उनको दूर करके वह अपनी उन्नति करता रहे। यह भी जरूरी नहीं है कि किसी विशेष योग्यता का पूरा ज्ञान उसके उच्च अधिकारी या विशेषज्ञ ही में हो। कभी कभी साधारण व्यक्ति से भी उसके सम्बन्ध में बड़े मारके की बात मालूम हो जाती है, जिससे कि लाभ उठाया जा सकता है। हर दशा में उन्नति नम्रता-पूर्वक नये विचार ग्रहण करने और उनको समझ बूझकर कार्यान्वित करने में ही है।

कभी कभी आदमी अपने ज्ञान और विचारों के अनुसार जब अपना व्यापार पूर्ण रूप से उन्नति के शिखर पर पहुँचा देता है, तो उसमे अधिक उन्नति करना उसके विचार के बाहर हो जाता है, या वह नये ढङ्ग से उन्नति करना सोच ही नहीं सकता। नये ज्ञान और नये विचार पैदा करने से ही ऐसी उन्नति हो सकती है, अथवा उस व्यापार को किसी अन्य अनुभवी और योग्य व्यवस्थापक के सुपुर्द करने से। वह उसमें अपना नया ज्ञान तथा नये उत्साह से जो उन्नति कर सकेगा वह पुराने व्यवस्थापक के बाहर की बात है, सिवाय ऐसी दशा के जब कि

वह भी नये अनुभव या ज्ञान द्वारा अपने विचार बदल कर उसमें काम करे। इसलिये यह बहुत जरूरी है कि एक व्यापारी को दूसरे व्यापारियों अथवा विशेषज्ञों के अनुभवों तथा ज्ञान को जान कर उनसे लाभ उठाने का प्रयत्न सदा जारी रखना चाहिये। उसे सदा शान्त स्वभाव से काम लेना चाहिये, न तो किसी सौदे में उत्तेजना से काम लेना चाहिये और न डर से। कभी कभी किसी माल के गिरते बाजार भाव के झोके में आकर वह अपना सब माल सस्ता और घाटे से बेचने के लिये उत्तेजित होता है, और कभी मँहगी होते देख कर अपनी आवश्यकता या खपत से कहीं अधिक मात्रा में उसे खरीद लेता है। दोनों ही हालतों में उसे बिना किसी उत्तेजना या डर के कार्य करना चाहिये और सामर्थ्य से बाहर कभी कोई काम या सौदा नहीं करना चाहिये। न ही असाधारण रूप से गिरते बाजार से डर कर अपना माल घाटे से निकालने की जल्दी करनी चाहिये, सिवाय ऐसी दशाओं के जिनके कारण परिस्थिति ही बदल गई हो और निकट भविष्य में उसके सुधरने की कोई आशा न हो। शेयर का काम करने वालों को तो इस मामले में और भी साव-धानी वर्तनी चाहिये, क्योंकि उनके दाम तो विशेषतः जनता की राय अथवा क्षणिक परिवर्तन के अनुसार, जो कि संसार में बदलती हुई परिस्थिति के अनुसार होते रहते हैं, घटते बढ़ते रहते हैं, न कि उनसे सम्बन्धित कारखानों या मिलों आदि के वास्तविक लाभ या हानि के अनुसार।

व्यापार में लाभ व हानि के अवसर सदा आते जाते रहते

हैं। इसलिये व्यापारी को इनसे सचेत रहकर सदा संयम से काम लेना चाहिये। यदि किसी वर्ष उसे अधिक लाभ हो तो उसे या तो व्यापार ही की उन्नति करने में लगा देना चाहिये या ऐसे ठिकाने लगा दे जहाँ से कि आवश्यकता पड़ने पर उससे लाभ उठाया जा सके, या उससे अपनी स्थायी रूप से आर्थिक उन्नति की जा सके। परन्तु यदि कभी विशेष घाटा हो जावे तो उससे हताश न होकर आगे के लिये सचेत होने का यत्न करना चाहिये। उसे अपनी वार्षिक लाभ हानि मालूम करने में देरी नहीं करनी चाहिये। यदि किसी वर्ष में नुकसान का डर हो तो उसके अन्त होने से पहले ही मासिक अथवा त्रैमासिक आय व्यय का विवरण बनवाकर व्यापार की गति को देखते संभालते रहना चाहिये। यदि व्यापार में कर्ज का रुपया अधिक लगा हो तो इस सम्बन्ध में उस ओर भी सावधानी से काम लेना चाहिये। यदि किसी चालू माल का भाव अधिक मंदा हो तो उससे लाभ उठाने में नहीं चूकना चाहिये, क्योंकि डर अधिकाँश तेज भाव से माल लेने या बनवाने ही में होता है। यदि किसी समय बिक्री कम हो और बाजार। में उदासीनता छाई हो तो ऐसे समय में अपने धन को उसमें अधिक न लगाकर इस प्रकार काम करना चाहिये जिससे कि स्थाई रूप से आमदनी बढ़े, जैसे मकान या दूकान बनवाना, नई मशीनें आदि अपने कारखाने मे लगवाना या उसकी अन्य प्रकार की उन्नति करना जिससे कि उसमें अधिक लाभ हो सके, क्योंकि किसी चीज के लेने का सबसे अच्छा समय वही है जब कि

वह सस्ती मिल रही हो और उसके लेने के लिये पास धन भी हो। इसी प्रकार यदि बाजार में किसी माल की मांग अधिक है तो जहाँ से हो सके, उस माल को लाकर बेचे और लाभ उठावे। इसका यह मतलब नहीं समझना चाहिये कि लाभ उठाने की उत्तेजना में कोई ऐसा कार्य करे जो ईमानदारी से करने योग्य न हो, अथवा व्यापारिक सिद्धान्तों के प्रतिकूल हो; क्योंकि ईमानदारी और सच्चाई द्वारा बढ़कर धनी और प्रतिष्ठित होना ही वास्तविक उन्नति है। हर हालत में पराक्रम, दूरदर्शिता और समझदारी से ही कार्य करने में भलाई है। इन सिद्धान्तों को दृष्टिगोचर रखते हुये सुअवसरों से अधिक से अधिक लाभ उठाने में कसर नहीं करनी चाहिये। व्यापार में उन्नति करने के अन्य साधनों के साथ साथ सुअवसरों से पूरा लाभ उठाना भी बहुत जरूरी है क्योंकि कभी कभी ही ऐसे अवसर मिला करते हैं. और ऐसे अवसरों पर ही व्यापार की विशेष उन्नति निर्भर होती है, कर्जे निपटाये जाते हैं और आगे के लिये नयी नयी योजनायें बनाई जाती हैं, और घाटे के वर्षों के लिये कुछ बचा कर रखा जा सकता है। यदि ऐसा न किया गया तो सन्नाटे अथवा शिथिलता के दिनों को पार करना कठिन या असम्भव हो जाता है। ऐसे ही अवसरों पर विज्ञापन द्वारा अपने व्यापार को आगे बढ़ाना या उसे विख्यात भी करना चाहिये। यदि कारखाना हो तो उसे दो शिफ़्ट या तीन शिफ़्ट (यानी रात दिन) चलाकर उसमें अधिक से अधिक पैदा करना या बनवाना चाहिये जिससे कि उससे

अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सके। एक सतर्क व्यापारी का यह सिद्धान्त होना चाहिये कि सन्नाटे के दिनों में अपने कारोबार में स्थाई उन्नति का काम करे और अधिक मांग के दिनों में खूब व्यापार करे।

बहुत से व्यापारी अपने ही विचारों में लिप्त रहते हैं। वे दूरदर्शिता से अथवा मौके से लाभ उठाने की चेष्टा नहीं करते। हर एक व्यापारी को विचारना चाहिये कि उसकी दूकान अथवा कारखाने की क्या क्या विशेषतायें हैं, और उनसे किस प्रकार से अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सकता है। यदि वह उनसे पूरा पूरा लाभ नहीं उठा सकता तो सोचना चाहिये कि किस कारण वह ऐसा नहीं कर सकता और उसके क्या उपाय हैं। यदि कोई बात रोड़ा रूपी है तो उस पर किस प्रकार विजय प्राप्त की जा सकती है। साथ साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि यदि सोचे अनुसार परिस्थित पैदा न हुई या बना हुआ माल न बिका तो उसके व्यापार का क्या हाल होगा, उसमें इतनी अधिक पूंजी तो न फंस जावेगी जो उसे ले ही डूबे, क्योंकि बाजार की दशा और ग्राहकों की मांग सदा बदलती रहती है। अवसर रहते ही कार्य करके जो लाभ उठाया जा सके उसे ईमानदारी और सच्चाई के साथ उठाने में कसर नहीं करनी चाहिये।

मालिक दूकान हो अथवा उसका विक्रेता, यदि वह अपना व्यवहार ग्राहकों के प्रति कृतज्ञतापूर्ण न रखेगा और उनसे प्रसन्नता पूर्वक बात न करेगा तो वे उससे व्यवहार करने के लिये

उत्साहित न होंगे। समय चाहे जितना कठिन हो, महँगी चाहे जितनी हो पर दूकानदार को ग्राहक के साथ बर्ताव करते समय इनसे जरा भी प्रभावित न होकर बातचीत करनी चाहिये वरना वह भी उसी के अनुकूल बनकर अपनी माँग को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट करने के लिये उत्साहित न होगा। उससे तो इस प्रकार की बात करनी चाहिये कि जो भाव निकट भूतकाल में थे वे आज नहीं और जो आज हैं वह हो सकता है कल न रहें, अथवा जो माल अच्छा आज मिल रहा है उसका आगे चलकर मिलना कठिन हो जावे तो कोई आश्चर्य न होगा। महँगी तो अब मामूली बात हो गई है, उसके कारण अपनी आवश्यकताओं को कब तक टाला जावे। महँगी के कारण जीवन के दिन बढ़ नहीं जावेंगे, इसलिये उसके कारण कठिनाई कब तक सही जावे, इत्यादि।

हर समय और हर देश में दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक तो वे जो सदा उदासीन ही रहते हैं और उदासीन भाव प्रकट करके अपना वातावरण भी उदासीन ही बनाये रहते हैं, दूसरे वे जो सदा प्रसन्न चित्त रहते हैं, चाहे उन पर कुछ भी क्यों न बीता करे और इस प्रकार औरों के लिये भी प्रसन्नता का कारण बनते हैं। क्यों न हम दूसरी श्रेणी के लोगों में होने की कोशिश करें और अपनी मनोवृत्ति को प्रसन्नता की ओर झुकाये रहें। हमारी आदतें बहुत कुछ हमारे हाथ में हैं, हम अपने को वैसा ही बना सकते हैं जैसा हम बनना चाहें। व्यापारी के लिये तो इस प्रकार की मनोवृत्ति रखना बहुत

जरूरी है, वरना उसकी मुर्दा भावनाओं से उसके कर्मचारी भी प्रभावित होकर उसकी उन्नति में बाधा डालेंगे। यदि किसी दूकान के अधिकाँश लोग प्रसन्न चित्त हैं, जो कि उसके मालिक या मुख्य संचालक के बर्ताव के कारण हो सकते हैं, तो वह ग्राहकों को इस प्रकार आकर्षित करेगी जैसे कि एक फूलों की क्यारी भौरों या तितलियों को आकर्षित करती है। इसी प्रकार कारखाने में यदि प्रसन्नता फैली रहेगी तो उसका काम अच्छी प्रकार से खुशी खुशी होता रहेगा और वहाँ हड़ताल की बीमारी न घुसने पावेगी। वहाँ का वातावरण वहाँ के काम लेनेवाले फोरमैन अथवा संचालक के स्वभाव पर निर्भर रहता है। पर इसका यह मतलब भी नहीं समझना चाहिये कि प्रसन्नता के अभिप्राय से वहाँ किसी प्रकार की बेअदबी या बेक़ायदगी फैलने पावे। इस बात का ध्यान वहाँ के उच्च-कर्मचारियों को सदा रखना चाहिये।

यदि किसी व्यापारी को अपने गिरते हुये व्यापार की दशा सुधारनी हो तो उसे पहले सोचना चाहिये कि उसमें शिथिलता या अवनति के क्या क्या कारण हैं और वे स्वयं उसके लिये कहाँ तक जिम्मेदार है। यदि कोई ऐसे उपाय हों जिनको वह प्रयोग में ला सकता है तो उसे तत्काल ऐसा करना चाहिये। पहले उसे अपने आपको ही सुधारने का यत्न करना चाहिये। इससे वह देखेगा कि बहुत सी बातें आपसे आप सुधर जावेंगी, कर्मचारी अधिक सतर्क हो जावेंगे, ग्राहकों की संख्या बढ़ जावेगी, फ़िजूल के खर्चे कम हो

हो जावेंगे और सफ़ाई अधिक दीखने लगेगी, इत्यादि। लेकिन यदि उसकी अवनति के कोई ऐसे कारण हैं जिनके ऊपर उसका वश नहीं है तो पहले उन कारणों को दूर करने की चेष्टा करनी चाहिये और उनके ऊपर विजय प्राप्त करने के उपाय करने चाहियें तभी सफलता प्राप्त हो सकती है।

हर एक व्यापारी को अपने ही पराक्रम और पुरुषार्थ के भरोसे अपना काम बढ़ाना चाहिये। यदि बाहर का धन लेकर उसे उसमें लगाना पड़े तो बहुत सतर्कता के साथ ऐसा करना चाहिये। उसे वह किसी ऐसे माल या काम में न लगा दे जिसमें घाटे का डर हो अथवा वह देर में उतरे। दूसरे का धन अधिक समय तक लगाये रहकर उस पर ब्याज देते रहना यह बहुत अच्छी निशानी नहीं है, क्योंकि उस पर मुनाफ़ा तो बिकने पर ही एक बार होता है पर ब्याज रात दिन चढ़ता रहता है। हाँ यदि कर्ज़ देने वालों को मुनाफ़े में से हिस्सा या डिवीडेन्ड आदि के रूप में देना हो, और उस पर ब्याज न देना पड़े तो दूसरी बात है। एकाकी दूकानदार को तो विशेषतः अपने ही धन और परिश्रम के सहारे अपना काम बढ़ाना चाहियें। यदि दूसरे का रुपया ब्याज पर लगा हो तो उसे जल्दी से जल्दी निपटा देने की युक्ति करना चाहिये। जब तक इस प्रकार उसका व्यापार सुदृढ़ न हो जावे, तब तक बराबर उसको बड़ी सावधानी और पुरुषार्थ तथा लगन से काम लेते रहना चाहिये। अपने निजी तथा व्यापार के चालू खर्चों को कम से कम रख कर बड़े त्याग का जीवन व्यतीत करना चाहिये। जहाँ तक हो

सके स्वयं ही उसकी देखभाल करते रहना चाहिये, कर्मचारियों पर अधिक नहीं छोड़ना चाहिये।

परिस्थिति अनुकूल होते हुये यदि किसी वर्ष व्यापार में विशेष लाभ हो तो उसे विशेषतः उसकी उन्नति करने में लगाना चाहिये, या उसमें लगे कर्मचारियों के लाभ के कामों में अथवा उन्हें बोनस आदि देकर प्रसन्न करने में खर्च करना चाहिये। साथ साथ उसके हिस्सेदारों का लाभ भी दृष्टिगोचर रखना चाहिये, क्योंकि उनके धन से ही लाभ उठाया गया है। ऐसा करने से कम्पनी के शेयरों का बाजार भाव बढ़ता है, जिससे उसकी साख बढ़कर उसके माल की भी खपत बढ़ती है। कुल निखर्चे मुनाफे का आधा भाग तो कम्पनी के हिस्सेदारों में बाँटना ही चाहिये। बाकी उसके रिज़र्व बनाने, उन्नति करने और कर्मचारियों को सन्तुष्ट करने में खर्च करना चाहिये, क्योंकि विशेषतः उन्हीं के परिश्रम और योग्यता के कारण वह लाभ हुआ है।

———

अध्याय १५

हिसाब-किताब

(१) उपयोगिता और सिद्धान्त--

यदि रोजगार को एक घोड़ा समझा जावे तो उसके संचालक को उसका सवार और हिसाब-किताब को उसकी बागडोर या रास समझना चाहिये। बिना रास को होशियारी से थामे वह न तो घोड़े को ठीक से चला सकता है, न उसे काबू में ही रख सकता है। इसलिये उसे सदा सावधान होकर व्यापार रूपी घोड़े की सवारी करनी चाहिये, ताकि वह उसे उन्नति और सफलता की ओर ले जावे, न कि गड्ढे आदि में डाल कर चोट पहुँचावे या बरबाद कर दे। यदि कोई नया व्यापारी स्वयं इस रास को थामना नहीं जानता, यानी हिसाब-किताब रखना या उसे जाँचना नहीं जानता, तो उसे कुछ दिन के लिये इस हुनर के ज्ञाता को रख कर अपने हिसाब की परिपाटी ठीक ठीक बिठा लेनी चाहिये, और उसे भली भाँति सीख कर उसे स्वयं करते और जाँचते रहना चाहिये। यदि प्रतिदिन जाँचने का समय न मिलता हो तो इस कार्य को किसी अन्य योग्य कर्मचारी या सहायक के सुपुर्द करना चाहिये। छोटे रोजगार की दशा में यदि पूरे समय के लिये कोई एकाउन्टेन्ट (गणितज्ञ) की आवश्यकता प्रतीत न होती हो, और स्वयं भी समय न मिलता हो

तो थोड़े समय अथवा सप्ताह में एक या दो बार के लिये किसी हिसाब के ज्ञाता को हिसाब बनाने के लिये जरूर नियत कर लेना चाहिये। यद्यपि हर अवस्था में यह अत्यन्त आवश्यक है कि स्वयं भी उसे जाँचता रहे, और हर एक लेन देन के आँकड़े, चाहे माल के हों अथवा रुपये के, उनको उसी क्षण उनसे संबंधित किताब (कैश-बुक अथवा स्टाक-बुक) मे दर्ज करता या कराता रहे, क्योंकि इन्हीं लेखों पर आगे का सब हिसाब-किताब निर्भर करता है। यदि कोई लेखा छूट गया तो फिर वह याददाश्त की बहती धार में लोप हो जाता है, और उसका पकड़ना फिर कठिन या असम्भव हो जाता है। इसलिये हर आमदनी व खर्च का आना और जाना ब्योरेवार तारीख सहित या तो किसी रोजनामचे यानी डे-बुक में दर्ज करते जाना चाहिये, और दिन के अन्त में उसे उचित रजिस्टर में दर्ज करके उस दिन का हिसाब लेन देन तथा बकाया का मिला लेना चाहिये, इसी के आधार पर वह बाद मे आगे का हिसाब बना सकेगा, या अन्य आदमी से बनवाकर उसे जाँचते रहना चाहिये। ऐसा करने से नीचे लिखे लाभ होंगे—

(अ) मुनीम अथवा एकाउन्टेट के बनाये हुये हिसाब की ठीक ठीक जाँच हो कर उससे व्यापार की गति मालूम होती रहेगी। मुनीम आदि के लिये तो उसके बनाये हिसाब के आंकड़ों मे कोई विशेष महत्व नहीं होता, लेकिन मालिक या संचालक के लिये तो उसका एक एक आंकड़ा सार-गर्भित होता है।

(आ) उचित रूप से ठीक ठीक बनाये हुये हिसाब से उसको ज्ञात होता रहेगा कि उसको किससे कितना लेना है, और किसको कितना देना है, और वह कब से।

(इ) उससे उसे मालूम होता रहेगा कि उसके गत मास अथवा वर्ष के बिक्री और खर्च के आंकड़े उससे पहले मास, गत वर्ष अथवा गत वर्ष के उसी मास के आंकड़ों से किस प्रकार तुलना करते हैं। इसके द्वारा वह उनके कारणों की भी जाँच कर सकेगा और आवश्यकतानुसार उपाय सोच और कर सकेगा।

(ई) उससे वह देख सकेगा कि कोई लेने वाली रकम ऐसी तो नहीं है जिसके लिये बहुत दिन से याद दहानी नहीं की गई हो और यदि वह पुरानी पड़ गई है तो उसके क्या कारण हैं।

(उ) कोई रकमें कर्जे की ऐसी तो नहीं हैं जिन पर बेकार सूद चढ़ रहा हो, अथवा बेकार सूद दिया जा रहा हो, इत्यादि।

उपरोक्त आँकड़ों को वह अपनी जाँच के लिये इस प्रकार बनवावे कि उसे उसके तुलनात्मक पिछले मास अथवा वर्षों के आँकड़े भी साथ साथ विदित होते जावें। हरएक रकम जो लेनी या देनी हो उसका उचित ब्योरा, यानी वह कब से चल रही है और उसके वसूल करने या देने की क्या कार्यवाही की जा चुकी है, इत्यादि उसे मालूम होते रहना चाहिये।

हिसाब रखना या बनाना केवल अपने ही सन्तोष भर के लिये काफ़ी नहीं होता, वह इस प्रकार रखा या बनवाया जाना

चाहिये कि यदि उसे आय-कर अथवा बिक्री-कर के अधिकारियों को जँचवाना पड़े, या किसी न्यायालय में पेश करना पड़े तो वह भी उससे संतुष्ट हो सकें। उसकी हरएक एन्ट्री ठीक होने का कुछ प्रमाण होना चाहिये, तभी वह उसमें लिखित हरएक रकम अथवा माल का व्योरा सच और ठीक मानने के लिये बाध्य होंगे।

नोट १—प्रतिदिन होने वाले आय अथवा व्यय के वृतांत उसी समय पक्की रीति से उससे सम्बन्धित हिसाब की किताब में यदि साफ़ साफ़ लिखे जा सकें तो बहुत अच्छा हो, लेकिन यदि ऐसा न हो सके तो पहले उन्हें कच्चे चिट्ठे अथवा रोज-नामचे में लिखते जाना चाहिये। बाद में उनको पक्की तौर पर उनसे सम्बन्धित किताबों में दर्ज करना चाहिये।

नोट २—यदि कोई हिसाब का अनुभवी ज्ञाता हिसाब की परिपाटी डालने और उसको कुछ दिन चलाने के लिये न मिले तो प्रयत्न यह करना चाहिये कि जिस प्रकार का अपना रोजगार हो उसी प्रकार के अन्य व्यापार करने वालों को हिसाब की परिपाटी देख व समझकर उसी के अनुसार अपने यहाँ के हिसाब की भी परिपाटी डाल लेनी चाहिये और उसे आवश्य-कतानुसार अपने योग्य बनाकर उसे कार्यरूप में लाना चाहिये। ऐसा न करके अपने अधूरे ज्ञान के अनुसार हिसाब की परिपाटी डालने से आगे चलकर उसको बदलना कठिन होता है और बहुत सा श्रम बेकार जाता है। आशय यह भी होना चाहिये कि जहाँ तक हो सके सरल से सरल तरीके हिसाब रखने में बरते

जावें और उन्हें बेकार के लिये बढ़ाया या पेचीदा न किया जावे। यदि एक की बजाय दो या अधिक रजिस्टर किसी हिसाब के रखे जावें तो इसमें किसी प्रकार की हिचकिचाहट न होनी चाहिये। देखना यह चाहिये कि ऐसा करने से वही काम दुबारा तो नहीं करना पड़ता, अथवा एक लेखा दो बार तो उसी अभिप्राय से नहीं रखना पड़ता। हर विषय के अलग अलग रजिस्टर रखने से हिसाब रखने में अधिकाँश सुविधा ही होती है। यदि एक ही प्रकार के कई रजिस्टर अलग अलग विभाग के रखे जावें तो उन सबका खुलासा एक उसी प्रकार के अन्य रजिस्टर में दर्ज करके पूरा हाल एक रजिस्टर द्वारा मालूम करते रहना चाहिये।

(२) हिसाब किस प्रकार रखा जावे—

यह बात निश्चय करना कि हिसाब किस प्रकार रखा जावे इस बात पर निर्भर करता है कि व्यापार किस प्रकार का है। क्योंकि यद्यपि हिसाब रखने के मूल सिद्धान्त हर अवस्थाओं के लिये एक से होते हैं पर उनके विविध रूप और क्रियायें कुछ भेद सहित विभिन्न प्रकार के व्यापार के अनुसार अलग अलग होते हैं। हिन्दुस्तानी ढंग का बहीखाता अंग्रेजी ढंग के हिसाब-किताब की अपेक्षा कुछ सरल होता है, लेकिन इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि अंग्रेजी ढंग के हिसाब-किताब की क्रिया को हर व्यवसाय के अनुसार आसानी से बदल कर उसके अनुकूल बनाया जा सकता है, पर हिन्दुस्तानी ढंग पर बही खाता रखने में ऐसी सुविधा नहीं मिलती। इसके अतिरिक्त उसके

ज्ञाता भी अब आसानी से नहीं मिलते। पर अंग्रेजी ढंग से हिसाब रखने वाले आसानी से मिल जाते हैं। इसलिये सुविधा और अच्छाई इसी में है कि हिसाब सरलता पूर्वक अंग्रेजी ढंग पर ही रखा जावे। यह अपनी खुशी की बात है कि उसकी व्याख्या तथा संख्या किसी भाषा में भी हो।

अंग्रेजी ढंग से हिसाब रखने में मुख्य हिसाब की किताबें एक कैश-बुक (यानी रोकड़ बही) दूसरे लैजर (यानी खाता) होती हैं। माल के हिसाब के लिये आवश्यकतानुसार स्टाक-बुक और उधार खरीदने तथा उधार बेचने के हिसाब की किताबें अलग अलग होती है। खरीदारी और बिक्री की किताबों में प्रायः वही खरीद और बिक्री दर्ज की जाती है, जिसका भुगतान तत्काल नहीं कर दिया जाता। कभी कभी ऐसा भी होता है कि कुल बिक्री या खरीद उनमें व्योरे सहित अथवा बिना व्योरे लिखते जाते हैं। उनमे से जिनका भुगतान तत्काल नहीं हो जाता उनकी रकम अलग खाने में दर्ज करते जाते हैं बाकी "नक़द बिक्री" या "नक़द खरीद" के खाने में दर्ज करते जाते हैं। बाद में हर एक रकम जो उधार माल बेचने या लेने की हो उसे उसके लेने या देने वाले के हिसाब में लैजर में दर्ज कर देते हैं, और बाकी की बिक्री या खरीद कैश-बुक मे "नक़द बिक्री" या "नक़द खरीद" के नाम से दिखाते रहते हैं। इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार एक किताब ऐसी भी रखते हैं जिसमे हर प्रकार के लेने व देने को व्योरेवार लिखते जाते हैं। इसको डे बुक या रोजनामचा

कहते हैं। इसमें से हर एक रकम फिर संक्षेप में उसके अनुरूप किताब कैश-बुक अथवा बिक्री या खरीद की डे-बुक में दिन के अन्त में लिखकर हर एक हिसाब को अलग अलग छांट लेते हैं ताकि बाद में उसे देखने और जाँचने में तथा आगे का हिसाब बनाने में सुविधा हो। यह सब किताबें जिल्द बंधी हुई लाईन-दार और साधारण खाने खिंची हुई स्टेशनरों के यहाँ मिल जाती हैं। इन्हें खरीद कर तत्काल काम में लाया जा सकता है। लेकिन यदि उनके खाने अपने अनुकूल न हों तो सादे लाईनदार रजिस्टर या कापियाँ लेकर उनमें अपने अनुकूल खाने खींच कर काम में लाना चाहिये। यदि साथ साथ बंक में भी व्यापार का खाता चलता हो, और अपनी रोकड़ कुछ बंक में हो कुछ अपने पास रहती हो, तो कैश-बुक में ही बंक का एक अलग खाना आमदनी तथा खर्च की ओर उसमें नकदी के खाने के अतिरिक्त होना चाहिये, जिससे कि मालूम होता रहे कि प्रतिदिन के अन्त में कितना बकाया बंक में है और कितना अपने पास। इसी प्रकार यदि कई प्रकार या विभाग की आमदनी व खर्च अलग अलग दर्ज करना हो तो उसके लिये अलग अलग खाते कैश-बुक में दोनों तरफ होने चाहिये ताकि उनकी आमदनी व खर्च की रकमें अलग अलग खाते मे उसी क्षण या बाद में प्रतिदिन के हिसाब लिखते समय लिखी जा सकें, और उनका रोज़ का जोड़ अलग अलग मालूम होता रहे, और इस प्रकार आगे का हिसाब भी आसानी से हर विभाग का अलग अलग उतारा या बनाया जा सके, ताकि उन पर नफ़ा नुकसान का अन्दाज हर समय

होता रहे। यह उसके अनुसार बकाया निकाल कर स्टाक के बकाया से मिलान करने से हो सकेगा। इस प्रकार हिसाब रखने से अलग अलग दर की जिन्स का बिक्री-कर भी सुविधा पूर्वक दिया जा सकेगा, और जो बिक्री-कर वसूल हुआ है उसकी कुल रकम का ठीक होना जाँचा जा सकेगा।

लैजर में प्रति दिन की हर प्रकार की बिक्री अथवा अन्य आमदनी और खर्चों के आँकड़े अलग अलग न लिखकर यदि उनको किसी सहायक संक्षिप्त करने वाली किताब (Abstract Book) द्वारा छाँटी हुई रीति से मासिक या वार्षिक जोड़ के रूप में उससे सम्बन्धित हिसाब में दर्ज की जावें तो ऐसा करने से बहुत कुछ श्रम व समय की बचत होती है और साथ साथ उनके ठीक होने की जाँच भी होती जाती है, और मासिक आँकड़ों से एक वार्षिक खुलासा बनाकर पिछले वर्ष के उसी मास के अथवा गत मास के आँकड़ों से तुलना करके व्यापार की गति भी बराबर देखी जा सकती है। इन्हीं आँकड़ों के आधार पर वार्षिक अथवा मासिक बिक्री-धन अथवा खर्चों के चार्ट या नकशे भी बनाये जा सकते हैं, जिनके द्वारा एक निगाह में ही व्यापार की मासिक गति आसानी से मालूम पड़ सकती है।

खर्चों का खुलासा बनाते समय उन्हें इस प्रकार एकत्रित करना चाहिये जिससे अलग अलग प्रकार के खर्चों का जोड़ एक स्थान में रखा जा सके और यह देखा जा सके कि वे बिक्री-अथवा अन्य-आमदनी के जरिये के प्रतिकूल तो नहीं जा रहे हैं। इस मतलब से उन्हें नीचे लिखी चार श्रेणियों मे विभाजित

करके उनका खुलासा बनाना चाहिये :—

(अ) बिक्री सम्बन्धित खर्चे—इस श्रेणी में निम्नलिखित खर्चे हो सकते हैं, जैसे :—

१—विक्रेताओं के वेतन तथा अन्य खर्चे।

२—विज्ञापन आदि के खर्चे।

३—एजन्ट का कमीशन तथा अन्य खर्चे, दलाली आदि।

४—बिके माल की ढुलाई, रेलभाड़ा आदि।

५—बिके माल की पैकिंग के खर्चे।

६—बिक्री-कर (सेल-टैक्स)

७—बिक्री सम्बन्धी अन्य खर्चे।

(आ) बिक्री के माल (Goods) सम्बन्धी खर्चे—इसमें नीचे लिखे खर्चे सम्मिलित हैं :—

१—स्थानीय खरीद, (आवश्यकतानुसार ब्योरे अथवा विभाग सहित)

२—बाहरी खरीद।

३—चुंगी।

४—किराया रेल, ढुलाई। आदि

(इ) उत्पादन (Manufacturing) के खर्चे—ये इस प्रकार हो सकते हैं, जैसे :—

१—कच्चा माल (आवश्यकतानुसार वस्तु का नाम सहित)

२—रसायन (Chemicals) जो माल तैयार करने में लगते हों।

३—बनवाने की मजदूरी (आवश्यकतानुसार विभाग सहित)

४—विद्युत शक्ति (Power, Electricity etc), कोयला, तेल इत्यादि जो मशीनरी को चलाने में खर्च होते हैं।

५—पैकिंग, केसिंग, लेबिल आदि लगाने के खर्चे।

६—अन्य उत्पादन सम्बन्धी खर्चे (आवश्यकतानुसार)

(ई) ऊपरी खर्चे (Overheads) इस श्रेणी में निम्नलिखित खर्चे सम्मिलित हैं :—

दफ्तर सम्बन्धी (१) व्यवस्थापक का वेतन तथा अन्य खर्चे।

(२) दफ्तर व दूकान के अन्य कर्मचारियों के वेतन व अन्य खर्चे।

(३) उसमें प्रयोग में आने वाली रोशनी, पंखा आदि के खर्चे।

(४) स्टेशनरी।

(५) तार, चिट्ठी आदि पर डाक व्यय।

(६) दूकान आदि का किराया।

(७) फ़र्निचर।

(८) माल में लगे धन पर ब्याज।

(९) छीजन (फ़र्निचर, मकान आदि की)

कारखाने सम्बन्धी (१) फोरमैन आदि का वेतन व अन्य खर्चे,

(२) स्टाक-रूम सम्बन्धी खर्चे,

(३) मशीनरी आदि की छीजन,

(४) ब्याज,

(५) मुतफर्रिक खर्चे।

उपरोक्त हर एक विभाग के खर्चों का अलग अलग अथवा

विभाग सहित जोड़ लगाकर देखते रहना चाहिये कि वह बिक्री धन अथवा बने माल के अनुकूल है या नहीं। यदि नहीं हो तो उन्हें कम करने अथवा बिक्री बढ़ाने के उपायों को सोचकर उन्हें तत्काल काम में लाना चाहिये। कारखानेदार को यह भी देखते रहना चाहिये कि बने माल की प्रति संख्या (unit) में कितना खर्च पड़ रहा है और उसमें छीजन, ब्याज, मुनाफ़ा आदि जोड़कर देखना चाहिए कि जिस दर से वह बिक रहा है या बिकना चाहिये उसमें उसे उचित लाभ हो रहा है या नहीं।

यदि किसी मद या विभाग का खर्च अधिक नहीं है और उसे अलग रखकर जाँचने की आवश्यकता प्रतीत न होती हो तो उसे उसके अन्य मुख्य विभाग या मद के साथ जोड़कर काम चलाना चाहिये, क्योंकि बिना विशेष कारण के अलग अलग विभाग या मद के खर्चों का जोड़ अलग अलग निकालने से कोई लाभ न होकर हिसाब का काम फ़िजूल बढ़ता है जो कि बचाना चाहिये।

(३) पर्चामाल—

जो माल खरीदा जावे उसके साथ उसका पर्चा जरूर आना चाहिए। उसको जाँचकर आई हुई चीज़ से मिलाना चाहिये और तत्काल उसके अनुरूप हिसाब की किताब में उसे ब्योरेवार या संक्षेप में, जैसा उचित समझे, दर्ज करना चाहिये और उसके ऊपर इस सम्बन्ध का एक नोट कर देना चाहिये ताकि वह फिर उसमें दुबारा न दर्ज होने पावे। यदि उसका भुगतान उसी समय हुआ हो तो उसको कैश-बुक मे दर्ज करके उस पर "PAID"

की तारीख सहित मुहर लगा देनी चाहिये अथवा उस पर हस्ताक्षर सहित इस प्रकार का एक नोट कर देना चाहिये। यदि चिक द्वारा भुगतान किया हो तो सुविधानुसार चिक का नम्बर व तारीख भी दर्ज कर देना चाहिये और पानेवाले के हस्ताक्षर भी उचित रूप से रसीद लिखवाकर ले लेना चाहिये। फिर उसे तत्काल ही स्टाक रजिस्टर में दर्ज कर लेना चाहिये। यदि उसका भुगतान बाद में करना हो तो स्टाक रजिस्टर में दर्ज करने के पहले उसे खरीदारी रजिस्टर (Purchases Book) में दर्ज करना चाहिये। जब बाद में उसका भुगतान करे तो उससे सम्बन्धित खरीदारी रजिस्टर में जो एन्ट्री (entry) की गई है उसके समक्ष में उसका भुगतान सूचक एक नोट तारीख सहित लिख देना चाहिये, ताकि उसका दुबारा भुगतान गलती से न हो जावे। यह कार्य जहाँ तक हो सके भुगतान करने के शीघ्र पहले ही कर देना चाहिये। ऐसा न करने से कभी कभी नोट करना छुट जाकर उसी खरीद का दुबारा भुगतान हो जाने का भय रहता है। साथ साथ माल के साथ आये हुये पर्चे पर भी उसके भुगतान करने का उचित नोट कर देवे और दाम पानेवाले के उस पर हस्ताक्षर ले लेवे, अथवा उसकी रसीद उसमें नत्थी कर देवे या चिपका देवे। इस प्रकार बचाव करने से उसी माल का दुबारा भुगतान होने की संभावना बहुत कम हो जाती है। यदि हरएक खरीद का हिसाब लैजर में भी रखा जाता हो, जैसा कि प्रायः किया जाता है, औरनियमानुकूल होना भी चाहिये, तो भुगतान करने का नोट खरीद की किताब में दर्ज करने की जरू-

रत नहीं है। भुगतान करते समय कैश-बुक में माल के पर्चे अथवा बिल के नम्बर व तारीख का पूरा पूरा हवाला तथा माल का संक्षिप्त ब्योरा अवश्य दर्ज करना चाहिये। कैश-बुक व्यापारी की सबसे अधिक महत्व की किताब होती है, इसलिये उसे जहाँ तक हो सके संक्षिप्त और आवश्यक ब्योरे सहित साफ़ साफ़ लिखते जाना चाहिये। इसमें जितनी अधिक व्याख्या सहित लेने या देने वाली रकमों का ब्योरा लिखा जावेगा उतनी ही बाद में सुविधा होती है। अधिक व्याख्या जो किसी दूसरे रजिस्टर में दर्ज हो वह इसमें न लिखकर उसका केवल हवाला मात्र ही दर्ज कर देना काफी है। फिर भी ऐसी व्याख्या जो दो या तीन पंक्तियों में आ सकती हो उसमें दर्ज करने से नहीं चूकना चाहिये।

(४) खरीदारी व बिक्री रजिस्टर और कैश-बुक—

खरीदारी रजिस्टर अथवा बिक्री रजिस्टर में वही व्याख्या दर्ज करनी चाहिये जिसकी कि आगे का हिसाब रखने या मिलाने में ज़रूरत हो। यदि केवल बिल या इनवास (Invoice) का हवाला दर्ज करके संक्षेप रूप से इसमें माल का नाम लिख देवे और बाकी ब्योरा Stock Book या Stock Ledger में दर्ज करे तो भी ठीक होगा। सुविधा और समय की बचत दोनों ही का ख्याल करके हिसाब रखना चाहिये। यदि थोड़ा सा अधिक समय या स्थान खर्च होने से बाद में अधिक सुविधा होती हो, तो तत्कालीन समय या स्थान

की किफ़ायत नहीं करनी चाहिये। विक्री की किताब (Sales Book) में प्रायः वही बिक्री दर्ज करनी चाहिये जो नकद न की गई हो। नकद विक्री हरएक विभाग के कैश-मीमो (Cash Memo) के जोड़ों के अनुसार विभाग अथवा माल के संक्षिप्त ब्योरे सहित कैश-बुक ही में रोज दर्ज करनी चाहिये। यह कार्य दिन के अन्त में रोज हो जाना चाहिये और कैश-बुक का हिसाब बन्द करके उस रोज का नकद बकाया गिनकर कैश-बुक के बकाया से मिलाना चाहिये। यदि किसी कारण कैश-बुक का हिसाब रोज बन्द किया जाना ज़रूरी न समझा जावे, जैसा कि कारखाने आदि की दशा में होता है, तो जिस दिन हिसाब बन्द न किया जावे उस दिन का नकद बकाया (रोकड़ बाकी) जो कैश बुक के अनुसार होता हो अपने कैश-बोक्स (Cash Box) के बकाया धन से मिलान करके कैश-बुक के अन्दर के खाने में उसे दर्ज करते जाना चाहिये या किसी अलग पर्चे पर नोट करते जाना चाहिये, ताकि जब कभी तीसरे या चौथे दिन कैश-बुक का हिसाब बन्द किया जावे नकद बकाया मिलाने में कठिनाई न हो।

यदि उपरोक्त नित्य और तत्कालीन लिखी जाने वाली हिसाब की मौलिक किताबें (Books of original entries) कर्मचारी द्वारा रखी जाती हों तो मालिक अथवा मुख्य संचालक को चाहिये कि वह उन्हें नित्य प्रति एक नियत समय व स्थान पर जांचता रहे, और उन्हें जांच कर उन पर अपने हस्ताक्षर तारीख सहित करता रहे।

(५) लैजर और जरनल—

लैजर जिसको हिन्दुस्तानी हिसाब में खाता कहते हैं इस प्रकार लिखा जाना चाहिये कि उसके द्वारा पता चलता रहे कि किस समय किस आसामी से कितना लेना या उसको कितना देना है। इसलिये उसे अन्य उपरोक्त किताबों से यथासमय लिखते रहना चाहिये। इसमें हरएक मद या आसामी का एक हिसाब अलग होता है जिससे कि मालूम होता रहता है कि उसके हिसाब मे कुल कितना नाम और कितना जमा हुआ है, और कितना बकाया निकलता है। व्यापारी के लिये यह भी बड़े महत्व की किताब है। उसे चाहिये कि इसका खुलासा बनवाकर बराबर देखता रहे और अपने व्यापार की रक्षा सम्बन्धी कार्यवाही उसके द्वारा करता रहे। जिस प्रकार कैश-बुक के नाम व जमा की दोनों तरफों के जोड़ उसके प्रति दिन के शुरू और अन्त के बकाया सहित मिलकर देखने से उसके ठीक-ठीक लिखे जाने का प्रमाण मिल जाता है इसी प्रकार लेजर की नाम व जमा के खानों में दर्ज की हुई रक़मों का बकाया या जोड़ Trial Balance का नकशा बनाकर देखने से उनके ठीक होने का प्रमाण मिल जाता है। क्योंकि हरएक नक़द व्यवहार कैश-बुक में रुपये के हिसाब में नाम व जमा किया जाता है और उसके देने या लेने वाले के हिसाब में लैजर द्वारा विपरीत खानों में दर्ज होता है। इसी प्रकार हरएक माल जो लिया या दिया जाता है उसका दाम माल के हिसाब में नाम या जमा होता है और देने या लेने वाले के हिसाब में वही रकम जमा या नाम

में डाली जाती है। इस प्रकार रुपये और माल के लेजर में रखे हिसाबों के नाम व जमा की रकमों का जोड़ (अथवा उनका बाकी) एक दूसरे के जोड़ या बाकी से मिल जाना चाहिये।

लैजर में बहुत सी रकमें ऐसी भी दर्ज करने की आवश्यकता पड़ती है जो उपरोक्त तत्कालीन लिखी जानेवाली किसी किताब में दर्ज न की गई हों। इस प्रकार की रकमों को हिसाब में सम्मिलित करने के लिये जो किताब व्यवहार में लाई जाती है उसे जरनल (Journal) कहते हैं। इस किताब में तारीख व ब्योरे सहित नाम व जमा के मद के अलग अलग खाने होते हैं। उन्हें उचित रूप से लिखकर उनमें लिखित हरएक नाम व जमा की रकम उसके अनुरूप हिसाब लेजर में दर्ज की जाती है ताकि उसमें लिखित नाम व जमा की रकमों के जोड़ या बकाया में फर्क न पड़े। इसमें जिस प्रकार की रकमें लिखी जाती हैं उन्हें दृष्टान्त रूप से नीचे लिखा जाता है:—

(अ) यदि कोई नुकसान हो जावे या रकम वसूल न हो, लेकिन उसे हिसाब में शामिल करना हो तो उसे इस किताब के द्वारा लैजर में नाम व जमा करेंगे।

(आ) यदि कोई रकम देनी या लेनी हो लेकिन वार्षिक हिसाब बन्द करते समय तक वह दी या ली न गई हो, पर उसे उसी वर्ष के हिसाब में सम्मिलित करना हो, जैसे किराया दूकान, ब्याज आदि, तो उसको इस किताब द्वारा हिसाब में सम्मिलित करेंगे।

(इ) माल, फ़र्निचर या मशीनरी की छीजन आदि जो वर्ष

के हिसाब में सम्मिलित करनी होती है, उसको भी इसी किताब के द्वारा वार्षिक हिसाब में सम्मिलित करेंगे।

(ऊ) ऐसे माल की रकमें जो बिकते समय या लेते समय बिक्री या खरीदारी रजिस्टर में दर्ज नहीं की जा सकी हैं, या उनका दाम लेना या देना वर्ष के अन्त में बाकी हो। इत्यादि।

(६) स्टाक-बुक और स्टाक व स्टोर लैजर—

ये दोनों किताबें माल का दाम सहित अथवा बिना दाम के केवल उसकी संख्या या मात्रा का हिसाब रखने के काम में आती हैं। यदि हरएक चीज का आने और निकालने या खर्च करने का हिसाब अलग अलग रखना हो तो उपरोक्त वर्णित कैश लैजर की भाँति हरएक माल का एक अलग हिसाब उसमें रखना होगा और जैसे ही कोई माल आए उसको उसी समय उसके हिसाब मे नाम डालना और उसके निकाले जाने की दशा में खर्च की तरफ जमा करना होगा। साथ साथ या मास के अन्त में हर चीज के हिसाब की बक़ाया निकालनी होगी। इस प्रकार किसी भी समय इस स्टाक लैजर द्वारा यह देखा जा सकता है कि किस चीज का कितना बकाया है और वह वास्तविक बकाया से मिलता है या नहीं। कैश-बुक की भाँति ऐसा करने के लिये स्टाक-बुक में हरएक माल की आमदनी व खर्च उसकी आने या जाने की तारीख सहित व्योरेवार लिखते जाते हैं। इसके आधार पर बाद में स्टाक-लैजर पोस्ट किया जा सकता है। यदि बिक्री और खरीद की गई वस्तु की हरएक एन्ट्री (entry) उसके अनुरूप किताबों (Sales Book

and Purchases Book) में दर्ज की गई हों तो यह लैजर उनसे भी सीधा लिखा सकता है। साधारण बोलचाल में स्टाक-लैजर को ही स्टाक-बुक कहते हैं और जहाँ दोनों प्रकार की किताबें नहीं रखी जातीं वहाँ केवल स्टाक-बुक का ही प्रयोग होता है।

स्टाक-बुक में ऐसी चीजें भी दर्ज होती हैं जिनकी आमदनी व खर्च आये दिन नहीं होता रहता, बल्कि वह प्रयोग में आती रहती हैं; और जब तक छीजकर नष्ट होने की अवस्था में नहीं आ जातीं या अन्य प्रकार से अन्तिम बार समाप्त नहीं हो जातीं तब तक उनकी संख्या की जाँच के लिये उन्हें स्टाक-बुक में दर्ज किया जाता है—जैसे मशीनरी, फर्निचर आदि।

प्रत्येक बड़ी मशीनरी का एक रजिस्टर अलग भी होना चाहिये जिसमें हरएक मशीन का पूरा पूरा व्योरा, बनाने वाले कारखाने का नाम, उसकी योग्यता, नम्बर, पावर, दाम, आदि लिखा जाय। उसके प्रयोग में लाई जाने की तारीख (कब से कब तक) और किस प्रकार उसने काम दिया, किस किस ने उसे चलाया, कब कब और कैसी कैसी मरम्मत उसकी हुई इत्यादि। यह सब लिखते जाने से एक दूसरी मशीन का अपेक्षाकृत ज्ञान ठीक ठीक रूप से होता रहेगा।

नोट—ऐसी चीजें जो बिकने वाली नहीं होतीं उनके तथा अन्य सब प्रकार के प्रयोग में आने वाले माल के लिये शब्द "स्टोर" (स्टोर बुक, स्टोर-लैजर या स्टोर-गोदाम आदि) प्रयोग में आता है, लेकिन बिकने वाले माल के लिये उचित शब्द "स्टाक"

का ही प्रयोग होता है।

(७) अन्य हिसाब किताब—

उपरोक्त मुख्य हिसाब की किताबों के अतिरिक्त एक व्यापारी को अपनी आवश्यकतानुसार कुछ और रजिस्टर भी रखने होते हैं, जैसे (१) अलग अलग गोदाम के अलग-अलग स्टाक रजिस्टर, (२) गोदाम से बने माल निकलने और अन्य स्थान मे भेजने, का अथवा कारखाने में खर्च होने वाले माल का अलग अलग रजिस्टर (३) माल बनने और उसमें कच्चा माल लगाने के संबन्ध मे रजिस्टर (४) माल रेल द्वारा बाहर भेजने का रजिस्टर (५) आर्डर रजिस्टर (६) बंक रुपया आदि भेजने या वहाँ से रुपया मंगवाने का रजिस्टर, इत्यादि। जैसा बड़ा या छोटा काम हो उसी के अनुसार रजिस्टर हिसाब रखने अथवा जाँच पड़ताल करने के लिये खोल देने चाहियें। इनके न होने से जो हानि या असुविधा होती रहती है वह उनके रखने के खर्च या परिश्रम से कहीं अधिक है। क्योंकि इन रजिस्टरों का तात्पर्य केवल हिसाब रखना ही नहीं होता, बल्कि मुख्य उद्देश्य उनसे सम्बन्धित काम करने वाले कर्मचारियों की जिम्मेदारी निर्धारित करना और उन्हें सचेत रखना होता है। इस अभि-प्राय से जहाँ जरूरत हो उनके हस्ताक्षर लेने व अपने करते रहने का भी प्रबन्ध होना चाहिये।

माल बनाने अथवा बने माल के आर्डर आने पर उसके अनुसार सपलाई करने के लिये नीचे लिखे रजिस्टर प्रयोग में लाये जाने चाहियें। यह रजिस्टर एक साधारण या छोटे कारखाने

के लिये सुविधापूर्वक प्रयोग में लाये जा सकने हैं:—

(अ) माल बनाने का रजिस्टर—इसमें इस प्रकार के खाने होने चाहियें—

१—तारीख

२—क्रम संख्या ३—किस के आर्डर से अथवा किसके लिये बनाया।

४—लगने वाले कच्चे माल का व्योरा (जो माल बनाने के लिये प्राप्त हुआ हो), कहाँ से, और कितना।

५—कच्चा माल पाने वाले के हस्ताक्षर।

६—पिछला कच्चा अथवा अध-बना माल जो बनाने से बचा हो।

७—कुल कच्चा माल जो उस रोज हाथ में था (हर प्रकार के कच्चे माल का जोड़ अलग-अलग होना चाहिये)।

८—क्या और कितना नया माल बना, (यदि यह कई प्रकार का हो तो हर प्रकार की अलग अलग संख्या अथवा अन्य व्योरे सहित)।

नोट—तैयार माल और अध-बने माल के लिये व्योरा और जोड़ के खाने प्रथक रूप से होने चाहियें।

९—कच्चा अथवा अध-बना माल कितना लगा।

नोट—यदि अधबने माल का अलग रजिस्टर खोल दिया जावेगा तो अधिक सुविधा होगी।

१०—बने माल का निपटारा (स्टाक-रूम में भेजने के पर्चे के हवाले सहित)।

११—माल पाने वाले के हस्ताक्षर।

१२—अन्य व्योरा

नोट १—अधिक सुविधा के लिये यदि हर एक लाट (lot) अथवा हर एक चीज़ जो कारखाने में बने उसका हिसाब अलग रखना होगा। लेकिन यदि एक ही प्रकार का काम अधिक संख्या में प्रायः बनाया जाता हो तो उपरोक्त वर्णित खानों के रजिस्टर से अच्छा काम चल सकेगा।

नोट २—यदि कच्चा और बना माल लेने और पानेवाले अलग अलग व्यक्ति हों, तो उनके माल लेने व देने के लिये अलग अलग रजिस्टर तथा पर्चों का व्यवहार होना जरूरी है। इन पर्चों की एक एक नकल दोनों व्यक्तियों के पास अलग अलग रहना चाहिये, ताकि बाद में कमी बेशी एक दूसरे की जानकारी के बिना न की जा सके।

(ब) आर्डर और सपलाई (supply) रजिस्टर—यह रजिस्टर ऐसी अवस्था में प्रयोग में आता है जब कि आर्डर आने पर माल बनवाकर अथवा बना माल डाक अथवा रेल द्वारा बाहर भेजा जावे, और उसका रुपया माल के लेने वाले से तुरन्त वसूल न होकर माल के पाने पर कुछ दिन बाद वसूल हो। इसमें निम्न प्रकार के खाने हो सकते हैं।

१—तारीख (आर्डर पाने की)।

२—क्रम संख्या।

३—आर्डर देने वाले का नाम व पता।

४—किसके द्वारा आर्डर आया (एजन्ट आदि का नाम)।

५—किस माल का आर्डर आया।

६—माल भेजने की तारीख।

७—पेटी अथवा गांठ की संख्या (जो भेजी गई हो)

८—किस प्रकार भेजी गई (डाक द्वारा, माल गाड़ी अथवा सवारी गाड़ी से)

९—बिल्टी किसके नाम बनी।

१०—बिल्टी का नम्बर (व्योरे सहित)

११—बिल्टी में लिखी तोल

१२—किराया

१३—बिल नम्बर और तारीख।

१४—बिल तथा बिल्टी किस बंक आदि द्वारा भेजी गई।

१५—किस बंक से उसका भुगतान होना है।

१६—डाकखाने की रसीद नम्बर व तारीख।

१७—बिल की रकम।

१८—रकम जो वसूल हुई।

१९—तारीख वसूल पाने की।

२०—रुपया, चिक व ड्राफ्ट आदि पाने वाले के हस्ताक्षर।

२१—अन्य व्योरा।

नोट १—यदि रुपया पानेवाला, कैश-बुक या रोज-नामचा रखने वाले से कोई दूसरा व्यक्ति हो तो उसे रुपया पाते ही इस रजिस्टर पर तुरन्त अपने हस्ताक्षर कर देने चाहियें। हर एक आर्डर आते ही उसे रजिस्टर में तत्काल दर्ज करना चाहिये, और बाद में बिल भेजते समय उसका पूरा व्योरा इस में दर्ज

करना चाहिये वरना छूट जाने के बाद में बड़ी गड़बड़ी पड़ सकती है।

नोट २—इस रजिस्टर को संचालक को सदा जाँचते रहना चाहिये ताकि उसको मालूम होता रहे कि कौन कौन से आर्डर का माल अभी जाना बाकी है और कहाँ कहाँ से रुपया आना है। यदि किसी सपलाई का रुपया आने में देर हो रही हो तो उसको शीघ्र वसूलने के लिये उचित कार्रवाई करनी चाहिये। पुरानी बाकी के बारे में याद-दहानी के पत्र लिखने में बड़ी सचेतता से काम लेना चाहिये। इस काम के लिये छपे हुये पत्र प्रयोग मे लाने से सुविधा होती है।

नोट ३—हर एक आर्डर मिलते ही उसको इस रजिस्टर में दर्ज करके इसकी क्रम संख्या तारीख सहित उसके ऊपर दर्ज कर देनी चाहिये, और आर्डर भेजने वाले को भी उसके आर्डर की पहुँच तथा माल भेजने की अनुमति तारीख सूचित कर देना चाहिये। इस कार्य के लिये भी छपे पत्रों का ही व्यवहार करना उचित होगा।

(८) बिल, कैश-मीमो, इनवायस (Invoice) आदि—

यह फ़ार्म तथा उनसे संबन्धित शर्तें, कुछ विज्ञापन सहित, अपनी सुविधा तथा व्यवस्था के अनुसार उचित रूप से अच्छे कागज और अच्छे छापेखाने में छपवाकर प्रयोग में लाना चाहिये।

यदि माल रेल या डाकखाने से गया हो और बिल तथा बिल्टी बंक या वी० पी० द्वारा, तो एक प्रति बिल की सीधी भी

ग्राहक के पास भेजना चाहिये ताकि उसे मालूम हो जावे कि वह जो बिल्टी या वी० पी० छुटा रहा है उसके अनुरूप क्या क्या माल है और उसके क्या क्या दाम लगाये गये हैं।

(६) हिसाब जाँचने की विधि--

हिसाब जाँचने का एक निश्चित समय नियत कर लेना चाहिये। यह समय ऐसा होना चाहिये जब कि शान्तिपूर्वक उसकी ओर ध्यान दिया जा सके। यदि स्वयं उसे रोज जाँचने का अवकाश न मिलता हो तो यह कार्य किसी सहायक उच्च कर्मचारी अथवा संचालक द्वारा कराना चाहिये। ऐसी अवस्था में मालिक अथवा मुख्य संचालक को महीने मे एक या दो बार सब आँकड़े जरूर जाँचते व देखते रहना चाहिये। साथ साथ उनके आधार पर बने आमदनी व खर्च और बकाया के नकशों को भी जाँचते रहना चाहिये, और पिछले वर्षों तथा महीनों के आँकड़ों से उनकी तुलना करते रहना चाहिये। वार्षिक हिसाब के बन्द होने के नियत समय के अन्दर नफ़ा व नुकसान के आंकड़ों को जाँच कर अपने व्यापार अथवा कारखाने की चाल को देखते व समझते रहना चाहिये ताकि यदि उसमे कोई सुधार की आवश्यकता हो, अथवा कहीं घाटे का डर हो तो उसकी ओर तुरन्त ध्यान दिया जा सके। यदि कभी यह ज्ञात हो कि खर्चे आमदनी से या बिक्री के लिहाज़ से अधिक बढ़े हुये हैं, जो कि कम किये जा सकते हैं, तो उन्हे कम करने मे हिचकिचाहट अथवा किसी प्रकार की अवहेलना नहीं करनी चाहिये।

यदि यह भी प्रतीत हो कि व्यापार की बराबर उन्नति में

लेशमात्र की शंका नहीं है तो भी व्यापारी को अपना हिसाब बराबर जाँचते रहना चाहिये। बिना इसके तो काम चल ही नहीं सकता, क्योंकि ऐसा न करने से यदि उसका लिखना ही कभी पिछड़ जाता है, तो बाद में उसको पूरा करना दिन प्रति दिन कठिन होता जाता है, और अधिक पिछड़ जाने से तो कभी कभी पूरा करना असम्भव ही हो जाता है। इसके अतिरिक्त जाँचते समय बहुत सी बातों में केवल स्मृति ही काम देती है जो कि अधिक समय बीतने पर लोप हो जाती है और फिर किसी छुटी हुई या त्रुटिपूर्ण रकम को पकड़ना बिलकुल ही असम्भव हो जाता है।

हिसाब बराबर जाँचते रहने से उसमें त्रुटि नहीं रहने पाती, और लेने व देने वाली रकमें हमेशा ध्यान में रहती हैं। और साथ साथ उनको वसूल करने या देने का प्रबन्ध भी सन्तोषजनक रूप से किया जा सकता है। ऐसा न करने से वह पुरानी पड़कर नुकसान का कारण बन जाती हैं।

प्रति दिन हिसाब जो लिखा जावे वह उन्हीं कागजों अथवा लेन देन के पर्चों आदि के सहारे जांचना चाहिये जिनके आधार पर वह लिखा या बनाया गया हो। हर एक हिसाब जिसमें नाम व जमा दोनों तरफें हों उनकी बकाया सहित उनके जोड़ एक दूसरे से मिलते रहना चाहियें। कैश-बुक की जांच करते समय चिक-बुक के काउन्टर फ़ायल और बंक की जमा की कापी से मिलान करते जाना चाहिए, यह देखने के लिये कि जो लेन व देन बंक के द्वारा हुये हैं वह उनमें लिखित रकमों से मिलते

हैं या नहीं। साथ साथ यह भी देखना चाहिये कि जो रकम बेंक आदि में जमा हुई है उसकी जमा की कापी के पर्चों पर बेंक की मुहर तथा उसके अधिकारी के हस्ताक्षर हो गये हैं या नहीं। इसी भांति आई हुई रकमों को उनसे सम्बन्धित कागजों अथवा जमा व नाम के वाउचरों (vouchers) से मिलाना चाहिये। फिर अपने पास की रोकड़ बाकी से कैश-बुक की बाकी को मिलाना चाहिये। जब यह मिल जावे तब समझना चाहिये कि नकद आमदनी व खर्च का हिसाब जो कैश-बुक में दर्ज है ठीक है। बेंक की पास-बुक से कैश-बुक के बकाया को मिलाने की रीति के लिये आगामी १६ वां अध्याय देखें।

(१०) वार्षिक गणना (Stock-taking)—

यह काफ़ी नहीं है कि सब स्टाक वर्ष के अन्त में ही वार्षिक हिसाब बन्द करते समय जांचा और उसके किताबी बकाया से मिलाया जाय, बल्कि मालिक तथा व्यवस्थापक को कभी कभी हर एक माल का बकाया उसके हिसाब की किताब से मिलाते रहना चाहिये, ताकि उसकी कमी या बेशी बीच में भी दृष्टि-गोचर होकर उसको ठीक करने व कराने का प्रबन्ध किया जा सके, अथवा उसके अनुरूप आगे के लिये उचित प्रबन्ध किया जा सके। यदि सब स्टाक एक साथ न गिना जा सके तो कम से कम मूल्यवान अथवा मुख्य मुख्य चीजों की जांच इस प्रकार बराबर करते रहना चाहिये।

वार्षिक हिसाब बन्द करते समय हर एक चीज को गिनकर अथवा नाप व तौल कर उसका एक चिट्ठा अलग बना लेना

चाहिये, ताकि उसे उसके हिसाब की किताब से मुकाबला कर के उसके आधार पर नफा व नुकसान के आंकड़े बनाये जा सकें। यदि सब स्टाक एक साथ न गिना व जांचा जा सके, तो हिसाब बन्द करने की तारीख से कुछ दिन पहले ही कम बिकने या खर्च होने वाली चीज़ों की गणना या तौल आदि करके उन्हें उनकी गणना की तारीख सहित वार्षिक गणना के चिट्ठे में दर्ज करले फिर बाद में निकली या बिकी हुई मात्रायें उसमें से घटा कर वार्षिक गणना कर लेनी चाहिये।

इस प्रकार चिट्ठा तैयार हो जाने पर तथा उसको स्टाक-रजिस्टर के अनुसार बकाया के अंकों से मिलाने के बाद उसमें लिखी हुई प्रत्येक वस्तु का मूल्य इस प्रकार दर्ज करना चाहिये कि उस पर लगी रकम उस के उस समय लेने के बाजार-भाव से अधिक न हो। कारखाने की दशा में यह रकम उसको बिना मुनाफ़ा लिये बेचने की रकम से अधिक न हो। ऐसा करते समय उसके सम्बन्धित जो बिक्री के खर्चे, जैसे एजन्ट का कमीशन या ढुलाई अथवा रेल भाड़ा आदि पड़ते हों वह भी उसके बिकने की दर मे से घटा कर उसकी दर नियत करनी चाहिये, ताकि कोई अंश मूल्य में ऐसा न सम्मिलित हो पावे जो उसके बिना बिके ही वार्षिक मुनाफ़े की रकम को बढ़ा दे।

उपरोक्त गणना का चिट्ठा बनाते समय ऐसी चीजें जो बिक्री के लिये न हों, जैसे मशीनरी, फर्निचर आदि, उनका चिट्ठा अलग बनाना चाहिये, और उसके स्टाक रजिस्टर के अनुसार हर एक चीज़ की बकाया को मिला लेना चाहिये, ऐसी चीज़ों

की मूल्य सहित सूची बनाने की आवश्यकता नहीं है। हाँ यदि कोई चीज़ वर्ष के अन्दर टूट फूट गई हो या खो गई हो तो उसके अनुसार स्टाक रजिस्टर के बकाया को व्योरे सहित ठीक कर लेना चाहिये, और नुकसान की रकम, यदि वह वार्षिक छीजन से अधिक हो, तो उसकी जर्नल द्वारा एन्ट्री करके वार्षिक हिसाब में नुकसान दिखाना चाहिये।

उँपरोक्त वर्णित बिकने वाले स्टाक का चिट्ठा उसी दशा में स्टाक-बुक के हर चीज़ के बकाया से मिलाया जा सकता है यदि स्टाक-रजिस्टर रखा गया हो, वरना गणना का मूल्य सहित केवल चिट्ठा बना कर वार्षिक हिसाब पूरा करना चाहिये। यह हर दशा में नितांत आवश्यक है कि वार्षिक हिसाब बन्द करने की निश्चित तिथि के ऊपर यह चिट्ठा जरूर बन जाय, वरना वार्षिक हिसाब नहीं बन सकेगा।

(११) बने माल का चिट्ठा (Production statement)—

वार्षिक हिसाब बनाते समय कारखाने की दशा में यह भी आवश्यक होगा कि जो माल वर्ष के अन्दर बना है उसकी मूल्य सहित एक सूची बनाई जाय। यह सूची माल बनाने के रजिस्टर से बनाई जा सकेगी। जिस जिस प्रकार का माल जितना जितना वर्ष के अन्दर बना है उसे जोड़ कर एक फ़िहरिस्त बना लेनी चाहिये। बाद को उस के मूल्य के आँकड़े इस प्रकार उसमें दर्ज कर के कुल मूल्य का जोड़ निकालना चाहिये ताकि यह देखा जा सके कि गत वर्ष कितने का माल बना। इस सूची में हर प्रकार के माल की दर जो दर्ज की जाय

वह भी किसी प्रकार के ऐसे खर्च सहित न हो जो उस माल के बिना बिके ही उस पर लग जायें।

इस प्रकार के चिट्ठों के आधार पर हम माल बनाने के हिसाब (Manufacturing account) द्वारा यह देख सकेंगे कि गत वर्ष कितने खर्च में कितने का माल बना। जिससे कि यह ज्ञात हो सकेगा कि माल बनाने में कितना नफ़ा अथवा नुकसान हुआ।

(१२) वार्षिक हिसाब—

हर एक व्यापारी को चाहिये कि वह एक निश्चित तारीख को वार्षिक हिसाब बन्द करके देखे कि उसे गत वर्ष कितना लाभ अथवा घाटा हुआ। ऐसा करने के लिये उसे कुछ वार्षिक हिसाब बनाने पड़ते हैं। सुविधा के लिये ऐसे हिसाबों का एक लैजर अलग होना चाहिये जिसमें व्यापार में लगी पूँजी, उधार ली हुई रकमें, खरीद व बिक्री किया हुआ माल अथवा अन्य प्रकार के माल व, फर्निचर आदि में लगे धन का हिसाब रहे। साथ साथ ऐसे खर्चों का हिसाब भी इसी में रखना चाहिये जिन पर व्यापार का नफ़ा नुकसान निर्भर रहता हो। यदि कारखाना या मिल आदि का हिसाब बनाना हो तो उससे संबन्धित कच्चे माल, मजदूरी और तैयार माल आदि के हिसाब भी होने चाहिये। इन हिसाबों के आधार पर वर्ष के अन्त में नफ़ा-नुकसान (PROFIT & LOSS ACCOUNT) और व्यापार की परिस्थिति का नकशा (BALANCE SHEET) बनाकर देखना चाहिये कि गत वर्ष व्यापार का

क्या फल हुआ। यह कार्य एक निश्चित तारीख तक जरूर समाप्त हो जाना चाहिये, क्योंकि वार्षिक फल यदि बहुत देर में मालूम हुआ तो उस बीच में जो गलत रास्ते पर व्यापार चल रहा था उसमें सुधार न होकर घाटा होता रहता है।

वाषिक फल मालूम करने के लिये जो दो मुख्य हिसाब बनाये जाते हैं उन्हें नफ़ा-नुकसान का हिसाब और व्यापारिक परिस्थिति का नकशा (Profit & Loss A/c and Balance Sheet) के नाम से संबोधित करते हैं। ये दो हिसाब अन्य श्रेणी के हिसाबों के, जो कि माल तथा अन्य आमदनी व खर्चों के रखे गये है, आधार पर बनाये जाते हैं, और ये उन सबके निचोड़ कहे जा सकते हैं क्योंकि इनके द्वारा पता चलता है कि किस किस मद्द में कितना कितना खर्च तथा आमदनी हुई है और निखर्चा मुनाफ़ा कितना हुआ है और वर्ष के अन्नतर व्यापार किस दशा में था। उसे कितना और किस किस से कितना लेना या देना था। उसकी पूंजी कहाँ कहाँ किस किस मद्द में, और कितनी लगी हुई है। वर्ष के अन्त में व्यापार की कितनी उन्नति हुई अथवा कितना घाटा हुआ। उसका व्यापार किधर जा रहा है और नफ़े तथा नुकसान के क्या क्या कारण हैं।

इस अवसर पर व्यापारी को हर आँकड़े जो उसके उपरोक्त हिसाबों में दिखाये गये हों ध्यान से देखना चाहिये कि उनमें कौन कौन से ऐसे हैं जो व्यापार को खतरे में डालने वाले हैं, अथवा अनुचित होने के कारण कम किये जा सकते हैं या

बिल्कुल रोके जा सकते हैं। यदि बिक्री के अनुकूल मुनाफ़ा नहीं हुआ है और खर्चे भी अधिक नहीं हुये हैं तो ये इस बात के सूचक हैं कि कहीं न कहीं चोरी हो रही है या स्टाक लेने (गणना करने) अथवा उसकी सूची बनाने में कुछ गड़बड़ हुआ है। उसे स्टाक-लिस्ट की मुख्य मुख्य चीजें स्वयं भी जांचनी चाहिये ताकि पता लग सके कि उनमें कहीं गड़ बड़ (कमी व बेशी) तो नहीं हो गई, जिसके कारण निखर्चा मुनाफ़ा बेजा तौर पर घट या बढ़ गया हो। इन सब बातों को ध्यानपूर्वक गंभीरता से देखना व विचारना चाहिये ताकि उनके आधार पर व्यापार रूपी घोड़े को ठीक रास्ते पर लाया या चलाया जा सके।

यदि खर्चे कम करने हों तो वही खर्चे कम करने चाहियें जिनसे कि दूकान या कारखाने में वास्तविक रूप से किफ़ायत हो सके, और साथ साथ उसकी साख में किसी प्रकार का धक्का भी न लगने पावे, क्योंकि हर एक रोजगार की जान उसकी साख ही है, इसी के कारण उसकी उन्नति तथा अवनति होती रहती है। जहाँ तक हो सके जरूरी खर्चों को कम करने के बजाय बिक्री बढ़ाने के उपायों पर विशेष ध्यान देना चाहिये क्योंकि इसी पर सब प्रकार की उन्नति निर्भर रहती है। यदि बिक्री या अन्य मुनाफ़े का काम बढ़ेगा तो कुल मुनाफ़ा आपसे आप बढ़ेगा और उसी से व्यापार की उन्नति होगी

नीचे हम उन हिसाबों के नाम संकेत रूप से लिखते हैं, जो वार्षिक नफ़ा या नुकसान मालूम करने के लिये प्रायः रखे या बनाये जाते हैं—

१—माल खरीदने व बेचने का हिसाब (Goods a/c)—यह हिसाब हर एक चीज़ का अलग अलग भी रखा जा सकता है, यदि उस के आँकड़े अलग मालूम करने हों, अथवा सम्मिलित रूप से भी। इस हिसाब द्वारा वर्ष के कुल मुनाफ़े अथवा घाटे का पता चलता है।

२—कच्चे माल के हिसाब—यह हिसाब हर एक वस्तु का जो माल बनाने में प्रयोग हुई हो अलग अलग होना जरूरी है।

३—हर प्रकार के खर्चों के अलग अलग हिसाब, जिनसे हर एक मद में हुआ खर्चा जाना जा सके।

४—माल बनाने का हिसाब (Manufacturing a/c)—इसके द्वारा यह पता लगता है कि वर्ष में बने कुल माल पर कितना नफ़ा अथवा नुकसान हुआ।

५—मकानियत (Building मैशीनरी, फ़र्निचर आदि के अलग अलग हिसाब।

६—पूँजी (Capital), घर खर्च (Drawings), इत्यादि के अलग अलग हिसाब। यदि रोजगार में कई लोगों का हिस्सा हो तो यह हिसाब हर एक हिस्सेदार के अलग अलग होंगे।

७—नुकसान (Losses) अथवा डूबी हुई (बट्टे खाते) रकमों (Bad debts) के हिसाब।

८—बिक्री (नक़द तथा उधार) का अलग अलग हिसाब।

९—खरीदारी का हिसाब—इसके तथा उपरोक्त वर्णित माल बनाने व बिक्री के हिसाब के आँकड़े "माल खरीदने व बेचने" के

हिसाब (Goods or Trading a/c) में सम्मिलित कर देने होंगे।

१०—मुतफर्रिक लेनदारों तथा देनदारों के हिसाब (Sundry creditors and Sundry debtors)

११—अनिश्चित रक़मों के हिसाब (Suspense a/c)

उपरोक्त हिसाबों के आधार पर ही वर्ष के नफ़ा-नुकसान का हिसाब (Profit and Loss a/c) अथवा व्यापार की परिस्थिति का नकशा (Balance Sheet) बनाये जाते हैं।

अध्याय १६

बेंक (BANK) से हिसाब

(१) लाभ और सुविधायें—

एक व्यापारी जो पढ़ा लिखा है और अपने काम को सुचारु रूप से चलाना चाहता है वह अपने रुपये के लेन देन में बेंक से प्राप्त सुविधाओं से लाभ उठाये बिना नहीं रह सकता। ये सुविधाये इस प्रकार हैं :—

१—उसको अपने व्यापार में सदा धन लगाते व बटोरते रहना होता है। यदि वह सब रुपया अपने ही पास रखेगा तो उसे उसकी रक्षा का प्रबन्ध स्वयं करना पड़ेगा जो कि बहुत कठिन है।

२—देने वाली रकमों का भुगतान वह बेंक द्वारा विना किसी झंझट के कर सकता है, और साथ साथ उसके पास उसके द्वारा दिये जाने का बड़ा पक्का प्रमाण भी मिलता जाता है, और नकद व्यवहार में जो रुपये के लेन देन में उसके नुकसान का डर रहता है उससे भी बचता है।

३—बिक्री आदि की आय में जो उसे चिक (cheque) मिलते हैं उन्हें वह उनका रुपये में भुगतान लिये बिना अपने हिसाब में सुविधापूर्वक जमा कर सकता है।

४—आवश्यकता पड़ने पर वह बेंक में जमानत देकर

अथवा बिना जमानत दिये (जैसा तय हो जावे) उससे कम ब्याज पर रुपया उधार ले सकता है, और जो बिक्री की रकमें वह अपने हिसाब में जमा करता जावेगा उन पर ब्याज की छूट भी मिलती जावेगी।

५—बेंक की मारफ़त दूसरे व्यापारियों को अपने हैसियत का परिचय सुविधा पूर्वक दे सकेगा।

(२) बेंक से व्यवहार करने में ध्यान देने योग्य बातें—

इस प्रकार बेंक में हिसाव खोलने से और उसके द्वारा अपने रुपये के लेन देन के भुगतान में बड़ी सुविधा होती है। अब प्रश्न यह है कि किस बेंक में हिसाब खोला जावे और किन किन बातों का ध्यान उसके सम्बन्ध में रखा जावे। यह इस प्रकार हैं—

१—हिसाब जहाँ तक हो सके ऐसे बेंक में खोले जिसमें कि नुकसान का डर न हो, वह अपने रोजगार के स्थान के समीप हो, वहाँ के मैनेजर आदि से भी अच्छा परिचय हो ताकि उचित सुविधायें आसानी से प्राप्त हो सकें, और उसके द्वारा बाहरी भुगतान में अधिक खर्च भी न पड़ता हो।

२—बेंक की पास-बुक को उसमें नाम व जमा की रकमें दर्ज होने के लिये कम से कम हर महीने वहां भेजता रहे, और उनका मिलान अपनी कैश-बुक से करता रहे। ऐसा करने का एक नोट भी नीचे लिखे अनुसार तैयार करके कैश-बुक में दर्ज कर दे—

बेंक की बाकी (पास-बुक के अनुसार)...रु० आ० पा०

घटाओ ऐसी नाम की रकमें जो कैश बुक में दर्ज हैं पर अभी पास-बुक में दर्ज नहीं हुई—

रु० आ० पा०

१—चिक नं० ता०............

२—इसी भाँति अन्य रकमें भी ———— ————

कुल जोड़ ————

जोड़ो ऐसी जमा की रकमें जो कैश-बुक में बैंक में जमा की गई दिखाई हों पर अभी पास-बुक में जमा नहीं दिखाई गई........ ————————————

बाकी (जो कैश-बुक से मिलनी चाहिये)..............

उपरोक्त मिलान करने से पहले ऐसी रकमें जो पास-बुक में नाम या जमा दिखाई गई हों लेकिन कैश-बुक में अभी दर्ज न हुई हों कैश-बुक में जांच करके नाम या जमा कर लेनी चाहियें, और उसी तारीख तक का हिसाब मिलाना चाहिये जिस तारीख तक कि पास-बुक लिखी गई हो। फ़र्क डालने वाली ऐसी रकमें हुआ करती हैं जैसे ओवर-ड्राफ्ट पर ब्याज, बाहरी चिकों पर कमीशन, बेंक का इन्सीडेन्टल चार्ज इत्यादि। इनको मानकर कैश-बुक में दर्ज कर लेने में कोई अड़चन नहीं होनी चाहिये।

३—जैसे जैसे बेंक में बकाता बढ़ाया जावे और यदि उसको शीघ्र व्यापार में लगाने की सम्भावना न हो तो उसको ऐसे सरकारी कागज (Securities) आदि खरीदने में लगा दे अथवा बेंक में ही कुछ मुद्दत के लिये जमा कर दे ताकि उस पर ब्याज भी

मिलता रहे और यदि कहीं जमानत का काम आ पड़े तो उसे जमानत के रूप मे भी दिया जा सके। इस प्रकार लगाये धन की जमानत पर बाद में जब जरूरत हो तो बेंक के हिसाब में ओवर-ड्राफ्ट (बकाया से अधिक रुपया निकालना) के रूप में रुपया उधार लिया जा सकता है। इस प्रकार हमें केवल उतनी ही रकमों पर ब्याज देना होगा जो हमारे प्रतिदिन के हिसाब में बकाया से अधिक हो।

नोटः—स्थिर सम्पत्ति पर बेंक से प्रायः उधार नहीं मिला करता। वह अधिकाँश उपरोक्त प्रकार के जमा के कागज़ों अथवा गहनों पर या बिना अड़चन के बिकने वाले माल की आड़ पर ही रुपया एडवांस करती है, अथवा बकाया से अधिक निकालने देती है।

४—बेंक मे रुपया जमा करने के लिये सदा एक सचेत और ईमानदार आदमी को ही नियुक्त करना चाहिये और रुपया आदि उसके सुपुर्द करते समय उसके हस्ताक्षर भी करा लेना चाहिये ताकि बाद मे उसकी जिम्मेदारी निश्चित की जा सके। रुपया तभी जमा हुआ समझना चाहिये जब कि उसकी रसीद सूचक उसके जमा के पर्चे पर बेंक की मुहर तथा उसके अधिकारी का हस्ताक्षर होकर आ जावे। यदि अधिक रुपया जमा करने के लिये भेजना हो तो उसकी रक्षा का विशेष प्रबन्ध करना बहुत जरूरी है, पर जहाँ तक हो सके नियम यही होना चाहिये कि एक बार में एक निश्चित रकम से अधिक जमा करने के लिये न भेजी जावे, न बेंक से मंगवाई जावे।

५—जो चिक जमा करने के लिये भेजे जावें, उनका व्योरा कैश-बुक में तथा बेंक के जमा के पर्चों में अलग अलग श्रेणियों में दर्ज करना चाहिये। एक प्रकार के वह चेक या ड्राफ़्ट जो स्थानीय बेंकों के ऊपर हों, दूसरे वे जिनका भुगतान बाहर की बेंकों से मिलना हो। एक को स्थानीय (Local) दूसरे को बाहरी (Out station) चेक कहते हैं। स्थानीय चिकों आदि का भुगतान दूसरे दिन ही स्थानीय स्टेट बेंक अथवा रिज़र्व बेंक द्वारा हो जाता है, लेकिन बाहरी चिकों आदि का भुगतान बट्टा काट कर बाहर से उनका भुगतान मिलने पर होता है।

नोट १—उपरोक्त व्यख्या से यह भी समझ लेना चाहिये कि चेक आदि द्वारा मिले धन की पक्की रसीद उसके देने वाले को तभी देनी चाहिये जबकि उसका भुगतान बेंक द्वारा मिल जावे। उसके मिलते समय केवल चिक ही की रसीद देनी चाहिये।

नोट २—चेक या ड्राफ़्ट जो अपने व्यापार के नाम हों और उन्हें जमा करने के लिके बेंक भेजना हो तो उन पर उसके भर-पाये लिखने व हस्ताक्षर करने की जरूरत नहीं है यदि वह जमा करने के पर्चे पर दर्ज करके अपने व्यापार के हिसाब में जमा होने के लिये भेजे जावें।

नोट ३—चेक सदा क्रास करा कर देने व लेने चाहियें, ताकि उनका भुगतान केवल उनके पानेवाले को उसके हिसाब में जमा करके ही हो सके। "or order" अथवा "or

bearer" चेक का ही रुपया नकद मिल सकता है, "और आर्डर" चेक का भुगतान यदि परिचित आदमी को न देकर किसी अनुचित या गलत आदमी को बेंक कर देगी तो उसकी वह जिम्मेदार होगी। "or bearer" चेक का रुपया वह किसी आदमी को भी जो उसे पेश करे बिना किसी जिम्मेदारी ओढ़े दे सकती है। चेक काटते अथवा मन्जूर करते समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिये।

६—यदि कहीं बाहर रुपया भेजना हो अथवा बाहर से आये हुये माल का भुगतान देकर बिल्टी लेना हो तो उचित रकम का या तो चेक काटकर बेंक भेज दो अथवा बिना चेक काटे उसे अपने हिसाब में नाम डालकर बिल्टी आदि देने की आज्ञा पत्र द्वारा दे दो। ऐसा तभी हो सकेगा जब कि अपने बेंकर द्वारा बिल्टी मंगवाई गई हो। यदि दूसरी बेंक द्वारा वह आई हो तो वह तभी मिल सकेगी जबकि या तो उसका रुपया नकद दिया जावे अथवा उसके संबन्ध में दिये हुये चिक का भुगतान उसे मिल जावे। भुगतान सम्बन्धी पत्र को बेंक भेजते समय ही चेक की भाँति कैश बुक में दर्ज कर लेना चाहिये ताकि बेंक का हिसाब अपने हिसाब से मिलता जावे।

(३) चेक काटने में सावधानी--

चेक सम्बन्धी नीचे लिखी हुई सतर्कता जरूरी है—

१—नई चेक-बुक बेंक से मिलते ही उसके सब सादे चिकों को संभालना चाहिये यह देखने के लिये कि वे पूरे हैं। तब उसे सदा ताले में सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिये ताकि उसमें से

कोई दूसरा आदमी चेक-फ़ार्म निकालकर उस पर तुम्हारे जाली हस्ताक्षर करके बैंक से रुपया न निकाल ले।

२—चेक सदा अपने हिसाब के बकाया के अन्दर ही काटना चाहिये जब तक कि बेंक से ओवर-ड्राफ्ट अथवा एडवांस का विशेष प्रबन्ध पहले से न कर लिया हो। यदि कभी आवश्यकता वश काटने की तारीख से बाद में दिये जाने के आशय से (post-dated) चेक काटना हो तो उसमें लिखित तारीख कैश-बुक में दर्ज कर लेनी चाहिये और इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि वह तुम्हारे हिसाब में उचित बकाया न होने के कारण लौटाया न जा सके।

३—चेक काटते समय पाने वाले payee का नाम व रकम सावधानी से लिखनी चाहिये ताकि उसमें किसी प्रकार की गलती न हो जावे, अथवा लिखी हुई रकम जाली तौर पर बदली न जा सके। ऐसा करने के लिये यदि शब्दों में लिखित रकम के शब्द एक दूसरे से सटे हुये लिखे जावेंगे तो ठीक होगा। संख्या (रुपये की) जो लिखी जावे वह भी बड़ी होशियारी से लगभग मिली जुली ही लिखनी चाहिये, और विशेष सावधानी के लिये उसकी रकम से कुछ बढ़ा कर "..........रुपये के अन्दर" का एक नोट चेक के आर पार भी लिख देना चाहिये। चिक में शब्दों मे लिखी संख्या के अन्त में "बस" only का शब्द भी जोड़ देना चाहिये।

४—यदि यह सावधानी करना हो कि चेक का रुपया केवल पानेवाले को उसके हिसाब में जमा करके ही प्राप्त हो सके तो चेक

को क्रास कर देना चाहिये। यह क्रास दो बराबर से लाईन उसके आर पार खींचकर और उसके मध्य में "एन्ड को" "एकाउन्ट पेयी" आदि क्रास सूचक शब्द लिख देने चाहियें।

५—यदि रकम हजार या सैकड़ों में हो तो उसे उचित प्रकार से सैकड़ों और हजारों में लिखना चाहिये जैसे एक हजार नौ सौ को उन्नीस सौ या बारह सौ नहीं लिखना चाहिये।

६—यदि कोई चेक खो जावे अथवा अन्य किसी कारण से उसका भुगतान रुकवाना हो या उसे कैन्सिल यानी रद्द करना हो तो उसको कैश-बुक में नाम की ओर दर्ज करके जिस हिसाब में पहले डाला हो उसी हिसाब में उसकी रकम को कमी (minus) के रूप में घटाने की निशानी सहित अथवा, लाल स्याही से दर्ज करना चाहिये। यदि चेक अपने पास हो तो उसे तुरन्त चीरफाड़ कर नष्ट कर देना चाहिये। यदि न हो तो बेंक को तुरन्त उसका भुगतान न करने के लिये लिखना चाहिये और उससे ऐसा न करने की सूचना पाने की चिट्ठी मंगा लेना चाहिये।

७—सिवाय ऐसी दशाओं के जिनमें चेक स्वयं पाने वाले को दिया जावे और वह 'or bearer' चेक की चाहना करे, चेक को सदा क्रास करके अथवा or order के शब्द के प्रयोग सहित ही देना चाहिये, ताकि उसका रुपया किसी अनुचित आदमी को बक न दे सके। यदि वह बाहर डाक द्वारा भेजना हो तो उसे सदा क्रास ही कर देना चाहिये। क्रास चेक सदा 'or order' ही लिख जाते हैं।

८—हर एक संशोधन अथवा परिवर्तन जो चेक में किया जावे उस पर अलग अलग पूरे हस्ताक्षर चेक काटने वाले (यानी 'drawer') के होने चाहिये।

नोट १—'Or bearer' को काटकर यदि 'Or order' या इसका उलटा करना हो तो ऐसे संशोधन पर हस्ताक्षर की आवश्यकता नहीं है।

नोट २—नवम्बर १९५३ में पटना हाई कोर्ट द्वारा एक केस (रानी साहिबा अमावां और टेकारी बनाम हिन्दुस्तान ट्रेडर्स एण्ड इन्डस्ट्रीज़ लिमीटेड) में यह फैसला दिया जा चुका है कि यदि कोई चेक जो तारीख लिखी जाने के आगे की तारीख का (post-dated cheque) हो बेंक में उस तारीख को पर्याप्त बकाया न होने के कारण पेमेन्ट न हो सके तो यह कोई धोखे-बाजी न समझी जावेगी।

९—बेंक रुपया भेजते समय अथवा चेक काट कर मंगवाते समय पहले उसे कैश-बुक में जरूर दर्ज कर लेना चाहिये। ऐसा न करने से कभी कभी रुपया भेजने या मंगवाने की एन्ट्री उसमें छूट जाने का डर रहता है जिसके कारण हिसाब में बहुत गड़-बड़ी पड़ सकती है।

१०—कैश-बुक में चेक दर्ज करते समय यह जरूर देख लो कि उसके अनुसार उसके आगे के नम्बर का ही चिक तुम दर्ज कर रहे हो। ऐसा करने से कोई चेक उसमे दर्ज होने से नहीं छूटेगा, अन्यथा कभी कभी चेक कैश-बुक में दर्ज होने से रह जाता है और पर्याप्त बकाया न होने के कारण उसका बेंक से

भुगतान नहीं होता।

(४) बैंक से उधार लेना--

यदि माल की आड़ पर बेंक से रुपया लेना हो तो इस सम्बन्ध मे नीचे लिखी बाते जानना जरूरी है—

१—बेक प्रायः ऐसे माल पर उसके खरीद के दाम का ७० या ७५ प्रतिशत रुपया एडवांस करती है जो गलने या सड़ने वाला न हो, और आवश्यकता पड़ने पर बाजार मे तुरन्त बेचा जा सके।

२—यदि व्यापारी चाहे और माल अधिक हो तो व्यापारी के गोदाम मे ही बेंक उसे अपना ताला लगाकर तथा उसकी चौकसी का प्रबन्ध करके उसके ऊपर रुपया एडवांस कर सकती है।

३—यदि रखे हुये माल का बाजार भाव गिर गया है तो बेंक उसकी आड़ पर दिये हुये धन का कुछ अंश वापस भी मांग सकती है जो कि व्यापारी को तुरन्त देना होगा।

४—इस प्रकार से एडवांस लिये हुये धन से जो माल लिया जावे उसे जलदी ही बेचने का यत्न करना चाहिये वरना बेक का ब्याज भाड़ा आदि उसके मुनाफ़े के ऊपर बहुत बुरा प्रभाव डालेगे, और बेंक की सुपुर्दगी मे पड़े पड़े माल भी खराब हो जावेगा।

५—कभी कभी बेक के द्वारा भेजी हुई माल की बिल्टी पर भी किसी हद तक बेंक रुपया एडवांस कर सकती है। इसके लिये विशेष रूप से उससे प्रबन्ध करना होता है, और वह ऐसा कुछ शर्तों के साथ ही करती है, जैसे यदि एक निश्चित समय

के अन्दर बिल्टी और उसके बिल का भुगतान न हुआ तो उस पर किया हुआ एडवांस व्यापारी को वापस करना होगा। इस प्रकार से भेजी हुई बिल्टी बेंक के नाम एन्डोर्स करके भेजनी होती है। ऐसी बिल्टी "सैल्फ़" ही होनी चाहिये। रुपया पाने पर बेंक उसे पाने वाले (consignee) के नाम एन्डोर्स कर देगी।

६—यदि बिल्टी बेंक द्वारा भुगतान लेकर देने के लिये भेजना हो तो बिल्टी के साथ एक पत्र तथा एक हुन्डी भी लिख कर बिल सहित भेजना चाहिये। यह कार्य अपने बेंकर द्वारा अथवा सीधा उस बेंक को भेज कर हो सकता है जिसकी मार्फ़त रुपया वसूल होने पर बिल्टी आदि दिया जाना हो। हुन्डी का एक रूप अँग्रेजी में उदाहरणार्थ नीचे लिखा जाता है :—

DEMAND NOTE

S. R. CANNERY

Allahabad October 22, 1955

No. 782 *Rs.* 287-8-0

On demand please pay to the order of the Allahabad Bank Ltd., Patna *the sum of Rupees* two hundred & eighty seven /8/ *for value received.*

For S. R. Cannery.

Messrs J. G. Carr & Son
Dak Bungalow Road,
Patna.

Manager.

यदि इस प्रकार की हुन्डी का भुगतान तुरंत न लेकर कुछ

मुद्दत बाद लेना हो तो *"On demand"* की बजाय .... *days after sight* लिखना होगा। ऐसा उसी दशा में करना उचित होता है जबकि पहले से भुगतान करने वाले (drawee) से यह बात तै हो गई हो कि वह रुपये का भुगतान बिल्टी पाने के कुछ निश्चित समय उपरांत करेगा, और पार्टी मातबर हो तथा भेजने वाले (drawer) को भी यह प्रबन्ध सुविधाजनक हो। इस प्रकार की हुन्डी उसके सरकारी छपे हुये कागज पर ही लिखी जावेगी।

———

अध्याय १७

चिट्ठी-पत्री

ध्यान में रखने योग्य बातें—

नीचे हम उन मुख्य बातों को लिखते हैं जो व्यापार सम्बन्धी चिट्ठी-पत्री में ध्यान रखने योग्य हैं

१—व्यापारिक पत्रों की भाषा प्रायः सरल, दृढ़ और सूक्ष्म होनी चाहिये। हाँ, यदि कोई विशेष महत्व का विषय हो तो शब्दों की किफ़ायत न करके जहाँ तक हो सके अपनी बात को पुष्टि करने और समझाने के लिये विस्तार पूर्वक प्रमाण सहित कहना चाहिये ताकि पत्र पढ़ने वाले के ऊपर उसका गहरा और ठीक ठीक प्रभाव पड़े और वह उसे समझे। यदि कोई गम्भीर विषय हो, जैसे टैरिफ़ बोर्ड (Tariff Board) आदि की जाँच सम्बन्धी, अथवा किसी बड़े सौदे के बारे में पत्र व्यवहार चल रहा हो तो विस्तार पूर्वक लिखने के साथ उसको समझाने के लिये स्वयं जाने या अपना प्रतिनिधि भेजने की भी तत्परता दिखानी चाहिये। इस प्रकार के विशेष अवसरों के अतिरिक्त अन्य विषयों के बारे में पत्र व्यवहार सूक्ष्म रीति से ही करना अधिकतर ठीक होता है, क्योंकि ऐसा करने से लिखने तथा पढ़ने वाले दोनों का बहुमूल्य समय बचता है।

२—किसी पत्र के उत्तर देने में देर नहीं करनी चाहिये

सिवाय ऐसी अवस्थाओं के जब कि कोई ऐसा विषय हो जिस पर विचार विनिमय करना हो अथवा दूसरे पत्र आदि का इन्तजार हो। ऐसी दशा मे यदि अधिक समय लगने की संभावना हो तो केवल पत्र की पहुँच लिख कर कह दो कि उस पर विचार हो रहा है, जैसे ही जल्दी संभव होगा उचित उत्तर भेजा जावेगा, इत्यादि। यदि काम अधिक होने के कारण ऐसा करना उचित हो तो कुछ जवाब के पत्र योग्य भाषा सहित छपे छपाये तैयार रखने चाहियें ताकि सुविधापूर्वक बिना अधिक समय नष्ट किये उनको चलता पूरा कर के किया जा सके।

इसी प्रकार माल का आर्डर आते ही यदि वह तुरंत न भेजा जा सके अथवा उसके तुम्हारे पास पहुँचने में किसी कारण से देर हो गई हो, जैसा कि प्रतिनिधि द्वारा भेजे हुये आर्डरों में कभी कभी हुआ करता है, तो पहुँच उसी दिन भेजने में देर मत करो, और साथ साथ माल रवाना करने की अनुमानित तिथि भी उसमे लिख दो ताकि आर्डर देने वाले को उसके बारे में संतोष हो जावे। इस प्रकार का पत्र छपे रूप में ही भेजने में सुगमता होगी। अधिक माल के आर्डर की पहुँच तो सदा तुरंत भेज ही देनी चाहिये।

३—हर एक पत्र जो तुम्हारे यहाँ से जारी हो उसकी भाषा सुमधुर, सारगर्भित तथा सरल हो और उससे ऐसा प्रतीत होना चाहिये कि वह तुम अपने एक परिचित मित्र को लिख रहे हो। यदि उसके लाभ की कोई बात हो तो उसे छिपाने या प्रदर्शित न करने की चेष्टा मत करो। ऐसा करने से वह तुम्हारी सहानुभूति-

पूर्ण बात से प्रभावित हुये बिना नहीं रहेगा, क्योंकि यदि उसे यह मालूम होगा कि उसके लाभ अथवा सुविधा का भी तुम्हें ध्यान है तो वह इससे सन्तुष्ट होगा। उसके स्वतन्त्र निर्णय पर भी आघात करने की चेष्टा न करो और न उसमें हस्तक्षेप ही करो जब तक कि वह तुम्हारी प्रत्यक्ष राय इस बारे में न पूछे, अथवा तुम्हें यह विश्वास न हो कि वह गलती पर है और आगे चलकर वह उसके लिये पछता सकता है। यदि बिलकुल निस्संदेह होकर उसके अनुकूल या लाभ की बात कह सकते हो तो उसे कहने में मत चूको। जो बात कहो उसको उतना ही कहो जितना कि तुम पालन कर सकते हो, या उसे ठीक ठीक जानते हो और समझते हो कि आगे चलकर तुम्हारी बात झूठी न पड़ेगी। हाँ सहयोग सूचक शब्द कहना एक मामूली सभ्यता की बात है, उसे हर पत्र के अन्त में बिना हिचकिचाहट के लिख देना चाहिये।

४—यदि तुम्हारे माल आदि के बारे में कोई खरीदार कोई शिकायत करता है, अथवा चेतावनी देता है या उससे असंतुष्टता प्रकट करता है तो तुम इसके लिये कृतज्ञता प्रकट करते हुये उसके भ्रम को दूर करो और यदि वह ठीक हो और तुम जानते हो कि वह ठीक कह रहा है तो उसका समाधान जिस प्रकार से उचित हो करो, या कहो कि मालूम होता है कि अनजान में कोई गलती हो गई है। यदि आवश्यकता समझो तो उसकी शिकायत का प्रमाण अथवा अधिक ब्योरे के लिये प्रार्थना करो। यदि कोई त्रुटि हो गई हो तो उसको साफ साफ मंजूर करके

भविष्य के लिये उससे बचने का उचित प्रबन्ध करो, और ऐसा करने की सूचना भी उसको दे दो। साथ साथ इस बात का भी ध्यान रखो कि कोई ऐसी बात बिना अच्छी तरह समझे न लिख दो जिसके आधार पर वह तुमसे नुकसान को पूरा करने के लिये अपना अनुचित अधिकार जमा सके। लेकिन यदि समझते हो कि वास्तव में उसका नुकसान हो गया है तो उसके माल लौटाने अथवा उसका मूल्य वापस करने में जरा भी संकोच मत करो। क्योंकि यदि ऐसा न करोगे तो वह तुमसे आगे का व्यवहार बन्द कर देगा और अन्य लोगों से भी तुम्हारी शिकायत करके तुम्हें हानि पहुँचावेगा। यदि माल कम या रास्ते में खराब होने की शिकायत हो तो उससे कमी का प्रमाण, जैसे रेल कर्म-चारी का इस सम्बन्ध का पर्चा अथवा स्थानीय अपने प्रतिनिधि आदि की जांच की रिपोर्ट मांगो। इसी प्रकार व्यवहार माल खराब पाने सम्बन्धी शिकायत की दशा में भी करना चाहिये, या उसके बारे में लिख देना चाहिये कि तुम्हारा प्रतिनिधि जब निकट भविष्य में वहाँ जावेगा तब उसकी जांच करके फैसला जैसा देगा उसके अनुसार कार्यवाही की जावेगी। यदि नुकसान अधिक हो और लेने वाला इस प्रकार से ठहरना न चाहे तो कोई अन्य विशेष प्रबन्ध उसको सन्तुष्ट करने का करना चाहिये। साथ ही साथ अपना भी इतमीनान करना बहुत आवश्यक है।

५—यदि किसी विशेष दशा में आर्डर के साथ एडवांस (पेशगी) देना हो तो ऐसा केवल तभी करो जब कि तुम माल बेचने वाले को अच्छी प्रकार से जानते हो। एडवांस सदा कास

चिक द्वारा जानी हुई कम्पनी आदि के नाम से ही देना चाहिये। नकद अथवा खुले चिक द्वारा एडवांस अधिकांश धोखे में डाल देता है। यही हाल विशेष आकर्षित सौदे में, जो कभी कभी अनुचित प्रतिनिधि या डाक द्वारा किया जाता है, होता है। एडवांस जो दिया जावे उसे उसके सम्बन्धित आर्डर पर भी नोट कर देना चाहिये।

६—जिसको पत्र लिखो उसके बारे में यह कभी न समझो कि वह कोई बेईमान या धोखेबाज आदमी है, क्योंकि दूर बैठे हुये तुम नहीं जान सकते कि उसकी वास्तविक दशा क्या है और यदि उसने कोई ऐसी बात की या लिखी है जिसके कारण तुम्हें उसकी सच्चाई के बारे में कुछ भ्रम या अविश्वास हुआ हो तो भी जब तक तुम्हें उसका पूरा और ठीक ज्ञान न हो जावे कभी उसकी ईमानदारी और सच्चाई के बारे में शंका न करो, क्योंकि ऐसा करने से तुम्हें कोई लाभ नहीं हो सकता। हाँ, अपना नुकसान बचाने मे पूरे सचेत रहो, और उचित कार्यवाही अपनी रक्षा की करते रहो।

७—यदि किसी के ऊपर तुम्हारा रुपया चाहिये, और वह तुम्हारे नम्रतापूर्ण पत्रों का संतोषजनक उत्तर नहीं दे रहा है अथवा रुपया देने में आनाकानी कर रहा है तो उसको रजिस्ट्री पत्र आदि के द्वारा साफ साफ लिखकर सचेत करने में न चूको कि तुम नियत समय के अन्दर रुपया न पाने की अवस्था में अदालती कार्यवाही करने के लिये विवश होगे, और ऐसा करने में कभी अनुचित देर भी न करो सिवाय ऐसी दशाओं के जबकि

तुम यह समझो कि ऐसा करने से कोई लाभ न होकर वरन नुकसान की अधिक संभावना है। पर इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि किसी आसामी के पास रुपया छोड़ देने से भविष्य मे उससे व्यवहार छुट जाने की अधिक संभावना है बजाय इसके कि कुछ कड़ाई के साथ उससे रुपया वसूल कर लिया जावे। कानूनी कार्यवाही वास्तविक रूप से तभी शुरू करनी चाहिये जबकि अड़ी हुई रकम अधिक हो, क्योंकि अदालती कार्यवाही में देर, खर्चा अथवा परेशानी अधिक होते है और डिग्री मिलने पर भी रुपया वसूल होना बड़ा कठिन हो जाता है। इसलिये अदालती कार्यवाही शुरू करने की बजाय हर एक मामले मे, जिसमे कि तुम यह समझते हो कि विपक्ष पार्टी तुम्हारे प्रति नीति का व्यवहार नहीं कर रही, यह अच्छा होगा कि तुम उसकी व्यापार संबन्धी संस्था अथवा अन्य किसी स्थानीय व्यक्ति (उसके रिश्तेदार आदि) को लिखो जिसका कि तुम समझते हो कि उस पर प्रभाव पड़ेगा।

८—यदि रेल, चुंगी या किसी अन्य सरकारी विभाग के कर्मचारी की अनीति के कारण तुम्हें नुकसान हो रहा हो और वह तुम्हारी स्वयं प्रार्थना की अथवा पत्र-व्यवहार की ओर उचित ध्यान नहीं देता है तो उस विषय के किसी विशेषज्ञ या वकील को अपना मामला सुपुर्द करने में देर मत करो। परन्तु यदि कोई ऐसा मामला हो जो उसकी मर्जी या कृपा पर निर्भर है तो उससे मिल कर, अथवा अन्य अधिकारी जो उसके ऊपर हो उससे मिलकर या पत्र व्यवहार करके अपना काम निकालने

की चेष्टा करो। लेकिन उससे मिलने से पहले अड़चन वाली बात को तथा उसके उपायों को जहाँ तक हो सके अच्छी तरह मालूम करके, और समझ कर उससे मिलो ताकि उसके तर्क वितर्क का संतोषजनक उत्तर देकर उसे समझा सको और उसको उचित रास्ता अपने काम निकालने का बता सको।

९—पत्र व्यवहार जहाँ तक हो सके टाईप-राइटर से छाप कर करना चाहिये। ऐसा करने से सफाई के साथ साथ पत्र की एक से अधिक प्रतियाँ एक साथ निकल सकती हैं और हाथ से लिखे हुये पत्र से वे अधिक आदर की निगाह से देखी जाती हैं। साथ साथ अलग नकल रखने में जो समय नष्ट होता है वह भी बचता है। हाँ, यदि दो हर्फ़ी जवाब या छपे पत्र भेजने से काम हो सके तो उन्हें टाइप करने कराने के आसरे में जारी करने में देर नहीं करना चाहिये। यह कार्य कई प्रकार के छपे पत्र या एक ही प्रकार के छपे पत्र में कई प्रकार के जवाब छपे छपाये रख कर उनमे उचित संशोधन करके जारी करने से भी हो सकता है। ऐसा करने से बड़ी सुगमता होती है, साँथ साथ पत्र व्यवहार में देर नहीं होती, जो कि, व्यापार में एक बहुत आवश्यक बात है।

१०—हर हालत में तुम्हारी चिट्ठी, मीमो (memo), कार्ड आदि का कागज, छपाई इत्यादि सुन्दर और साफ़ तथा त्रुटि रहित होना चाहिये जिसको देखने से पढ़ने वाला उसे रूचि पूर्वक पढ़ने की इच्छा करे। परन्तु ऐसा करते समय इस बात का भी ध्यान रखो कि कोई बात उसमें ऐसी प्रदर्शित न होने

दो जिसके कारण उसको पढ़ने वाला तुम्हारे व्यापार के सम्बन्ध में गलत राय कायम कर सके। इस बात का भी ध्यान रखो कि तुम्हारे पत्र के कागज, छपाई आदि की ऊपरी तड़क भड़क बिलकुल बेकार हो जावेगी यदि तुम्हारे पत्र की भाषा सरलता और सच्चाई को लिये सुमधुर और ठीक न हुई। लेकिन सच्चाई और सरलता का यह मतलब भी नहीं समझना चाहिये कि जो बात कहने योग्य न हो उसे भी अपने पत्र में कह-कर तुम अपने मामले को आप बिगाड़ लो। हाँ, यदि कोई ऐसी बात हो जिसको न कहने से तुम्हारे ऊपर धोखा देने का दोषारोपण हो सकता हो तो उसे कहे बिना न रहो।

११—हस्ताक्षर करने के पहले देख लो कि जो कागजात उस पत्र के साथ जाने वाले हैं वे उसके साथ लगे हैं या नहीं। यदि वे अलग से भेजे गये हों तो उसमें इस विषय का एक सांकेतिक नोट लिख देना चाहिये।

१२—हर एक पत्र पर उसके रवाना होने की ठीक ठीक तिथि या तारीख दर्ज करना चाहिये, और यदि उसके ऊपर पहले की तिथि या तारीख छपी हुई हो तो उसके नीचे उसे रवाना करने की ठीक ठीक तारीख दर्ज करके उसे भेजना चाहिए। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि हस्ताक्षर करने अथवा रवाना करने के लिये हर प्रकार से तैयार की हुई चिट्ठियाँ बिना भेजे कहीं इधर उधर पड़ी न रह जावें।

१३—यदि माल की बिल्टी बेंक या वी० पी० द्वारा भेजी गई हो तो एक प्रति बिल की पूरे व्योरे सहित माल मंगवाने वाले

के पास भेज देना चाहिये ताकि उसे उसका ज्ञान पहले से हो जावे। और यदि वहाँ के स्थानीय एजन्ट अथवा विक्रेता की मारफत उस माल का आर्डर आया हो तो एक प्रति बिल की उसको भी उसकी जानकारी के लिये भेजना चाहिये।

१४—बिल आदि के फ़ार्म जो काम मे लाये जावें उनकी भाषा व रूप आदि की जानकारी उसी मेल के काम करने वाले अन्य अच्छे दूकानदारों आदि के फ़ार्म देखकर प्राप्त की जा सकती है।

१५—बेंक के द्वारा बिल्टी और बिल भेजने की दशा में उनको बेंक के नाम एक छपे पत्र और Demand Note सहित भेजना चाहिये। Demand Note मे (१) नाम व पता व्यापारी जिससे रुपया वसूल करना है (२) नाम बेंक जिसके द्वारा उसे पेश करना है (३) रकम जो वसूल करके भेजनी है, साफ़ साफ़ दर्ज होनी चाहिये। छपे पत्र में जिस आसामी से रुपया वसूल करना है और जिस प्रकार उसे भेजना है दर्ज करना चाहिये। इस प्रकार के पत्र तथा डिमान्ड-नोट की भाषा, रूप, आदि का ज्ञान किसी बेंक के जानकार कर्मचारी अथवा मैनेजर द्वारा आसानी से हो सकता है। यह पत्र या तो सीधा उस बेंक को जिसके द्वारा बिल व बिल्टी आसामी को भुगतान के लिये पेश करना है अपने स्थानीय बेंक (जिसमें अपना हिसाब हो) या डाक द्वारा भेजना चाहिये। बेंक द्वारा भेजने से बेंक का कमीशन आदि हर एक बेंक जिनकी मारफ़त वह जावेंगे अलग अलग लगेगा। डाक द्वारा भेजने से एक ही

बेंक को रुपये का भुगतान लेने व उसे भेजने का देना होगा। छपे पत्र में यह भी लिखना चाहिये कि बैंक अपना चार्ज किससे वसूल करे। हर हालत मे बेंक अथवा डाकखाने की रसीद का तथा उसके नाम का व्योरा आर्डर-व-रूपलाई रजिस्टर में भी उसके उचित खाने में दर्ज कर देना चाहिये।

१६—तार द्वारा जब पत्र व्यवहार किया गया हो तो उसी दिन तार की नकल पत्र द्वारा भी भेजनी चाहिये। तार देते समय नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिये:—

(अ) तार की भाषा सूक्ष्म हो, लेकिन पता पूरा होना चाहिये।

(आ) तार का हर एक शब्द बहुत साफ़ साफ़ लिखा जावे, वरना कुछ का कुछ हो जाने का डर है।

(इ) यदि तार टैलीफ़ोन द्वारा देना हो तो स्थानीय Phonogram का नम्बर रिंग कर के तार के कर्मचारी को उसका मज़मून उतरवा देना चाहिये, और जब उसकी नकल वह भेजे तो किसी भी डाकखाने में पेश करके उसका पेमेन्ट तुरन्त कर देना चाहिये।

(ई) यदि इस बात की आवश्यकता हो कि पाने वाले को भी तार टैलीफ़ोन द्वारा ही पहुँचे तो उसके नाम के साथ में उसका टैलीफ़ोन नं० भी दर्ज कर देना चाहिये, जैसे—

CANNERY, Telephone 3092
Allahabad.

१७—यदि पत्र व्यवहार में मालिक दूकान अथवा मुख्य कर्मचारी का ध्यान किसी विशेष जरूरी विषय पर आकर्षित करना हो तो पत्र या केवल उसका ऊपरी लिफ़ाफ़ा उसके नाम से भेजना चाहिये, और यदि उससे पारस्परिक संबन्ध हो तो उसको निजी पत्र लिखकर उसका ध्यान विशेष रूप से उस विषय की ओर दिलाना चाहिये। ऐसा प्रायः तभी करना चाहिये जबकि मामला अत्यन्त जरूरी हो, अथवा पहले लिखे गये पत्रों का संतोषजनक जवाब न आ रहा हो, और देरी के कारण नुकसान होने का डर हो।

१८—डाकखाने अथवा रेल संबन्धी जानकारी प्राप्त करने के लिये पोस्टल गाईड (Postal Guide) कोचिंग-टैरिफ़ (Coaching Tariff) आदि मंगवाकर आवश्यकता के समय बाँचने के लिये रखना चाहिये। यह किताबें बहुत सस्ती मिल जाती हैं और इनमें लिखी बातों की जानकारी से बड़ी सुविधा और बचत होती है।

१९—स्टेशनरी, अर्थात् लिखने पढ़ने तथा पत्र व्यवहार की मामूली मामूली चीजें, जैसे लैटर पेपर, कार्बन-पेपर, टाईप-रिबन, स्याही, पेन्सिल, रबर, निब, पिन, किलिप, टैग, सुई डोरा, फाईल बोर्ड, फाईल-कवर आदि सदा प्रयोग में आनेवाली चीजों का प्रबन्ध ठीक रखना चाहिये ताकि उनके न रहने से असुविधा होकर बेकार समय नष्ट न हो। असुविधा के अतिरिक्त उनके बिना काम भी अच्छी प्रकार से नहीं होता। स्याही की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। यह सदा अच्छी और पक्के ही रंग की

होनी चाहिये। लिफ़ाफ़ों आदि पर अपने यहाँ का कुछ परिचय छपा होने से वह विज्ञापन का भी काम करते हैं।

२०—यह जरूरी नहीं है कि जितने लिफ़ाफ़े आदि डाक द्वारा भेजे जावें उन पर अलग अलग टिकट लगाये जावें। पत्र व्यवहार यदि अधिक होता हो तो उसके बारे में पोस्ट-मास्टर द्वारा उचित जानकारी प्राप्त करके उनका भुगतान एक साथ लिफाफों आदि पर डाक की मुहर लगवाकर किया जा सकता है। ऐसा करने से सुविधा के अतिरिक्त पोस्टेज का दुरुपयोग भी नहीं होने पाता।

२१—यदि अपना तार का पता रजिस्ट्री कराना हो तो उसके लिये स्थानीय तार विभाग को २०) वार्षिक कर देकर ऐसा किया जा सकता है। इसकी नियमित तारीख समाप्त होने से पहले ही वार्षिक कर का भुगतान कर देना चाहिये वरना संक्षिप्त पते से आये तार लौटा दिये जावेंगे।

२२—हर एक विषय के पत्र-व्यवहार की एक अलग फ़ाईल होनी चाहिये।

२३—जब तक किसी विषय का फैसला न हो जावे और उस पर पत्र व्यवहार समाप्त न हो जावे तब तक जवाब आने वाले पत्रों को एक अलग स्थान या फ़ाइल मे इस प्रकार से रखना चाहिये कि उनके जवाब की प्रतीक्षा होती रहे और आवश्यकतानुसार उन पर याद दहानी भी की जाती रहे।

२४—अधिकार-पत्र या अदालती कागजात अथवा समझौते के पत्र या अन्य इस प्रकार के लेखे बहुत सोच समझ कर

लिखवाना चाहिये। उनकी भाषा ऐसी न हो जो कि तोड़ मोड़ कर कुछ का कुछ मतलब निकालने में प्रयोग की जा सके, या उसमें कुछ कच्चाई रह जावे। इसलिये ऐसे विषयों के पत्र आदि को किसी वकील की राय लेकर ही भेजना या पक्का करना चाहिये। किसी प्रकार का अधिकार देते समय एक सावधानी यह भी वर्तना जरूरी है कि वह पहले पहल थोड़े और निश्चित समय के लिये ही दिया जावे। जब तक अधिकार दिये जानेवाले का पूर्ण रूप से अनुभव न हो जावे उसको कम से कम समय के लिये ही अधिकार देना या शर्तें मंजूर करना चाहिये।

२५—सौदे अथवा ठेके सम्बन्धी हर एक इकरार-नामे में एक दण्ड सूचक विवेचन (penalty clause) जरूर होना चाहिये जिससे कि यदि उसके अनुसार काम या सपलाई न हुई तो मुनासिब हरजाना वसूल किया जा सके। इस बात का भी लेखा उसमें दर्ज कर देना चाहिये कि यदि किसी विषय के बारे में दोनों ओर से विरोध होकर आपस में समझौता न हो सके तो किस को बीच में डाल कर उसे तै किया जा सकेगा।

२६—हर एक जरूरी पत्र व इकरारनामे की नकल रखना चाहिये, सिवाय ऐसी अवस्थाओं के जिनके बारे में केवल एक याद-दाश्त के तौर पर नोट रखने से ही काम चल सकता हो। जरूरी पत्र आदि के पाने की हस्ताक्षर सहित रसीद सुरक्षित रूप से रखनी चाहिये, ताकि यदि जरूरत हो तो उसके पाने के प्रमाण में वह पेश की जा सके। इस सम्बन्ध में यह भी देखना जरूरी होगा कि रसीद उसी आदमी की है जिसको उसे देना चाहिये।

अध्याय १८

व्यापारियों में संगठन की आवश्यकता

(१) वर्तमान स्थिति और उपाय—

एक समय था जब कि व्यापारी वर्ग की मान व मर्य्यादा का सिक्का अधिकारियों के ऊपर यथोचित रूप से बैठा हुआ था और वे उन्हें समाज तथा देश का एक प्रभावशाली तथा आदरणीय अंग समझते थे। पर आज हम वह बात नहीं पाते। जहाँ देखो वहाँ उनके प्रति अविश्वास का व्यबहार होता है और उनकी हर प्रकार से अवहेलना तथा उपेक्षा की जाती है। ऐसी परिस्थिति विशेषतः उन लोगों के कारण हुई है जिनकी आदतें गत महायुद्ध में अनाप शनाप मुनाफ़ा लेने या चोर बाजारी आदि द्वारा धन कमाने से बिगड़ गई थीं। फिर भी यह कहने में हमें ज़रा भी संकोच नहीं है कि व्यापारी वर्ग का अधिकांश भाग इन दोषों से बहुत कुछ दूर रहा था।

स्वराज्य का परिणाम तो यह होना चाहिये था कि सरकारी कर्मचारी जनता के साथ सहानुभूति का बर्ताव करते और उनकी कठिनाइयों को निवारण करने के लिए तत्पर होते, ताकि जनता और सरकार के बीच एक गहरा सम्बन्ध पैदा होकर दोनों के सहयोग से देश की उन्नति होती। लेकिन अति अधिक नियंत्रण और सहानुभूति के अभाव के कारण स्वतन्त्रता का लाभ पूरी

तौर पर नहीं उठाया जा सकता। व्यापारियों की कहीं सुनवाई नहीं होती। जरा जरा सी बात के लिये उन्हें परेशान होना पड़ता है, और कर्मचारियों के सामने अपना बहुमूल्य समय उनकी घन्टों की हाजिरी अथवा टालमटोल में नष्ट करना पड़ता है। कोई भी काम कराना हो जब तक उसके लिये वह अधिकारियों के पास दौड़ धूप नहीं लगाता वह होता ही नहीं। ऐसी दशा में केवल वही व्यापारी कुछ कर पाते हैं जिनके पास दौड़ने धूपने का समय और साधन हों या जिनका कुछ वसीला हो, बाकी बिचारे अपना मन मारे किसी न किसी अड़चन में पड़े अपना व्यापार ठेला करते हैं, और अपना बहुमूल्य समय जो कि माल बेचने अथवा बनवाने आदि में लगता वह अधिकारियों के लिये तरह तरह के नकशे बनाने या उन्हें उनको पेश करने अथवा चेक कराने में व्यतीत होता रहता है। ऐसी दशा में उन्हें अपने व्यापार का चलाना ही अत्यन्त कठिन हो जाता है फिर वह उसमें उन्नति के साधन पैदा किस प्रकार कर सकते हैं।

रेल तथा चुंगी के कर्मचारी भी व्यापारियों या उनके भेजे हुये आदमियों से अविश्वास तथा लापरवाही का ही व्यवहार प्रायः करते रहते हैं, और यह प्रयास करते रहते हैं कि उन्हें अधिक से अधिक कर या महसूल आदि देना पड़े। उनके नुकसान से न तो उन्हें कुछ प्रयोजन होता है न किसी प्रकार की उनसे सहानुभूति ही। उन्हें परेशान व तंग करके अधिक से अधिक कर या महसूल वसूल करने में ही वह अपनी तथा देश की भलाई समझते हैं।

ऐसी दशा में न तो देश के व्यापारी वर्ग का नैतिक स्तर ऊँचा हो सकता है, न देश के व्यापार और उद्योग ही वास्तविक और स्थाई रूप से उन्नति कर सकते हैं, और जब तक इस प्रकार उन्नति नहीं होती तब तक देश का कल्याण कैसे हो सकता है ? सरकारी कर्मचारी अपने अधिकारों को अनुचित रूप से बे मुरव्वती से वर्तने से बाज नहीं आते, यद्यपि उनको ऐसा न करने के लिये सरकार बार बार दिशादर्शन कराती रहती है। पर जब व्यापारी ही अपने अधिकारों की रक्षा करना नहीं जानते और कमजोर बने रहते हैं, तब उन्हें दूसरे लोग कैसे सहायता दे सकते हैं ? सरकार का यह मतलब हरगिज़ नहीं है कि उनके ऊपर किसी प्रकार की ज्यादती या अत्याचार हो, और इस अभिप्राय से वह अपने अधिकारियों को कभी कभी आदेश पत्र भेज कर या उनकी मीटिंग करके उनको चेतावनी या शिक्षा देती रहती है कि वह तथा उनके सहकारी जनता के साथ अच्छा व्यवहार करें। इसी अभिप्राय से डाकखाने आदि में कभी कभी सद्-व्यवहार सप्ताह भी मनाया जाता है। क्या अच्छा होता यदि यह भावना जनता से संपर्क रखने वाले सरकारी कर्मचारियों के प्रति दिन के व्यवहार में आने लगती जिससे कि व्यापारियों का दिल बढ़ता, और वे सच्चाई और ईमानदारी के साथ अपने व्यापार की उन्नति कर सकते और प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करते कि देश में स्वराज्य होने से उन्हें कुछ विशेष सुविधायें मिलीं, और उनके साथ सहानुभूति तथा प्रेम का बर्ताव बरता जाने लगा। यह तभी हो सकता है जब कि जनता

से सम्पर्क रखनेवाले सभी छोटे और बड़े अधिकारी उनके प्रति प्रेम और सहानुभूति का व्यवहार करें, और जहाँ तक सम्भव हो या अपने अधिकार मे हो, उनकी सहायता करें और उनके साथ सदा शिष्टतापूर्ण व्यवहार करे। इस सम्बन्ध मे प्रकाशित हुआ एक शिक्षाप्रद आदेश केन्द्रीय सरकार ने अपने कर लगाने वाले अधिकारियों के प्रति जारी किया था। इसमे सरकार ने उनको आदेश दिया है कि सरकार जनता की भलाई के लिये कायम है। सब कर्मचारियों को उसकी भलाई में ही अपनी भलाई समझना चाहिये। इसलिये उन्हें उसके प्रति ऐसा कोई व्यवहार नहीं करना चाहिये जिससे कि लोग समझे कि उनके साथ अविश्वास, असहायता अथवा बे-मुरव्वती का व्यवहार हो रहा है। उनके प्रति उनको सदा शिष्टतापूर्वक व्यवहार करना चाहिये। और उन्हें अपने व्यवहार के कारण किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होने देना चाहिये, इत्यादि।

यह आदेश दैनिक समाचार पत्रों में Cultivate right outlook—Directive to revenue officers के रूप मे मई १९५१ मे निकला था—(देखो "Leader" dated May 29, 1951.)

सरकार कितनी ही अच्छी हो वह आसानी से किसी बात को मंजूर नहीं करती। मामूली से मामूली बात की स्वीकृति उससे कराने में जमीन आसमान एक करने पड़ते हैं। यही हाल रेल तथा म्युनिसिपल विभाग का भी है। वह अपनी आमदनी बढ़ाने की ही चेष्टा करते रहते है और इसी उद्देश्य से नित्य

नई नई योजनायें नये कर अथवा महसूल बढ़ाने के सम्बन्ध में बनाकर कार्यान्वित करते रहते हैं। ऐसी अवस्था में व्यापारियों के अधिकारों तथा अर्थों की रक्षा का केवल उनका आपस का संगठन ही एक उपाय है जिसके द्वारा वह सरकार से अपनी कठिनाइयाँ दूर करा सकते हैं, या स्थानीय कर्मचारियों के अनुचित व्यवहार से बच सकते हैं।

(२) सरकारी कर्मचारियों द्वारा सहानुभूति तथा उदारता का व्यवहार—

देश की आर्थिक उन्नति उसके व्यापार तथा उद्योग की उन्नति पर ही निर्भर है। यह उन्नति तभी अच्छी प्रकार से हो सकती है जब कि व्यापारियों तथा उद्योग में लगे लोगों को अपने काम बढ़ाने में पूरी स्वतन्त्रता हो और सरकार की ओर से भी उचित सुविधायें तथा आवश्यक सहायता मिलती जावे। बिना इन बातों के कोई व्यापारी अपना व्यापार सुगमता से नहीं बढ़ा सकता, न ही उद्योग या उत्पादन में लगा कोई आदमी अपना उद्योग या उत्पादन सुविधा पूर्वक बढ़ा सकता है। यदि ऐसी अवस्था पैदा नहीं की जाती तो उनका साहस तथा व्यापार में लगा धन नष्ट होते हैं, और परिणाम स्वरूप देश में बेरोजगारी बढ़ती है, पैदावार घटती है, और देश की आर्थिक दशा बिगड़ती है, जिसके फलस्वरूप गरीबी, चोरी, डाका, लूट मार आदि बुराइयाँ पैदा हो कर प्रजा का क्लेश बढ़ता है। इसलिये सरकार तथा उसके कर्मचारियों को प्रजा के साथ सदा सहायता, सहानुभूति और उदारता का व्यवहार बर्तना चाहिये। जब तक वह

ऐसा नहीं करेंगे तब तक देश में वास्तविक उन्नति होना बहुत कठिन है। उन्हें चाहिये कि अपने देश की भलाई, जिस पर कि स्वयं उनकी तथा उनकी सन्तान को उन्नति और प्रसन्नता निर्भर है, को ओर सदा ध्यान रखते हुये ही अपने कर्त्तव्य का पालन किया करें।

(३) व्यापारिक संस्थाओं की आवश्यकता और उनका संचालन—

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं व्यापारियों को अपने अधिकारों तथा अर्थों की रक्षा स्वयं ही करनी चाहिये। उन्हें चाहिये कि वे अपने व्यापार सम्बन्धी अलग अलग संघ अथवा मण्डल कायम करके उनके द्वारा अपने कष्टों को घोषित करके उनके निवारण का यत्न करते रहें और ऐसी संस्थाओं के सदस्य तथा पदाधिकारी अथवा कार्यकर्ता बनकर उसमें भाग लेना अपना एक जरूरी कर्तव्य और व्यापारी जीवन का एक मुख्य कार्य समझें। जो लोग जिस योग्य हों उन्हें उसी के अनुसार स्वार्थ तथा अभिमान रहित होकर उसमें अपना सहयोग, समय तथा धन आदि लगाना चाहिये जिससे कि उनकी व्यापार सम्बन्धी कठिनाइयाँ दूर होकर उनका तथा देश का कल्याण हो। यदि स्वयं इस प्रकार का कुछ काम करने का अवसर न मिले तो अपना चन्दा उसके काम चलाने के लिये श्रद्धा तथा प्रेम पूर्वक देते रहना चाहिये। और उसमें काम करने वालों के प्रति हर प्रकार का सहयोग तथा उत्साह का व्यवहार बर्तते रहना चाहिये।

ऐसी संस्थाओं को अपने उद्देश्यों तथा निर्णयों के प्रचार का उत्तम प्रबन्ध रखना चाहिये, और समय समय पर अपनी कार्यवाहियों अथवा प्रचार के योग्य बातों के बुलेटिन आदि निकालते रहना चाहिये, जो कि सदस्यों के पास बिना मूल्य भेजे जाने चाहिये, ताकि उन्हें उनका हाल मालूम होता रहे और संस्था की ओर उनकी रुचि और श्रद्धा बढ़ती जावे। इसी से उनके सहयोग तथा सहायता की भावना की जागृति भी होगी। ऐसी संस्थाओं को अपने वार्षिक सम्मेलन भी नियम पूर्वक नियुक्त समय पर करते रहना चाहिये, और ऐसे अवसर पर स्थानीय सरकारी अथवा गैर-सरकारी अधिकारियों को भी, जिनका कि व्यापार से सम्बन्ध है, निर्यत्रित करना चाहिये ताकि उनसे सहयोगता का व्यवहार बढ़कर अपनी व्यापारिक कठिनाईयों का उन्हें परिचय कराया जा सके।

यदि इस प्रकार की संस्थायें प्रत्येक व्यापार की अलग अलग हों तो उनको चाहिये कि कभी कभी अपना सम्मेलन सम्मिलित रूप से भी करती रहें ताकि ऐसी कठिनाइयाँ जो सब व्यापारियों को एकसी होती हों उनके ऊपर सम्मिलित रूप से विचार हो सके, और इस प्रकार उनमें आपस के सहयोग और सहानुभूति की भावनायें भी बढ़ती या पैदा होती रहें। लेकिन यदि कुल नगर का एक ही व्यापारिक संघ स्थापित हो तो उसमें यथोचित विभाग जैसे रेल, म्युनिसिपैल्टी, डाक व तारघर, इनकम-टैक्स, सेल्स-टैक्स आदि के कायम करके हर एक विभाग का एक उप-सभापति और एक उप-मंत्री नियुक्त

करके उसकी देखरेख तथा प्रचार का प्रबन्ध उसके सुपुर्द करना चाहिये। और आवश्यकतानुसार उस विषय के एक विशेषज्ञ को भी नियुक्ति करके व्यापारियों की आये दिन की समस्यायों का निवारण करना चाहिये।

ऐसी संस्थाओं का यह भी यत्न होना चाहिये कि व्यापार सम्बन्धी जो भी नियम अथवा योजनायें सरकार बनावे, अथवा जारी करना चाहे, उनके बारे में वह पहले उनसे राय ले ले। यदि वह उसे निष्पक्ष और देश के हित की राय दे सकेंगी तो प्रसन्नतापूर्वक वह उसका स्वागत करेगी, क्योंकि कठिनाई प्रायः तब ही उत्पन्न होती है जबकि सरकार इस प्रकार के नियम बिना किसी अनुभवी और निष्पक्ष व्यापारिक समिति की राय लिये बिना कर उन्हें प्रयोग में लाने लगती है, और उसके पदाधिकारी विवश होकर उनका पालन करने के लिये बाध्य होते हैं।

इस सम्बन्ध में हम प्रयाग के "व्यापार मण्डल" का उदाहरणीय उल्लेख कर देना व्यापारियों के लिये शिक्षाप्रद समझते हैं। इसके द्वारा वहाँ के व्यापारियों के हित के जो भी प्रशंसनीय कार्य हुये हैं, जैसे रेल द्वारा आये माल को बिना पहले उस पर चुंगी दिये छुटाने का अधिकार प्राप्त करना, रेल विभाग द्वारा निकली हुई व्यापार सम्बन्धी घोषणायें तथा सूचनायें मंगवाना, सेल-टैक्स व माल गोदाम आदि में व्यापारियों के बैठने अथवा पानी पिलाने का प्रबन्ध कराना, चुंगी को सीमांत-कर से परिवर्तित कराने की लगातार चेष्टा, प्रान्त की सभी व्यापारिक संस्थाओं का सम्मिलित सम्मेलन करना। इसी

प्रकार आगरे की व्यापारी संस्था का नियन्त्रण सम्बन्धी घोर विरोध और मेरठ की संस्था का चुंगी-कर की बजाय सीमांत-कर लगाये जाने का अनुरोध सब ही सराहनीय कार्य हैं, और देश के व्यापार सम्बन्धी कष्टों के निवारण करने के लिये अत्यन्त जरूरी हैं। जो बात एक व्यापार मण्डल कर सकता है वही अन्य नगरों के व्यापारिक संघ अथवा मण्डल कायम करके भी की जा सकती है और ऐसा होना अत्यन्त आवश्यक है।

अब हम नीचे कुछ ऐसी बातों का उल्लेख करते हैं जिनके बारे में ऐसी संस्थाओं को जानकारी होना जरूरी है। यह इस प्रकार हैं :—

(अ) संस्था के उद्देश्यों और नियमों का एक उचित विधान होना चाहिये जिसके अनुसार उसका हर एक कार्य होते रहना चाहिये और उसकी Societies Act में सरकार के यहाँ रजिस्ट्री हो जाना चाहिये।

(आ) इस प्रकार की संस्थाओं को केवल व्यापार अथवा उद्योग सम्बन्धी अपने निश्चित किये हुये उद्देश्यों के अनुकूल ही कार्यवाही करनी चाहिये। उनके बाहर किसी राजनीतिक अथवा अन्य विषयों में नहीं पड़ना चाहिये।

(इ) इसकी कानूनी कार्यवाही और सलाह के लिये एक योग्य वकील नियुक्त होना चाहिये जिसको कि उसकी कानूनी सेवाओं का उचित मुआवजा मिलता रहना चाहिये, अथवा, उसे इस कार्य के लिये कुछ मासिक रकम निर्धारित करके देते रहना चाहिये।

(ई) इसमें कुछ वैतनिक कर्मचारी जरूर होने चाहियें जिनके द्वारा ऐसा कार्य जो एक वैतनिक आदमी से लिया जा सकता है कराया जा सके।

(उ) इसके कार्यकर्ताओं को यदि संस्था के कार्य के लिये बाहर जाना पड़े अथवा कहीं बाहर से ऐसा करने के लिये आना पड़े तो उनको सफ़र खर्च जरूर दिया जाना चाहिये। यह सफ़र खर्च उसके हर एक सदस्य अथवा कार्यकर्ता के लिये एक समान रेट के अनुसार होना चाहिये ताकि संस्था की ओर से एक दूसरे सदस्य या कार्यकर्ता में कोई भेद भाव की भावना न उत्पन्न हो। ऐसा ही व्यवहार उन्हें आपस में भी बर्तते रहना चाहिये।

(ऊ) इसके कार्यकर्ता निर्धारित समय पर बदलते रहना चाहियें, लेकिन एक अच्छे कार्यकर्ता को दुबारा चुनने से नहीं चूकना चाहिये। पर इस मामले में किसी प्रकार की मुँह देखी कार्यवाही न करके यदि उचित और योग्य कार्यकर्ता मिलता हो तो उसे भी काम करने का अवसर देना चाहिये ताकि संस्था में नया उत्साह पैदा होता रहे। मुख्य मुख्य कर्मचारी जैसे मंत्री आदि का स्थान उसे ही देना चाहिये जो अन्य स्थान में अपनी योग्यता विशेष रूप से प्रदर्शित कर चुका हो।

(ए) सब स्थानीय संस्थाओं को संगठित होकर एक प्रान्तीय अथवा अवस्थानुसार अखिल भारतीय संस्था भी कायम करना चाहिये जिसके द्वारा अन्य स्थानों के कार्यकर्ता तथा व्यापारियों का समागम होकर बड़े पैमाने पर कार्य किया जा सके और

केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय सरकार के समक्ष उसके देश व्यापी अथवा प्रान्तीय अधिकारों के अनुसार अपनी कठिनाइयों का निवारण कराया जा सके। इस प्रकार की संस्थाएँ प्रत्येक व्यापार तथा उद्योग की अलग अलग ही होने में सुविधा होती है।

(ऐ) इस प्रकार की संस्थाओं के कार्यकर्ताओं की आलोचना करते समय सदस्यों को यह ध्यान रखना चाहिये कि जो कार्य सराहना करके हो सकता है वह दिल दुखाने वाली अथवा कृतज्ञता शून्य बातें या आलोचना करके कदापि नहीं हो सकता। ऐसी बातें या आलोचना करने वाले सदस्य संस्था को बहुत हानि पहुँचाते हैं। उन्हें विचारना चाहिये कि स्वार्थ त्याग करके कार्य करने वालों की सख्या बहुत कम होती है और जो अपना समय अथवा धन व ध्यान संस्था की सेवा करने मे निःस्वार्थ भाव से लगा रहे हैं उनकी यदि सराहना न की जावे या उनके साथ आवश्यकतानुसार सहयोग न दिया जा सके तो कम से कम कड़ी या अप्रिय आलोचना करके उनका दिल कदापि नहीं दुखाना चाहिये। आवश्यकतानुसार उनकी कठिनाई में उनका सहयोग देना प्रत्येक सदस्य को अपना कर्तव्य समझना चाहिये।

(ओ) किसी सदस्य या पदाधिकारी को कोई कार्य ऐसा नहीं करना चाहिये जिससे कि संस्था को किसी प्रकार की हानि होने की सम्भावना हो। संस्था की भलाई तथा उन्नति में ही अपनी भलाई तथा उन्नति समझनी चाहिये। उससे अलग हो कर कार्य करने की तो सोचना ही नहीं चाहिये। न ही कोई कार्य ऐसा करना चाहिये जिससे संस्था के सदस्यों मे आपस में

मतभेद हो जावे अथवा एक दूसरी संस्थाओं में किसी प्रकार द्वेष पैदा हो जावे । यदि कोई ऐसी व्याधा पैदा होने की सम्भावना हो तो तत्काल ही उसे आपस में मिल जुल कर हंसी खुशी निपटा देना चाहिये । ऐसे अवसरों पर पत्र व्यवहार करने से मामला सुलझने में देर हो कर कभी कभी और उलझ जाता है । इसीलिये यह अत्यन्त जरूरी है कि वर्ष में कम से कम एक बार व्यापार सम्बन्धी कुल स्थानीय संस्थाओं के सदस्यों तथा पदाधिकारियों को आपस में मिलजुल कर आमोद प्रमोद तथा अपनी कठिनाइयों के ऊपर विचार करने में समय बिताना चाहिये ।

(औ) ऐसी संस्थाओं का हिसाब विधिपूर्वक रखना चाहिये । इसमें किसी प्रकार की असावधानी नहीं होनी चाहिये और न इसके रुपये आदि को किसी एक सदस्य के आधीन अधिक समय के लिये छोड़ना चाहिये । प्राप्त हुआ धन पहले इसके कोष में जमा हो जाना चाहिये । बाद में उसका नियमानुसार खर्च करने के अधिकारी द्वारा ही वह खर्च होना चाहिये ।

इसके हिसाब की जांच बराबर होती रहना चाहिये और वर्ष के अन्त में एक आडिटर (Auditor) द्वारा, जिसका चुनाव अन्य कार्यकर्त्ताओं की भांति साधारण सभा द्वारा हुआ हो, उसकी जांच हो कर उसे नियमानुकूल पास किया जाना चाहिये ।

अध्याय १९

दान व धर्म

जिस प्रकार नियमित व्रत से शरीर की शुद्धि, भगवद् भजन से मन की शुद्धि, सन्त समागम से बुद्धि की शुद्धि होती है, उसी प्रकार नियमित दान से धन की शुद्धि होती है, शत्रुता दूर होती है, और पुण्य बढ़ते हैं। (परमार्थ वर्ष २ अंक ६ पृष्ठ ११)

उपयोगिता और विधि—

दुःख सुख से भरे संसार की यात्रा में मनुष्य का एक मात्र अवलंबन सिवाय परमात्मा के और दूसरा कोई नहीं है। उसी के सहारे चलकर अपना कर्तव्य पालन करता हुआ वह इस यात्रा को भली भाँति पूर्ण कर सकता है। वैसे तो प्रत्येक प्राणी को उसकी लीला का अनुभव होता रहता है, पर व्यापार में लगे मनुष्य को यह विशेष रूप से होता रहता है। इसी कारण इस व्यवसाय के लोग अपेक्षाकृत अधिक धार्मिक और श्रद्धावान होते हैं जिससे कि समाज व देश दोनों का लाभ होता है। साथ साथ उनकी अन्तरात्मा की भी शुद्धि होती रहती है। इसी मनोवृत्ति का फल है कि हम तरह तरह के धर्म-कार्य जैसे धर्मशालायें, मन्दिर, घाट, अस्पताल, शिक्षालय, दरिद्रालय, अनाथालय, गौशाला, पौसला आदि सत्कार्य व्यापारी वर्ग द्वारा ही स्थापित किये हुये देश के कोने कोने में पाते हैं। भुखमरी या बाढ़ आदि व्याधाओं के अवसरों पर भी हम जितनी सहायता इस वर्ग के लोगों को करते देखते हैं उतनी दूसरे वर्ग के लोग नहीं कर पाते। इस प्रकार से व्यय किया हुआ धन बड़ा कल्याणकारी होता है और

उससे समाज के उस अंग की सहायता होती है जो असहाय है या हो गया हो। साथ ही साथ इस प्रकार दान करने से सामाजिक सेवा का उत्तम ढंग भी प्रयोग में आकर देश के असमर्थ अंग को सहायता पहुँचती है जिससे वह भी अपना जीवन सुखमय बना सकता है।

धर्मार्थ अथवा सामाजिक सेवा सम्बन्धी संस्थाओं को दान देने के अतिरिक्त हमें चाहिये कि ऐसे दीन दुखी जो कहीं पड़े हुये अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उनको भी यथा-शक्ति सहायता करते रहें। इस सहायता के बहुत से रूप हैं। जिससे जिस प्रकार हो सके उसको उसी प्रकार उनकी सहायता करना चाहिये। व्यापारिक तथा गृहस्थ जीवन की कठिनाइयों को सरलता पूर्वक पार करना बहुत कुछ दीन दुखियों की सहायता करने पर भी निर्भर है। ऐसा करते रहने से बहुत सी आपत्तियाँ तो मानो आपसे आप बचकर निकल जाती हैं और दानी को शान्ति व सुख मिलता रहता है। इसलिये हर एक मनुष्य, विशेषतः हर एक व्यापारी को अपनी सामर्थ्य अनुसार दान व धर्म करते रहना अपना परम कर्तव्य समझना चाहिये। यदि उसके द्वारा किसी असहाय को सहायता या भूखे को भोजन मिल जावे तो उसे अपने ऊपर परमात्मा की यह कृपा समझनी चाहिये, क्योंकि उसी की कृपा से उसको ऐसा अवसर मिला करता है और वह ऐसा करने के योग्य होता है। इस सम्बन्ध में हमें एक दानी की याद आती है, वह काशी में श्री विश्वनाथ जी के मन्दिर के बाहर दीनों को दान देता जाता था और साथ साथ नम्रता पूर्वक उन्हें हाथ जोड़ कर प्रणाम भी करता जाता था। यह नम्रता और प्रेम उसके दान की शोभा को बढ़ा रहे थे, जो कि हर एक दानी को यदि प्रत्यक्ष रूप से नहीं तो दान देते समय मन में जरूर बर्त्तते रहना चाहिये।

हमारी दान देने की प्रणाली सदा ठीक होनी चाहिये, क्योंकि

कुपात्र को दिया हुआ दान समाज का कल्याण करने की बजाय उसको भ्रष्ट करने वाला सिद्ध होता है। तरह तरह की वेश भूषा वाले ठग और बगला भक्तों से हमें सदा सचेत रहना चाहिये। ये लोग कभी कभी साधू या गरीब ब्राह्मण के वेश में ब बड़े दुराचारी, चोर और छली और जान तक ले लेने वाले सिद्ध होते हैं। ऐसे लोग भिक्षा के बहाने मौका पा कर जो न कर डालें थोड़ा है। इसलिये ऐसे लोगों को मुंह न लगा कर दूर ही रखना चाहिये। दान के पात्र है वे निर्धन अपाहिज, बीमार व जिनका कोई सहारा नहीं है और जो परमात्मा अथवा समाज की सहायना पर निर्भर होकर अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ऐसे गरीब विद्यार्थी जो विद्याध्ययन में लगे हुये हैं पर जो निःसहाय हैं उन्हें भी सामर्थ्य अनुसार सहायता करना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि विद्या पा कर वे अपना सारा जीवन सुखमय बना सकते हैं, और इस प्रकार समाज के शक्तिशाली अंग बन सकते हैं। इसी प्रकार ऐसे लोग जो देश और समाज की सेवा या उन्नति में लगे हुये हैं या समाज के माननीय अंग होने के कारण असहाय होते हुये भी भिक्षा नहीं माँग सकते उन्हें उनकी मान मर्य्यादा का ध्यान रखते हुये आदर सहित जहाँ तक बन पड़े गुप्त रूप से सहायता करनी चाहिये। इस प्रकार से व्यय किया हुआ धन बड़ा कल्याणकारी होता है, और यह उसको व्यय करने की सबसे ऊँचे दर्जे की रीति भी है। इस सम्बन्ध में नीचे लिखी कबीर की वाणी भी ध्यान में रखने योग्य है :—

जो जल बाढ़े नाव में, घर में बाढ़े दाम ।
दोऊ हाथ उलीचिये, यहि सज्जन को काम ॥

इति शुभं